© सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

भारतीय कॉपीराइट एक्ट के अन्तर्गत इस पुस्तक में समाहित समस्त सामग्री (टाइटिल-डिजाइन, अन्दर का मैटर आदि) के सर्वाधिकार 'पवन पॉकेट बुक्स' के पास सुरक्षित हैं, इसलिए कोई व्यक्ति/संस्था/समूह इस पुस्तक की पाठ्य सामग्री को आंशिक या पूर्ण रूप से तोड़-मरोड़कर या किसी अन्य भाषा में प्रकाशित नहीं कर सकता। उल्लंघन करने वाले कानूनी तौर पर हर्जे-खर्चे व हानि के जिम्मेदार स्वयं होंगे।

प्रकाशक:

पवन पॉकेट बुक्स

4537, दाईवाड़ा, नई सड़क,

दिल्ली-110006

दूरभाष : 23918311, 55393228

ईमेल : gold_pub@lycos.com

मूल्य:

पचास रुपये (50/-)

मुद्रक :

शुभम ऑफसेट

मानसरोवर पार्क, शाहदरा

दिल्ली-110032

आओ, ज्योतिष सीखें!

ज्योतिष सीखने के इच्छुकों का उचित मार्ग निर्देशन करती व सरल भाषा में लिखित अनमोल पुस्तक

लेखक

विवेक श्री कौशिक 'विश्वमित्र'

पवन पॉकेट बुक्स

4537, दाईवाड़ा, नई सड़क, दिल्ली-110006

अनुक्रम

1. ज्योतिष और ज्योतिषी (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)	5
2. क्या है जन्मपत्री?	7
3. न्यायकर्त्ता नवग्रहों का परिचय	11
4. यूरेनस, नेप्च्यून व प्लूटो (वरुण, प्रजापति एवं यम)	27
5. जन्मराशि व नक्षत्रों के नामाक्षर	32
6. ग्रह एवं राशि : कारकत्व तथा स्वामित्व	35
7. राशियां : गुण, स्वभाव, रोगादि विस्तार	42
8. ग्रह : गुण, स्वभाव, रोगादि विस्तार	49
9. ग्रहों के बल, अवस्थाएं, संज्ञा व दृष्टियां	57
10. ग्रहों की दशाएं, क्रम व महत्त्व	65
11. जन्मपत्री में भाव परिचय	69
12. किस भाव से क्या-क्या देखें?	77
13. कालपुरुष की कुंडली	80
14. फलादेश के सूत्र, नियम व सिद्धांत	87
15. सदा स्मरणीय प्रमुख फलित सूत्र	94
16. सूर्य का द्वादश भावफल	101
17. चन्द्रमा का द्वादश भावफल	107
18. मंगल का द्वादश भावफल	114
19. बुध का द्वादश भावफल	122
20. गुरु का द्वादश भावफल	129
21. शुक्र का द्वादश भावफल	138
22. शनि का द्वादश भावफल	149
23. राहु का द्वादश भावफल	159
24. केतु का द्वादश भावफल	169

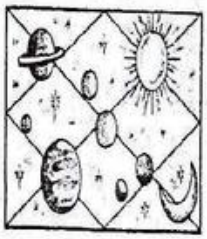

ज्योतिष और ज्योतिषी

(एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

सर्वमान्य परिभाषा के अनुसार कहा जा सकता है कि ज्योतिष शास्त्र ग्रहों, नक्षत्रों, राशियों आदि के मानव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन शास्त्र है। जैसा कि कहा भी गया है **ज्योतिषां सूर्यादि ग्रहणां बोधक शास्त्रम्**। दूसरे शब्दों में हम ज्योतिष को **सामाजिक ब्रह्मांडीय शास्त्र** भी कह सकते हैं। यह अनुमानत: 3000 वर्षों से भी अधिक पुराना विज्ञान है।

ज्योतिष क्या है?

'ज्योतिष' शब्द संस्कृत का एक मूल शब्द है। कुछ विद्वान इसे 'ज्योति-ईश' अर्थात् 'ईश्वर का प्रकाश' ऐसा विश्लेषित करके समझाने का प्रयास भी करते हैं। परन्तु यह मात्र शब्द विलास ही जान पड़ता है। तार्किकता के आधार पर यह अर्थ सत्य प्रमाणित नहीं होता। क्योंकि ज्योतिष शब्द की संरचना 'ज्योतिस्-अच्' के अवयवों के अनुसार (ज्योतिस्—यानी प्रकाश तथा अच्—यानी प्रार्थना करना) 'ज्योतिष' का अर्थ 'प्रकाश की प्रार्थना' करना सिद्ध होता है। (इसी 'अच्' से 'अर्चना' का भी विन्यास होता है) यह व्याकरण की दृष्टि से भी अधिक उचित है और तर्कशास्त्र की दृष्टि से भी युक्तिसंगत है।

प्राय: ज्योतिष को भविष्य का ज्ञान करानेवाला शास्त्र ही माना जाता है। परन्तु यह अर्ध सत्य है। वस्तुत: ज्योतिष समय और मानव के आर-पार देखने की कला है। इससे भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों को जाना जा सकता है और मनुष्य के व्यक्तित्व, स्वभाव, प्रकृति, गुण-दोष, रोग-विकार आदि को भी ठीक-ठीक जाना जा सकता है।

क्या ज्योतिष अंधविश्वास है?

विज्ञानवादियों एवं आधुनिक लोगों की यह आम धारणा है कि ज्योतिष अंधविश्वास और मात्र पंडितों की कमाई का माध्यम है। लेकिन यह भी सत्य है कि ऐसी धारणा उन्हीं सज्जनों की है, जिन्होंने ज्योतिष को पढ़ा या जाना नहीं है, मात्र सुना ही है। किसी प्रणाली को जाने व समझे बिना ही उसका विरोध मात्र इसलिए करना कि वह प्राचीन है अथवा आध्यात्मिकता से सम्बन्धित है, बुद्धिमत्ता

नहीं है। दो पदार्थों/सत्ताओं/विषयों को तत्त्वत: जानकर उनके सम्बन्ध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके ही हम उनको तुलना कर सकते हैं। तभी हम किसी को श्रेष्ठ और किसी को औसत या निम्न कहने के अधिकारी हैं। मात्र इसलिए नहीं कि वह हमें पसंद नहीं है या हमारी रुचि के अनुकूल नहीं है। सत्य हमेशा हमारी पसंद का ही हो, यह जरूरी नहीं है।

क्या ज्योतिष स्वतंत्र विज्ञान है?

ज्योतिष एक विद्या है, एक कला है, एक शास्त्र है, एक विज्ञान भी है। परन्तु इसे स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इसमें अनेक समानान्तर विषयों का समायोजन है। बहुत से विषयों को साफ-साफ ज्योतिष से अलग नहीं किया जा सकता। जैसे हस्तरेखा विज्ञान, चरणरेखा विज्ञान, कपालसंहिता, मुखाकृति विज्ञान, अंकविज्ञान, शरीर लक्षण विज्ञान, चेष्टा विज्ञान, तिल-मस्सों आदि का प्रभाव, ग्रीवा संहिता, रावण संहिता, लाल किताब (अरुण संहिता), हस्तलिपि एवं हस्ताक्षर विज्ञान, नक्षत्र विज्ञान, रत्न ज्योतिष/रमल, खगोलशास्त्र, विज्ञान, समाजशास्त्र, आचार संहिता, मन्त्रविज्ञान, दर्शन शास्त्र, कर्मकांड, अध्यात्म, यन्त्र-तन्त्र एवं टोटके, शकुन शास्त्र, स्वप्न विज्ञान, मनोविज्ञान, गणित आदि बहुत से विषय ज्योतिष के साथ इस तरह गुंथे हुए हैं और आपस में इतने समानान्तर हैं कि उनको पृथक करके ज्योतिष को एक स्वतन्त्र विधा या विज्ञान कह सकना मेरे विचार में सम्भव ही नहीं है। अलबत्ता ज्योतिष एक स्वतंत्र विज्ञान भी है, यह सत्य है।

क्या ज्योतिषी ही सर्वज्ञ है?

ज्योतिषी सर्वज्ञ नहीं हो सकता। क्योंकि ज्योतिषी भगवान नहीं है। ज्योतिषी सिद्ध योगी भी नहीं है। ज्योतिषी को कोई वाक्सिद्धि का वरदान भी प्राप्त नहीं होता। ज्योतिष की सीमाएं हैं तो ज्योतिषी की और भी अधिक सीमाएं हैं। अत: ज्योतिषी को सर्वज्ञ मानना भारी भूल होगी। जैसा कि कहा गया है **त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्य:** (स्त्री का चरित्र और पुरुष का भाग्य देवता भी नहीं जानते तो मनुष्य कैसे जान सकता है?)

ज्योतिष/ज्योतिषी, कार्यकारण सम्बन्ध, कर्मफल चक्र, पुनर्जन्म एवं ग्रहों की गति के गणित तथा तत्त्व एवं गुणों के समायोजन का अध्ययन कर काल द्वारा उनका सम्बन्ध स्थापित कर—भाग्य, कर्म, स्वभाव, भूत, वर्तमान, भविष्य आदि का अनुमान तो लगा सकता है, वह सटीक भी हो सकता है, परन्तु उन्हें बदल नहीं सकता और नियति को भी नहीं जान सकता। यह निश्चित है।

□□

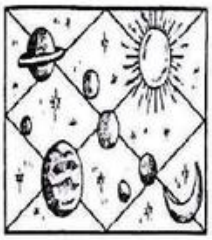

क्या है जन्मपत्री?

किसी भी व्यक्ति की जन्मपत्री/जन्मकुण्डली वास्तव में उस समय के आकाश का नक्शा है, जिस समय उस व्यक्ति का जन्म हुआ था। ज्योतिषीय भाषा में इस नक्शे को **जन्मकुण्डली** या **लग्नकुण्डली** कहते हैं (**जन्मपत्री**—सभी कुण्डलियों तथा ग्रहस्पष्ट, नक्षत्रादि सम्बन्धित आंकड़ों का संकलन अथवा उस नक्शे से सम्बन्धित पूरी फाइल है)। जिस व्यक्ति की कुण्डली का अध्ययन या फलादेश किया जा रहा हो—वह स्त्री/पुरुष जो भी हो—ज्योतिषीय भाषा में **जातक** कहलाता है।

अत: और स्पष्ट रूप में कहा जाए तो जन्मकुंडली जातक के जन्म के समय आकाश में कौन-सा ग्रह कहां और किस स्थिति में था—इस तथ्य को दर्शाने वाला नक्शा है। इस तथ्य से सम्बन्धित अन्य सहयोगी आंकड़े तथा विश्लेषण एवं व्याख्या जब इस नक्शे के साथ संकलित हो तो उसे जन्मकुंडली/टेवा न कहकर 'जन्मपत्री' कहेंगे।

आकाश के नक्शे की क्या जरूरत है? इस प्रश्न का सीधा-सा उत्तर यह है कि ज्योतिषशास्त्र क्योंकि ग्रह, नक्षत्र, राशियों आदि के मानव पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन शास्त्र है—**ज्योतिषां सूर्यादि ग्रहणां बोधक शास्त्रम्**—अत: आकाश के तत्कालिन नक्शे व आंकड़ों के आधार पर ही अध्ययन किया जाएगा।

ग्रहों का ही अध्ययन क्यों?

यूं तो जिन परिस्थितियों/परिवेश या स्थान पर मनुष्य रहता है वहां के भौगोलिक, सामाजिक, प्राकृतिक (वातावरण आदि), राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि बहुत से प्रभाव व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। उसके रूप-रंग, गुण, स्वभाव, आदतों एवं विचार आदि को बनाने-बिगाड़ने में पूरी भूमिका निभाते हैं। यहां तक कि परिवार, परम्परा, संस्कार, शिक्षा, संगति आदि सभी छोटे-बड़े घटक इस सिलसिले में महत्त्वपूर्ण हैं, फिर ग्रहों के प्रभाव का अध्ययन ही क्यों इतना ज़रूरी है कि इसके लिए एक पृथक शास्त्र की आवश्यकता पड़ गई? मनुष्य से लाखों-करोड़ों मील दूर के ग्रहों के प्रभाव में क्या इतनी तीव्रता और महत्व निहित है कि समीपस्थ अन्य घटकों की उपेक्षा कर ग्रहों के प्रभाव का ही अध्ययन आवश्यक व सम्पूर्ण प्रतीत हुआ? और यदि हुआ तो क्यों? तथा अन्य तारों आदि को इस अध्ययन में क्यों नहीं शामिल कर लिया गया?

इन प्रश्नों का उत्तर स्पष्टत: जान लेने पर न केवल आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त होगा और ज्योतिष-अध्ययन के सिद्धांतों को वस्तुत: समझ सकने योग्य आधारभूमि निर्मित हो सकेगी बल्कि ज्योतिष के महत्व, गहनता, प्रभाव क्षेत्र एवं प्रणाली को भी तत्वत: समझा जा सकेगा और इस शास्त्र के प्रति पाठकों की आस्था भी निर्मित हो सकेगी। अत: पहले इन्हीं प्रश्नों को लेते हैं।

वैज्ञानिक कारण—भौगोलिक, प्राकृतिक (पर्यावरण, जलवायु आदि), सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, संस्कारिक (पारिवारिक एवं पारम्परिक आदि) तथा परिस्थिति एवं संगतिजन्य बहुत से कारण मनुष्य एवं जीवन को निश्चित रूप से प्रभावित करते हैं, यह सत्य है। परन्तु यह भी सत्य है कि ये सभी घटक स्थायी नहीं होते। वर्षों में, दशकों में, शताब्दियों में, सहस्राब्दियों में इन सभी घटकों में बहुत से क्रांतिकारी परिवर्तन हो जाते हैं। प्रतिक्षण परिवर्तन होता है और शताब्दियों में वह बिल्कुल ही भिन्न प्रारूप सामने ले आता है। अत: ये घटक इतने स्थायी नहीं होते कि इन पर ऐसे सिद्धांत खड़े किए जा सकें जो अन्त तक ज्यों के त्यों रह सकें। इनके आधार पर नियम तो बनाए जा सकते हैं, किन्तु सिद्धांत नहीं। क्योंकि सिद्धांत का अर्थ ही यह है कि अन्त सिद्ध हो जिसका या अन्त तक सिद्ध हो जो (सिद्ध+अंत) अत: सिद्धांत अटल होता है।

नियम परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। उदाहरण के तौर पर हमें मौसम के प्रभाव से बचने के लिए गरम वस्त्र पहनने चाहिए। यह एक नियम है। क्योंकि ठंडे प्रदेशों या ठंडे मौसम पर ही यह निर्भर है। गरम प्रदेशों या गरम मौसम में इस नियम का पालन नहीं हो सकता। किन्तु सूर्य प्रकाश एवं ऊष्मा देता है—यह एक सिद्धांत है। क्योंकि यह परिस्थितियां बदल जाने पर भी ज्यों का त्यों रहता है। नियम और सिद्धांत का यह मूल अन्तर है।

अत: परिवर्तनशील घटकों के प्रभावों के अध्ययन से सिद्धांत स्थापित नहीं किए जा सकते। क्योंकि जब तक शोध पूर्ण होकर सिद्धांत स्थापित होगा, तब तक या उसके कुछ समय पश्चात् ही वो घटक परिवर्तित हो चुका होगा या हो जाएगा, जिसके आधार पर निष्कर्ष निकाला गया। अत: ऐसे अध्ययनों के परिणाम कालजयी नहीं होंगे, निष्कर्ष अटल नहीं होंगे। उनके आधार पर एक सम्पूर्ण, सटीक तथा कालजयी शास्त्र के आधारभूत सिद्धांतों को नहीं बनाया जा सकता, अलबत्ता सहायक नियम बनाए जा सकते हैं। इसलिए ज्योतिष ने इन घटकों को अपने अध्ययन एवं विश्लेषण का आधार नहीं बनाया, बल्कि इनकी अपेक्षा अनंतकाल तक स्थिर रहने वाले ग्रहों को अपने अध्ययन का आधार बनाया।

'ग्रहों की स्थिरता' को सुनकर पाठक किसी संशय में न पड़ें। हम सभी जानते हैं कि समस्त ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं और स्वयं अपनी धुरी पर भी

(पृथ्वी के समान ही) घूमते हैं। (पौराणिक दृष्टि से तो सूर्य भी स्थिर नहीं है, क्योंकि वह ध्रुव तारे की परिक्रमा करता है। 'ध्रुव' ही अटल है अन्य सभी तारे, ग्रह आदि घूमते ही रहते हैं)। परन्तु यहां स्थिरता से अभिप्राय है इनके रूटीन का यथावत रहना।

समस्त ग्रह अपनी एक निश्चित गति से अपनी-अपनी धुरी पर घूमते हैं। अत: उनके दिन-रात उसी अनुपात में निश्चित अवधि में निर्धारित रहते हैं। सभी अपने एक निश्चित पथ पर, निश्चित गति से सूर्य की परिक्रमा भी करते हैं। (इस परिक्रमा पथ में वे अपने निश्चित मार्ग से 9° इधर या 9° उधर हो जाते हैं। इससे अधिक नहीं।) अत: उनके वर्षों में दिन-रात की अवधि भी निश्चित रहती है। यह उनका यथावत रहने वाला रूटीन है। अत: उनके प्रभाव के अध्ययन को स्थिर माना जा सकता है।

अरबों-खरबों वर्षों में किसी ग्रह या तारे की घूर्णन गति/परिक्रमा पथ में अन्तर आता है (वैज्ञानिक सर्वेक्षणों के अनुसार)। परन्तु वह अन्तर अनन्त एवं सुविस्तीर्ण ब्रह्मांड की तुलना में इतना नगण्य होता है कि उसे नज़रअंदाज किया जा सकता है। अन्य तारों आदि को इसलिए इस अध्ययन में शामिल नहीं किया गया कि वे हमसे हज़ारों-लाखों प्रकाशवर्ष दूर हैं। अत: उनका नगण्य-सा प्रभाव भी मानव पर नहीं पड़ता। सूर्य किरणों का 'प्लाज़्मा क्षेत्र' पृथ्वी पर ब्रह्मांड से होने वाली किरणों की वर्षा को वापस लौटा देता है।

जबकि भूगोल, मौसम, जलवायु, प्रकृति आदि जो अन्य घटकों में सर्वाधिक टिकाऊ कहे जा सकते हैं, शताब्दियों या सहस्राब्दियों में ही क्रांतिकारी रूप से परिवर्तित हो चुकते हैं। अत: ग्रहों के प्रभाव एवं स्वभाव के विश्लेषण तथा अध्ययन को स्थिर कहा जा सकता है। यह तो ज्योतिष में ग्रहों को अध्ययन का आधार बनाने का वैज्ञानिक अथवा स्थूल कारण हुआ। परन्तु इनसे कहीं शक्तिशाली आध्यात्मिक या सूक्ष्म कारण भी है। जो कर्मफल बन्धन (भाग्य) अथवा ईश्वरीय न्याय पर आधारित है और ज्योतिष का प्राण तत्व है।

आध्यात्मिक कारण—कर्मफल का एक निश्चित सम्बन्ध/बन्धन है। कर्मों से फल और फलों से कर्म निश्चित रूप से जुड़े रहते हैं। इस 'खाते' को भुगताने के लिए जीव का जन्म होता है। कर्मानुसार फल ही ईश्वर का निष्पक्ष न्याय है। इस न्याय का उत्तरदायित्व या कार्यभार ईश्वर ने ग्रहों को सौंपा हुआ है। यह आध्यात्मिक व धार्मिक मत है।

जिस प्रकार मृत्युपरांत इस न्याय की व्यवस्था का कार्यभार सूर्यपुत्र यम (यमराज/धर्मराज) के सुपुर्द रहता है, उसी प्रकार जन्मोपरांत इस न्याय का कार्यभार सूर्यपुत्र शनि पर निर्भर रहता है (सूर्य साक्षी होते हैं)। अत: समस्त ग्रह (नवग्रह)

सिंह 20° है। इसके अधिदेवता शिव/रुद्र तथा प्रत्यधिदेवता अग्नि हैं। धातु स्वर्ण व ताम्र, रत्न माणिक्य, वस्त्र लाल व गुलाबी है। ऋतु ग्रीष्म, दिक्बल दशम भाव, काल बल दिवस (रविवार व मध्याह्न विशेष), वार रविवार, काल छः मास तथा भ्रमण गति एक राशि में एक मास है। यह पिता व आत्मा का स्थिर कारक है। यश, पद, राज्य, दाएं नेत्र, आत्मशक्ति, तेज का प्रतिनिधि है। मकर से मिथुन राशि तक यह चेष्टाबली होता है। चन्द्र, मंगल व गुरु इसके मित्र; शुक्र, शनि तथा राहू शत्रु और बुध सम है। उत्तरायण, रविवार व मध्याह्न में सूर्य विशेष बली होता है।

सूर्य का स्वभाव स्थिर तथा पूर्ण दृष्टि सातवीं है। तीन व दस एक पाद दृष्टि, पांच व नौ द्विपाद दृष्टि तथा चार व आठ इसकी त्रिपाद दृष्टियां हैं। जन्मपत्री में 1, 9, 10 इसके कारण भाव हैं।

जातक की आरोग्यता (विशेषकर हृदय रोग), राज्य, पद, जीवनीशक्ति, कर्म, अधिकार, महत्त्वाकांक्षा, सामर्थ्य, वैभव, यश, स्पष्टता, उग्रता, उत्तेजना, रुचि, सिर, उदर, अस्थि व शरीर रचना, नेत्र (दायां विशेष), साहस, धन, पिता, आत्मज्ञान, आत्मशुद्धता, आत्मबली आदि का विचार सूर्य की स्थिति से ही किया जाता है। यात्रा, प्रभाव तथा उपासना आदि के विचारों में भी सूर्य महत्त्वपूर्ण है। जातक यदि रात्रि में जन्मा हो तो सूर्य द्वारा कुछ ज्योतिर्विद चाचा का विचार भी करते हैं।

इस ग्रह का भाग्योदय वर्ष 22 है। यह उग्र तथा क्रूर होते हुए भी पापी नहीं है। यद्यपि कुछ ज्योतिर्विद इसे पापी ग्रह मानते हैं। किन्तु काल पुरुष की आत्मा, ग्रह सम्राट और सुदानी होने से ऐसा मानना अनुचित है।

सूर्य का राशि परिवर्तन **संक्रान्ति** कहलाता है। यह एक दिन में एक अंश चलता है, अतः 30 दिन में एक राशि पार करता है। अंग्रेजी महीनों की 13, 14, 15 तारीखों में इसका प्रायः राशि परिवर्तन होता है। 14 अप्रैल को यह मेष (पहली) राशि में आता है, तब **मेष संक्रांति** होती है। 14 जनवरी को यह मकर राशि में आता है, तब **मकर संक्रांति** होती है। इन दोनों संक्रांतियों का विशेष महत्त्व माना जाता है।

रोग ज्योतिष (मेडिकल एस्ट्रॉलॉजी) की दृष्टि से सूर्य हृदय, हड्डी, आग, पेट, आंख, सिर दर्द, डायरिया, तीव्र ज्वर, कब्ज, आत्मा तथा पिता का कारक है। सूर्य का वैदिक मंत्र—**ॐ ह्रीं घृणिः सूर्यादित्य ॐ** है। सूर्य का ज्योतिषीय तांत्रिक मंत्र—**ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः** है। पंद्रोहिणीयंत्र सूर्यपीड़ा हरणकर्त्ता यन्त्र है। सूर्य रत्न माणिक्य को स्वर्ण धातु में जड़वाकर अनामिका उंगली में धारण करते हैं। गेहूं, नमक आदि सूर्य के दान पदार्थ तथा बेल व बेंत की जड़, लाल चंदन, गुड़ सूर्य की औषधियां हैं। सूरजमुखी, आम, पपीता, खरबूजा, अमरूद, बेल, अनार, आलूबुखारा, दालचीनी, गेंदा, गूलर (लाल फूल) आदि सूर्य की वनस्पतियां, फल व पुष्प हैं।

चंद्र (MOON)

ज्योतिषीय नवग्रहों में चन्द्र सर्वाधिक चंचल/तीव्र गति (FAST MOOVING) वाला है। अतः इसे काल पुरुष का मन माना गया है (क्योंकि मन ही सर्वाधिक चंचल होता है)। यह सवा दो दिन में एक राशि को पार कर लेता है।

प्रजापति दक्ष की 27 पुत्रियों से चन्द्रमा के विवाह की सांकेतिक कथा चन्द्रमा को 27 नक्षत्रों का स्वामी घोषित करती है। इनमें रोहिणी चन्द्रमा को सर्वाधिक प्रिय है। रोहिणी के प्रति विशेषाकर्षण होने से अन्य पत्नियों के प्रति कर्तव्य पूरा न कर पाने के कारण चन्द्रमा को दक्ष ने क्षयरोगी हो जाने का शाप दिया था। चन्द्रमा ने शिव के प्रति तप करके स्वस्थ हो जाने का वरदान प्राप्त किया। अतः चन्द्रमा 15 दिन शापवश घटता और 15 दिन वरदान के कारण बढ़ता है। इन्हें हम **चन्द्र कलाएं** कहते हैं। यह एक अलंकारिक किन्तु सांकेतिक प्रसंग है, जिसे तत्त्वतः समझने के लिए विस्तार में जाना होगा, जो यहां मूल विषय के प्रति अन्याय होगा।

पंद्रह कलाओं से पूर्ण होने के कारण चन्द्रमा रूप, कला, शृंगार, प्रेम, आकर्षण, सौंदर्य, यौवन आदि से तो सम्बन्धित है ही मनोदशा, शांति, सौम्यता, मधुरता, लावण्य एवं मनोबल से भी सम्बन्धित है। मन, बाएं नेत्र, माता, मौसी आदि का कारक भी ज्योतिष में चन्द्रमा को ही माना गया है। चन्द्रमा का ज्योतिष में महत्व इस बात से ही सिद्ध हो जाता है कि लग्नकुंडली के अलावा सूर्यकुंडली व चन्द्रकुंडली का अध्ययन भी सामान्य फलादेश में अनिवार्य होता है। इन तीनों का संगठित रूप ज्योतिष में **सुदर्शन चक्र** कहलाता है। इसके अलावा चन्द्रमा जातक की कुंडली में जिस राशि में हो वही जातक की जन्म राशि होती है। शनि की साढ़ेसाती, ढैया आदि का विचार भी चन्द्रमा से ही किया जाता है। गोचर में चन्द्रमा द्वारा ही किसी घटना का अमुक दिन होना निश्चित होता है। चन्द्रमा के महत्त्व को दर्शाने वाले अनेक सूत्र ज्योतिष शास्त्र में उपलब्ध हैं। यथा—**चन्द्रं बीजं सर्वबीजं ग्रहाणाम्** तथा **चन्द्रमा मनसो जातः** आदि।

ज्योतिषशास्त्र के अनुसार चन्द्रमा का शरीर वर्तुल (गोल), नेत्र कमलवत्, वर्ण गौर (श्वेत), वाणी मृदु, स्वभाव सौम्य किन्तु चंचल/अस्थिर, प्रकृति वायु व कफ प्रधान, तत्त्व जल, लिंग, स्त्री, गुण, सत्त्व, अवस्था, तरुण, जाति, वैश्य, दिशा वायव्य, ऋतु वर्षा, स्थान जलाशय/नदी, दिक्बल चतुर्थ भाव, कालबल रात्रि, चेष्टाबल मकर से मिथुन राशि तक, रस क्षार, नक्षत्र रोहिणी, हस्त व श्रवण, अधिदेव शिव, प्रत्यधिदेव जल, स्वग्रहराशि कर्क, उच्च राशि वृष 30°, नीच राशि वृश्चिक, मूल त्रिकोण वृष 9° से 30°, रत्न मोती, धातु चांदी, वस्त्र नया, श्वेत, काल-मुहूर्त (48 मिनट), पूर्ण दृष्टि सातवीं, एक पादृष्टि तीन व दस, द्विपाद पांच व नौ तथा त्रिपाद दृष्टि चार व आठ है।

कचहरी, मुकदमा, सेना, कर्मनिपुणता, स्वतंत्रता, तस्करी, चोरी, डकैती, हत्या आदि का विचार किया जाता है।

रोग ज्योतिष के अनुसार मांसपेशियां/पुट्ठे, खूनी बवासीर, गुदा, मज्जा, अंडकोष, सिर, क्षत (कटना-फटना)/घाव, चोट एवं रक्तादि का विचार मंगल से किया जाता है। ऊंचाई से गिरना, मूर्छा, ऑपरेशन, हड्डी टूटना, दुर्घटना, खून निकलना तथा कामोन्माद आदि भी मंगल द्वारा ही विचारे जाते हैं।

मंगली दोष का विचार भी मंगल से होता है। कुंडली के 1,4,7,8,12 भावों में बैठा मंगल मंगली दोष उत्पन्न करता है (यदि अन्य ग्रहों द्वारा उसका परिहार न हो रहा हो)। दक्षिण भारतीय पद्धति में दूसरे भाव में बैठा मंगल भी मंगली दोष उत्पन्न करने वाला माना जाता है। विवाह आदि में मंगली दोष का विशेष विचार किया जाता है।

मंगल का वैदिक मंत्र—**ॐ अं अंगारकाय नमः** है तथा ज्योतिषीय तांत्रिक मंत्र—**ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः** है। मंगल रत्न मूंगा स्वर्ण या तांबे में जड़वाकर अनामिका उंगली में पहना जाता है। मंगल की पीड़ा हरण के लिए इक्कीसा यंत्र प्रयुक्त किया जाता है। अनन्त की जड़ या नागजिह्वा मंगल की जड़ियां हैं। गुड़, गुड़ की रेवड़ियां, मीठी रोटी (गुड़ व गेहूं की), मसूर की दाल, लाल पुष्प, कैक्टस, बबूल, कांटेदार झाड़ियां, गोखरू, खैर वृक्ष, बेल वृक्ष, शमी वृक्ष, लाल कनेर, लाल मिर्च, लाल प्याज आदि मंगल से सम्बन्धित खाद्य पदार्थ व फल-फूल, वनस्पति आदि हैं।

बुध (MERCURY)

ज्योतिषशास्त्र में बुध को नपुंसक ग्रह तथा बालक माना गया है। विशेषकर 'अरुण संहिता' या 'लाल किताब' में बुध को बच्चा कहा गया है। इसे कालपुरुष की वाणी भी कहा गया है। वाणी, वाक्चातुर्य, बुद्धि (चतुराई) तथा स्नायुतन्त्र पर बुध का विशेष प्रभाव रहता है। बुद्धि (चातुर्य) तथा वाणी (वाक्पटुता) को प्रभावित करने व जाति से वैश्य होने के कारण बुद्ध का व्यापार वाणिज्य से भी सम्बन्ध रहता है। विशेषकर लेखापाल (रजिस्ट्रार), गणित/गणना, एकाउंटेंसी, बैंकिंग आदि बुध के ही क्षेत्र में आते हैं। राहू के दोष का भी बुध शमन करता है, किन्तु शुक्र से यह पराजित हो जाता है। सामान्यतः कुंडली में अकेला बैठा बुध शुभ प्रभाव देता है। अन्यथा जैसे ग्रह के साथ वह बैठ जाता है (नपुंसक या बालक दोनों का अर्थ एक ही है—पौरुष का अभाव)—होने के कारण उस ग्रह के अनुसार ही यह फल देने लगता है। बुध को अच्छा वक्ता भी मानते हैं। जन्मकुंडली व गोचर में यह सूर्य के आस-पास ही भ्रमण करता है (सूर्य का पड़ोसी जो ठहरा)।

बुध का रंग दूब की भांति हरा है। नेत्र बड़े व लाल (गुलाबी), शरीर हृष्ट-

पुष्ट, प्रकृति वात-पित्त-कफ (मिश्रित), त्वचा स्वस्थ, दृष्टि तिरछी, वाणी मधुर एवं विनोदपूर्ण, अवस्था कुमार (बालक), तत्त्व पृथ्वी, जाति वैश्य, व्यक्तित्व-आकर्षक व रूपवान, स्पष्टवक्ता, चतुर, बुद्धिमान परन्तु रजोगुण प्रधान (अस्थिर), ऋतु शरद, दिशा उत्तर, लिंग नपुंसक, स्वभाव सौम्य (यदि पाप प्रभावित न हो तो शुभ फल देने वाला), आकार गोल, रस-मिश्रित, धातु, रजत, रत्न पन्ना, वस्त्र हरा, सांवला, स्वर्गाशि मिथुन, कन्या। उच्च राशि कन्या 15°, नीच राशि मीन, मूलत्रिकोण राशि- 16° से 25° तक कन्या, नक्षत्र रेवती, आश्लेषा, ज्येष्ठा। अधिदेवता विष्णु, प्रत्यधिदेवता भी विष्णु। भाग्योदय वर्ष 32 है।

सूर्य, शुक्र व राहू इसके मित्रग्रह हैं। शत्रु ग्रह चन्द्रमा तथा शनि; मंगल, गुरु सम हैं (कुछ स्थानों पर शनि को बुध का मित्र तथा शुक्र को सम माना गया है)। स्थान खेल का मैदान/मनोरंजन स्थल, काल दो मास, एक राशि में भ्रमण काल 25 दिन, दिक्बल प्रथम भाव, कालबल दिन, चेष्टाबल चंद्र के साथ है। वाणी, बुद्धि एवं मामा का स्थिर कारक। पूर्णदृष्टि 7, एकपाद दृष्टि—3, 10, द्विपाद दृष्टि—5, 9 तथा त्रिपाद दृष्टि—4, 8 है। जन्मकुंडली के चौथे भाव में इसे निष्फल माना गया है। जातक की बाल्यावस्था का विचार बुध से भी करते हैं। कुछ ज्योतिषाचार्य बुध की जाति शूद्र भी मानते हैं।

जन्मकुंडली में जातक की वाणी, बुद्धि, चतुराई, स्मरणशक्ति, विद्या, गणित, व्यवहारकुशलता, ज्योतिष, वैद्यक, उपासना, वाक्चातुर्य, वक्ता, भाषाशैली (प्रभावोत्पादक), विज्ञान, वाणिज्य, व्यापार, तर्कशास्त्र, पटुता, हास्यविनोद, लेखन, मनोरंजन, खेल, मामा, मित्र, दत्तक पुत्र, यज्ञ, गोत्र, उच्च ज्ञान, उच्च शिक्षा, पत्रकारिता, अन्तर्ज्ञान, अभिचार, जातक का बचपन तथा नपुंसकत्व/ठंडेपन का विचार बुध के द्वारा ही किया जाता है।

वाणीदोष (तुतलाना, हकलाना), बौद्धिक विकार, दुःस्वप्न, मानसिक कष्ट, आलस्य, तंद्रा, निद्रानाश, चक्कर आना, वायु व उदर (आंतों के) रोग, मन्दाग्नि, ज्ञानेन्द्रियों (नाक, कान, त्वचा, जीभ आदि) के विकार, त्रिदोषों के असंतुलन से उत्पन्न रोग, त्वचा सम्बन्धी रोग विशेषकर श्वासनली, चेतना, नपुंसकत्व, श्रवणशक्ति, नसों आदि के रोग बुध द्वारा ही ज्योतिष में विचारे जाते हैं।

बुध का रत्न पन्ना चांदी में जड़वाकर कनिष्ठा उंगली में धारण किया जाता है। बुध का वैदिक मंत्र—**ॐ बुं बुधाय नमः** है। बुध का ज्योतिषीय तांत्रिक मंत्र—**ॐ ब्रां ब्रीं ब्रौं सः बुधाय नमः** है। बुध का यन्त्र (पीड़ा निवारणार्थ) चौबीसा यंत्र है। वधारा की जड़, बुध की जड़ी/औषधि है। इलायची, तुलसी, पालक, हरा सीताफल, मूंग की दाल (साबुत), हरी सब्जी, हरे फल, धनिया, मेथी, सौंफ, सेम आदि बुध से सम्बन्धित खाद्य पदार्थ व वनस्पतियां हैं। नागचंपा, चमेली, सागौन का वृक्ष तथा महुए का वृक्ष बुध के नक्षत्रों से सम्बन्धित वृक्ष हैं।

लाल किताब के अनुसार बुधवार को दुर्गा की पूजा, दुर्गा सप्तशती, दुर्गा यन्त्र आदि के पाठ से बुध के अशुभत्व की शांति होती है। इसी प्रकार कन्याओं को दान देना या भोजन कराना भी लाल किताब में बुध (दुर्गा) से सम्बन्धित उपायों के अन्तर्गत आता है।

जैसे माणिक्य का उपरत्न लालड़ी व सूर्यकांत मणि है तथा मोती का उपरत्न मून स्टोन या चन्द्रकांत मणि है, उसी प्रकार पन्ने के उपरत्नों में ऑनेक्स (ONEX) तथा फिरोजा को गिना जाता है।

बृहस्पति (JUPITER)

ज्योतिषशास्त्र में गुरु को कालपुरुष का ज्ञान व सुख कहा गया है। गुरु निवृत्तिमार्गी, आध्यात्मिक, ज्ञान व सुख का प्रधान कारक, शुभता प्रदान करने वाला ग्रह है। यद्यपि कुण्डली के जिस भाव में यह बैठता है उस भाव के कारकत्व के लिए बाधक होता है, परन्तु इसकी दृष्टि परम शुभ होने से यह जिस भाव को देखता है, उस भाव के शुभ फलों में वृद्धि करता है। लग्न में बैठा हुआ गुरु यदि सबल स्थिति में हो तो जातक के अनेक दोषों का शमन करके परमकल्याणकारी योग निर्माण करता है। यह सतोगुणी ग्रह है। इसका लिंग पुरुष तथा जाति ब्राह्मण है। दीर्घ तथा स्थूल शरीर वाला, बड़े उदर वाला, ऊंचा तथा चौड़ी छाती वाला, गम्भीर वाणी, रंग पीला, केश व नेत्र भूरे, प्रकृति कफ, श्रेष्ठ बुद्धियुक्त, धार्मिक तथा परम ज्ञानी, विनीत, दक्ष, क्षमाशील, शास्त्रज्ञ, मोटा, प्रसन्नचित्त, रुचि मधुर (मिष्ठान्न प्रिय) है।

गुरु का वस्त्र पीला, धातु स्वर्ण, रजत व कांसा, रत्न पुखराज, दृष्टिसम, अवस्था वृद्ध, ऋतु हेमन्त, दिशा ईशान, अधिदेवता ब्रह्मा, प्रत्यधिदेवता इन्द्र, तत्त्व आकाश, रस मधुर, आकार गोल, शरीर धातु मेद/चर्बी, स्वभाव मृदु, स्थान-कोषस्थल, स्थिरकारक-ज्ञान व पुत्र, दिक्बल प्रथम भाव, कालबल सदा, चेष्टाबल चन्द्र के साथ (गजकेसरी योग बन जाता है), भाग्योदय वर्ष 16, एक राशि में भ्रमण काल एक वर्ष (लगभग), स्वगृह राशि धनु व मीन, उच्च राशि कर्क 5°, नीच राशि-मकर, मूल त्रिकोण राशि-धनु 20° तक, नक्षत्र विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, पुनर्वसु, पूर्णदृष्टि-5,7,9, एक पाददृष्टि-3,10, द्विपाददृष्टि-4,8 है। मित्रग्रह चन्द्र, सूर्य, मंगल है। शत्रु ग्रह शुक्र व बुध, समग्रह शनि व राहू है।

विचारशक्ति/विवेक गुरु की विशेषता है। सुख का कारक होने से यह (निर्बल व पापयुक्त हो तो) निर्धनता व कष्ट भी देता है। इसी प्रकार पुत्र का कारक होने से विशेष परिस्थितियों में यह पुत्राभाव भी उत्पन्न कर देता है। अपने वार तथा सायंकाल में यह बलवान होता है। सुख का कारक होने से धन-सम्पन्नता पर भी इसका अधिकार है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद इसी के अधिकार क्षेत्र में आते हैं।

जन्मकुंडली में गुरु द्वारा पुत्र, ज्ञान, विवेक, अध्यात्म, शिक्षा, वेद/शास्त्र,

अध्ययन, भाग्य, मेदवृद्धि, देहपुष्टि, राज्य सम्मान, विद्या, तप, प्रजा, दीक्षा, गुण, धर्म, मांगलिक कार्य, सद्गुण, श्रद्धा, पित्त, बड़ा भाई, परदादा, पोता, आचार्य, वाहन, कोष, मंत्री, प्रवचन, तर्कशास्त्र, न्याय व दर्शन शास्त्र, जज, वकील, व्याकरण, लेखन, ज्योतिष, उपासना, सदाचरण तथा मृत्यु के उपरांत सद्गति का विचार करते हैं। स्त्री जातक के लिए बृहस्पति पति का भी कारक होता है (क्योंकि भारतीय संस्कृति में पति को ही स्त्री का गुरु माना जाता है)। पूर्व जन्मों के पुण्य स्वरूप ही जन्मकुण्डली में बृहस्पति सबल तथा शुभ स्थान में विराजता है।

गुरु के रत्न पुखराज को सोने/चांदी या अष्टधातु में जड़वाकर तर्जनी उंगली में पहना जाता है (विशेषकर स्वर्ण धातु में)। गुरु का वैदिक मंत्र—**ॐ बृं बृहस्पतये नमः** है तथा गुरु का ज्योतिषीय तांत्रिक मंत्र—**ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौं सः गुरवे नमः** है। हल्दी, केला, बेसन, चना, लड्डू, केसर, पीले फूल, पीले वस्त्र, सरसों, पीला अनाज, पका सीताफल, पीले कन्हेर, चमेली, मूंगफली, लौंग, अंजीर, गूलर, आम तथा आम का वृक्ष, नागकेशर, बांस वृक्ष आदि सब गुरु से सम्बन्धित पदार्थ, खाद्य पदार्थ, फल, फूल तथा वनस्पतियां आदि हैं। केले की जड़ इसकी औषधि है। सत्ताविंश (सत्ताईसा) यंत्र गुरु का पीड़ा निवारक यंत्र है।

जज, बुजुर्ग, ब्राह्मण, पुजारी, महात्मा या साधु आदि भी बृहस्पति के प्रतिनिधि होते हैं। बृहस्पति से सम्बन्धित उपायों व दान आदि में यह बात ध्यान रखनी चाहिए, ताकि दान सुपात्र के पास ही जाए और दानकर्त्ता को लाभ मिले।

शुक्र (VENUS)

शुक्र को कालपुरुष का 'काम' कहा गया है। काम का प्रतिनिधि होने के कारण यह ग्रह वासना, रसिकता, भोग, विलास, इन्द्रीयसुख, प्रेम, सौंदर्य, कला, मौन, आकर्षण आदि से जातक को भोगवाद की ओर ले जाता है। देवगुरु बृहस्पति से असुर गुरु होने के कारण शुक्र की घोर शत्रुता है। अतः यह जातक के मोह, काम, लालसा एवं भोगप्रधान तीव्र महत्त्वाकांक्षाओं को प्रभावित करके आत्मसाक्षात्कार, आध्यात्मिक ज्ञान, निवृत्तिमार्ग आदि में अवरोध पैदा करता है (जो कि बृहस्पति के गुण हैं)। यदि जन्मकुंडली में मंगल, राहू या शनि के साथ यह बैठा हो तो जातक को अत्यधिक कामुक बनाकर अवैध सम्बन्धों व नैतिक पतन की ओर ले जाता है (विशेषकर राहू व शनि के साथ बैठा हो तब)। वैसे भी यह अन्य ग्रहों की युतियों व दृष्टियों से शीघ्र प्रभावित होने वाला ग्रह माना जाता है।

शुक्र का लिंग स्त्री किन्तु जाति ब्राह्मण है (आचार्य होने के कारण)। यह शुभ किन्तु रजोगुणी है। प्रसन्नचित्त, सुखी, रसिक, कामी व आकर्षक व्यक्तित्व का स्वामी है। इसका शरीर सुगठित, सम, संतुलित व सुदर्शन है। रंग सांवला, नेत्र बड़े तथा सुन्दर, बाल लम्बे-काले व घुंघराले हैं। वाणी व रुचि मधुर, प्रकृति वात-

तीसरे भाव में ही अच्छा फल देने वाला कहा गया है (फिर भी भाइयों व स्वजनों को कष्ट तथा जातक को कर्णरोग, यह तीसरे भाव में भी दे ही देता है)। अन्य सभी भावों में राहू अशुभ फल देता है, विशेषकर सातवें तथा बारहवें भाव में अथवा शनि के साथ होने से इसके अशुभ फलों में वृद्धि होती है।

रोग ज्योतिष के अनुसार राहू भूत-प्रेत की बाधाएं (फोबियाज़, कॉम्प्लैक्सिस, चित्तभ्रम, विभ्रम, वहम, भय, डिप्रेशन, फ्रस्ट्रेशन आदि), ऊपरी हवा का असर, (विक्षिप्तता/अर्धविक्षिप्तता अथवा सनक), अस्थि के रोग, हड्डी टूटना, वायुरोग, काममनोविकृति, हकलाहट, दांतों के रोग, आत्महत्या, दुर्घटना, नशे की अधिकता, सर्पदंश, विष या विषपान, फोड़े-फुंसी, मवाद आदि, चर्मरोग, खुजली, कुष्ठ, पैरों के निचले हिस्से के रोग, स्नायु व गुदा आदि के रोग देता है। हृदयाघात में भी राहू अवश्य INVOLVE होता है। राहू की दशा/अन्तर्दशा आदि में यदि रोग का डाइग्नोस कराया जाए तो राहू संशय उत्पन्न करके रोग को ठीक-ठीक डाइग्नोस नहीं होने देता।

शनि से सम्बन्धित सभी वस्तुएं राहू से भी सम्बन्ध रखती हैं तथा रोगादि में राहू के प्रभाव भी शनि के समान ही होते हैं। विशेषकर काला कम्बल, लोहे की गोली, हाथी, कोयले की राख भंगी, खुजली वाला कुत्ता, कोढ़ी आदि तथा नाग/सर्प राहू से ही सम्बन्धित है। मूली, बोन्जाई वृक्ष या पौधे, कृत्रिम वनस्पतियां, काला धतूरा, सौंफ, सफेदा, अर्जुन का वृक्ष, कदम्ब का वृक्ष। कृष्ण-अगरू का वृक्ष आदि राहू से सम्बन्धित वनस्पतियां हैं। सफेद चन्दन की जड़ राहू की औषधि है तथा 'छत्तीसा यंत्र' राहू का पीड़ा निवारक यंत्र है। राहू का वैदिक मंत्र—**ॐ रां राहवे नमः** है। तथा ज्योतिषीय तांत्रिक मंत्र—**ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः राहवे नमः एवं ॐ छ्रां छ्रीं छ्रौं सः राहवे नमः** है। शिव तथा काली की उपासना से भी लाभ होता है तथा सांप को दूध पिलाना भी इसका एक उपाय है।

केतु (DRAGON'S TAIL)

केतु को आंग्ल भाषा में DRAGON'S TAIL कहा गया है। केतु का शाब्दिक अर्थ ध्वजा/पताका है (जो पहचान का प्रतीक है)। केतु के लिए पताका, शिखी, घोर, ध्वजा आदि नाम मिलते हैं। केतु राहू से सदैव सातवें भाव में (कुण्डली में) यानी आमने-सामने (180°) पर रहता है। केतु अशुभ होते हुए भी राहू जैसा क्रूर व निष्ठुर नहीं माना गया है। अन्य शुभ योग हों तो यह जातक को अध्यात्मवाद तथा आध्यात्मिक सिद्धियों की ओर भी ले जाता है। बारहवें भाव में केतु मोक्ष का कारक भी होता है। घटनाओं में आकस्मिक परिवर्तन केतु का प्रधान गुण है। एक ओर यह जातक को निम्नतम कृत्य कराकर घृणित व निन्दित बनाता है तो दूसरी ओर ज्ञान की खोज में उन्मुख करके आध्यात्मिक भी बनाता है।

छायाग्रह होने के कारण कालपुरुष के किसी अंग के रूप में केतु की कल्पना नहीं की गई है, न ही इसे किसी राशि का स्वामित्व मिला है (राहु की तरह)।

ज्योतिषशास्त्र में केतु द्वारा शारीरिक तथा मानसिक मलिनता, बन्धन, दरिद्रता, बाल्यावस्था में अनिष्ट, आकस्मिक बाधाएं व संकट, भूख, दुर्भिक्ष, कष्ट, क्षयरोग, नाना, परदादा, दादी आदि का विचार किया जाता है। तप, तन्त्र, टोना-टोटका, जादू, आध्यात्मिक ज्ञान, रहस्यमयी विद्याएं, विदेशी भाषाओं में दक्षता, अभिचार, अपमृत्यु, कपट, मोक्ष आदि का विचार भी केतु द्वारा ही जन्मकुण्डली में किया जाता है। राहू की भांति केतु भी पृथकता का प्रभाव देने वाला ग्रह है।

रोग ज्योतिष के अनुसार चेचक, पेटदर्द, आधासीसी, साइटिका, खुजली, फोड़े-फुंसी, श्वेतकुष्ठ, कुष्ठ आदि चर्मरोग, विषदंश, सड़ना, गलना आदि केतु के द्वारा देखा जाता है। गुदा रोगों में अर्श, खूनी बवासीर आदि में प्रायः केतु का ही प्रभाव रहता है। पापग्रहों के साथ केतु आत्महत्या की प्रवृत्ति भी देता है। अशुभ केतु समस्त बने हुए काम ऐन मौके पर बिगाड़कर परिस्थितियां पलट देता है।

तामस होते हुए भी शुभ प्रभाव से आध्यात्मिक रुझान उत्पन्न कर देने वाले इस छायाग्रह केतु की जाति म्लेच्छ, लिंग पुरुष, आकार-पूंछ के समान (मछली की), शरीर दीर्घ, अवस्था अतिवृद्ध, दिशा वायव्य (कुछ ज्योतिर्विद सभी दिशाएं मानते हैं), रंग-धुएं के समान/चित्र-विचित्र, वस्त्र-जीर्ण/फटे हुए, कटे हुए, छिद्रयुक्त, तत्त्व-तेज, धातु-अष्टधातु, रत्न-लहसुनिया (कैट्स आई), रस-नीरस/फीका, स्थान-बंजर/उजाड़, स्थिरकारक नाना का, नक्षत्र-मघा, मूल, अश्विनी, उच्च राशि वृश्चिक 20° व धनु 15°, नीच राशि-मिथुन 15°, मूलत्रिकोण राशि-सिंह, स्वग्रही राशि कोई नहीं, गति-सदा वक्री, ऋतु शिशिर, कालबल रात्रि में, एक राशि में भ्रमण काल 18 महीने/डेढ़ साल, अधिदेवता-चित्रगुप्त तथा प्रत्यधिदेवता-ब्रह्मा हैं।

केतु की पूर्ण दृष्टि सात, एकपाद दृष्टि तीन व दस, द्विपाद दृष्टि पांच व नौ तथा त्रिपाद दृष्टि चार व आठ है। केतु के मित्र व शत्रु ग्रह राहू के ही समान हैं। भाग्योदय वर्ष 48 है। 'फलदीपिका' के अनुसार केतु नपुंसक ग्रह है। (राहू का पूंछ के समान अनुकरण करने से इसे राहू की तुलना में नपुंसक माना भी जा सकता है) तथा ब्रह्मा अधिदेवता एवं चित्रगुप्त प्रत्यधिदेवता हैं। दाढ़ी रखने का शौक प्रायः केतु ही देता है। द्वितीय भाव में केतु हो या केतु की दृष्टि हो तो प्रायः व्यक्ति दाढ़ी रखता है।

रोगों तथा अन्य प्रभावों में जैसे राहू को शनि के समान गुण देने वाला कहा गया है, वैसे ही केतु को मंगल के समान गुण देने वाला कहा जाता है। **शनिवत् राहू कुजवत् केतु।** सूत्रानुसार शनि के समान राहू तथा मंगल की तरह केतु का आचरण समझना चाहिए। आध्यात्मिक दृष्टि तथा पुनर्जन्म की (कर्मफल बंधन) दृष्टि से राहू को IN-LET तथा केतु को OUT-LET समझा जाता है। केतु कुण्डली

में TERMINAL के रूप में भी कार्य करता है। यह एक विलक्षण एवं रहस्यात्मक छाया ग्रह है। लाल किताब के अनुसार तलवार, लंगड़ा, बच्चे, मछली, फटे या कटे हुए वस्त्र, कुत्ता (विशेषकर काला), मुसाफिर/यात्री आदि केतु के प्रतिनिधि हैं। अत: उपाय के रूप में मछलियों को आटे की गोली खिलाने से केतु की पीड़ा में लाभ होता है। चितकबरा कुत्ता/बकरी व श्वेत कुष्ठ से ग्रस्त व्यक्ति भी केतु के प्रतिनिधि हैं।

राहू से सम्बन्धित वनस्पतियां आदि केतु से भी सम्बन्धित हैं। विशेषकर सफेदा, सौंफ आदि। इसके अलावा कुचला, बरगद तथा राल का वृक्ष केतु के नक्षत्रों से सम्बन्धित हैं। राहू के उपाय शनि या बुधवार में करते हैं तो केतु के मंगल या गुरुवार में। केतु का वैदिक मंत्र—**ॐ कें केतवे नम:** है तथा जपनीय ज्योतिषीय तांत्रिक मन्त्र—**ॐ स्त्रां स्त्रीं स्त्रौं स: केतवे नम:** अथवा **ॐ स्त्रां स्त्रीं स्त्रौं स: केतवे नम:** है। (मंगल के समान होने से रोगादि के विचार में यह प्रभावित अंग का ऑपरेशन भी करवा देता है। क्योंकि चीरफाड़/सर्जरी/कटना, घाव लगना आदि मंगल के प्रभाव क्षेत्र में हैं। सैप्टिक (मवाद/पस पड़ जाने) तथा नासूर आदि में राहू या केतु की INVOLVEMENT अवश्य होती है। क्योंकि सड़ना, गलना तथा विषदूषण इन्हीं छायाग्रहों के अधिकार क्षेत्र में है।

□□

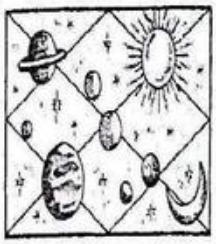

यूरेनस, नेप्च्यून व प्लूटो
(वरुण, प्रजापति एवं यम)

भारतीय ज्योतिष में क्यों शामिल नहीं?

यूरेनस, नेप्च्यून व प्लूटो बाद में खोजे गए हैं। भारतीय ज्योतिष में इनको स्थान प्राप्त नहीं है। परन्तु पाश्चात्य ज्योतिष इन्हें स्थान देता है और इन पर खोज भी कर रहा है। अत: इन ग्रहों का वैज्ञानिक परिचय ही उपलब्ध होता है। भारतीय ज्योतिषीय परिचय नहीं। यद्यपि पुराणों में वरुण, प्रजापति तथा यम का वर्णन उपलब्ध है। परन्तु ज्योतिषीय महत्त्व व परिचय न होने से न तो उनका तुलनात्मक विवेचन सम्भव है और न ही इस तथ्य का कोई प्रमाण उपलब्ध होता है कि नए ढूंढे गए ग्रहों का पौराणिक—वरुण, प्रजापति व यम से कोई निश्चित सम्बन्ध है अथवा सुविधा के लिए मात्र इन नामों का प्रयोग ग्रहों की पहचान के लिए किया गया है। बहरहाल, जो भी हो। हम विषय की पूर्णता के लिए इन नवीन तीनों ग्रहों के वैज्ञानिक परिचय तथा पाश्चात्य-ज्योतिषीय निष्कर्षों का संक्षेप में वर्णन अवश्य करेंगे। यद्यपि हमारा मूल विषय भारतीय ज्योतिष है।

शंका और समाधान

भारतीय ज्योतिष में इन तीनों नवीन ग्रहों का समावेश क्यों नहीं है? इस प्रश्न के दो सम्भावित उत्तर हो सकते हैं। हम दोनों का विवेचन करेंगे।

पहला—क्योंकि यूरेनस/हर्षल की खोज 1781 में, नेप्च्यून की 1846 में तथा प्लूटो की 1930 में हुई और भारतीय ज्योतिष की जड़ें 5000 वर्षों से भी अधिक गहराई में गई हुई हैं। अत: जब ये तीनों ग्रह खोजे ही नहीं गए थे तो इनका अध्ययन कैसे किया जा सकता था।

दूसरा—इन ग्रहों के विषय में जानकारी ऋषियों को पहले हो चुकी थी। परन्तु पृथ्वी से अत्यधिक दूर होने के कारण इनके प्रभाव को पृथ्वी के लिए महत्त्वपूर्ण नहीं माना गया। अन्य शत्रुग्रहों तथा तारों की भांति इसलिए इनका अध्ययन नहीं किया गया।

पहले उत्तर के हक में यह बात कही जा सकती है कि कोई भी विज्ञान अपने आपमें सम्पूर्ण नहीं होता। उसमें नित नई खोजों तथा विकास व अन्वेषण की अनन्त सम्भावनाएं होती हैं। अत: इनकी खोज होने के बाद इन पर भी अध्ययन किया जा रहा है। पाश्चात्य ज्योतिषी ही नहीं, बहुत से भारतीय ज्योतिषी भी इन पर अध्ययन कर रहे हैं और बहुत से सकारात्मक परिणाम प्राप्त हो रहे हैं। परन्तु अभी क्योंकि यह सब अध्ययन या विकास के अंतर्गत है। अत: अभी निकाले गए निष्कर्षों व बनाए गए सिद्धांतों में त्रुटि हो सकती है। वे अंधी आंख मूंदकर विश्वास किए जाने योग्य शायद नहीं कहे जा सकते।

दूसरे उत्तर के हक में यह कहा जा सकता है कि जिन ऋषियों ने बिना रॉकिट, शटल आदि के ही समाधि की अवस्था में प्रधान सात ग्रहों व दो छायाग्रहों का ज्ञान प्राप्त कर, उनके अध्ययन द्वारा इतना सटीक विज्ञान बनाया वे बाद में तीन ग्रह खोज नहीं पाए—यह बात गले नहीं उतरती। उन्होंने प्रधान सात ग्रहों का ही नहीं आकाशगंगाओं, तारों, नक्षत्रों, धूमकेतुओं आदि तक का ज्ञान प्राप्त किया था जो आज की वैज्ञानिक खोजों पर भी सही उतर रहा है। फिर यूरेनस, नेप्च्यून, प्लूटो को वे क्यों नहीं खोज सके होंगे। अत: यह कहना होगा कि उन्होंने इन तीनों का भी ज्ञान प्राप्त किया होगा। परन्तु पृथ्वी से दूरी अत्यधिक होने के कारण अपने अध्ययन में इन ग्रहों के पृथ्वी पर प्रभाव इतने न्यून, क्षुद्र व अनिश्चित पाए होंगे कि इनको ज्योतिषशास्त्र में शामिल नहीं किया गया होगा।

एक बात यह भी कि सूर्य व चन्द्र (राजा, रानी) को एक-एक राशि (सिंह व कर्क) का स्वामित्व देकर शेष पांच ग्रहों (मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि) को दो-दो राशियों का स्वामित्व दिया गया है। (मंगल को मेष तथा वृश्चिक, बुध को मिथुन व कन्या, गुरु को धनु व मीन, शुक्र को वृष एवं तुला तथा शनि को मकर व कुम्भ)—ऐसे में यूरेनस, नेप्च्यून तथा प्लूटो को इस व्यवस्था में कैसे शामिल किया जा सकता था। बारह राशियों को कैसे इन सबमें बांटा जा सकता था? राहू-केतु को छायाग्रह होने के कारण किसी भी राशि का स्वामित्व नहीं दिया गया। मगर इन तीनों को ग्रह होने के कारण देना पड़ता और तब सही बंटवारा हो ही नहीं पाता। अत: व्यवस्था को बनाने के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण न होने के कारण इन तीनों को छोड़ दिया गया होगा। ऐसा माना जा सकता है।

पाठक अपनी बुद्धि के अनुसार इन दोनों में से कोई-सा भी उत्तर सही मानने का निर्णय ले सकते हैं। परन्तु इन तीनों के वैज्ञानिक परिचय के बाद जो पाश्चात्य ज्योतिषियों द्वारा किए गए अन्वेषणों के संक्षिप्त परिणाम यहां हम बताएंगे उनको पढ़कर स्वयं पाठक यह जान लेंगे कि वास्तव में यह तर्क के बिल्कुल सही है कि

इनकी अत्यधिक दूरी के कारण इनका राशियों में भ्रमण चक्र का काल इतना लम्बा है और इनके प्रभाव इतने क्षीण कि इनको ज्योतिषीय अध्ययन में शामिल करने की अनिवार्यता नहीं रह जाती। और आवश्यकता तब हो, जब प्रधान 7 ग्रहों के प्रभावों के अध्ययन द्वारा प्राप्त ज्ञान में कोई अपूर्णता या कमी हो। जब इन्हीं ग्रहों से समूचा ज्ञान अपनी विविधता सहित प्राप्त हो जाता है तो व्यर्थ का विस्तार देने की आवश्यकता ही क्या है?

अत: मेरी अपनी धारणा यही है कि भारतीय ज्योतिष में नए खोजे ग्रहों को शामिल न करने का कारण ऋषियों की इन ग्रहों के विषय से अनभिज्ञता नहीं हो सकती। क्योंकि आधुनिक विज्ञान अन्य प्रधान ग्रहों के विषय में जो कुछ भी आज जान रहा है, वो ऋषियों द्वारा पहले ही जाना जा चुका है। अत: यह नहीं कहा जा सकता कि आधुनिक विज्ञान ने जिन ग्रहों को बाद में खोजा उनकी जानकारी ऋषियों को नहीं थी। फिर भी उन्होंने इन ग्रहों को ज्योतिषीय अध्ययन में शामिल नहीं किया तो इसका कारण इनकी अत्यधिक दूरी के कारण प्रभाव में होने वाला विलम्ब तथा क्षीणता ही है न कि इन ग्रहों के विषय में अनभिज्ञता।

पाश्चात्य ज्योतिषीय परिचय

यूरेनस को 'कूर्म'/प्रजापति, नेप्च्यून को 'वाराह'/वरुण तथा प्लूटो को 'यम' नाम से भी भारत में सम्बोधित किया जाता है। हर्शल यूरेनस का ही दूसरा नाम है। अत: पाठकगण अन्य पुस्तकों में या कहीं चर्चा में भिन्न नामों को सुनकर भ्रमित न हों।

प्रसिद्ध भारतीय ज्योतिषाचार्य वराह मिहिर (सन् 505 में जन्मे) जो राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे, के बाद से राहू, केतु नामक छायाग्रहों का ज्योतिष में व्याख्या की दृष्टि से समावेश हुआ। इससे पूर्व सात प्रधान ग्रहों की ही व्याख्या ज्योतिष में होती थी। यद्यपि राहू और केतु का अस्तित्व स्वीकृत था तथापि ज्योतिषीय [illegible] में उनका स्थान नहीं के बराबर था। नए तीन ग्रह ढूंढे जाने के बाद अब वे भी ज्योतिषीय अनुसंधान तथा व्याख्या के अन्तर्गत आ गए हैं।

यूरेनस—यह एक राशि में लगभग 7 वर्ष रहता है। पूरी कुंडली का भ्रमण कर अपने स्थान पर पहुंचने में 84 वर्षों से कुछ अधिक समय लेता है (जबकि प्रधान नवग्रहों में सबसे धीरे चलने वाला ग्रह शनि 2½ वर्ष एक राशि में रहता है तथा 30 वर्षों में कुंडली का चक्र पूर्ण करता है)। अत: यह शनि से भी धीरे-धीरे चलने वाला सिद्ध होता है तथा जातक के जीवन में एक चक्र से अधिक नहीं लगा सकता (जबकि शनि तीन से चार चक्र लगा सकता है)। इसे भारतीय ज्योतिषाचार्यों ने 'बृहस्पति के दादा' (प्रजापति) का नाम दिया है। यद्यपि गुण प्रभाव की दृष्टि से यह शनि के समान माना गया है।

जातक के मस्तिष्क व स्नायुतन्त्र पर यह प्रभाव डालता है। दार्शनिकता, आध्यात्मिकता तथा गहन चिन्तन का स्वभाव जातक को पाश्चात्य ज्योतिषियों के अनुसार इसी ग्रह से मिलता है (यहां पाठक ध्यान दें कि सन् 1781 में खोजे गए इस ग्रह का अध्ययन कर मात्र 225 वर्षों में यह सिद्धांत निकाला गया है। जबकि यह ग्रह कुंडली का एक चक्र 84 वर्षों में लगाता है। अत: यह सिद्धांत अभी UNDER DEVELOPMENT समझना चाहिए। क्योंकि 1781 से पूर्व भी दार्शनिक, आध्यात्मिक व गहन चिन्तन करने वाले होते रहे हैं। अत: इन प्रभावों का इकलौता कारण यूरेनस नहीं हो सकता। तथापि अन्य कारणों में एक या सहयोगी कारण अलबत्ता हो सकता है)।

अचानक दुर्भाग्य या सौभाग्य का कारक भी यूरेनस को माना गया है। मौलिक चिन्तन एवं विषय की खोज की प्रवृत्ति का कारक भी यही है। कन्या, मिथुन व कुम्भ (6, 3, 11) राशियों में यूरेनस को शुभ फल देने वाला माना गया है। शुभ स्थिति में यह जातक को बौद्धिक कार्यों, गूढ़ खोजों, आविष्कारों, विद्युत विशेषज्ञता, सार्वजनिक भवन निर्माण के कार्यों तथा लॉटरी-सट्टे आदि में सफलता दिलाता है। अशुभ होने पर यह जातक को जन्म से ही दुख भोगने को विवश कर देता है। पिता से अलगाव, जीवनसाथी से तलाक अथवा वियोग आदि दुष्परिणाम देने वाला होता है।

जन्म समय में यूरेनस वक्री हो तो जातक कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में भी विचलित नहीं होता। बुद्धि व कल्पना शक्ति प्रखर तथा सकारात्मकता एवं आशा बढ़ी हुई रहती है। वृष राशि में यह ग्रह नीच का हो जाता है। उदर रोग, हैजा, बुखार, हृदय रोग का भी कारक यही है। बिजली के उपकरण, विद्युत सामग्री, विद्युत उत्पादन तथा शेयर बाजार में तेजी-मंदी अचानक आने का सम्बन्ध भी यूरेनस से जोड़ा जाता है। सत्य की खोज तथा आविष्कारी प्रवृत्ति के गुण भी यही देता है।

नेप्च्यून—यह एक राशि में 14 वर्ष रहता है। कुंडली का एक चक्र लगाने में (राशि चक्र पूर्ण कर अपने पूर्व स्थान पर वापस लौटने में) लगभग 164 वर्ष लगा देता है। यानी जातक के जीवन में एक चक्र भी पूर्ण नहीं कर पाता। प्राय: 150 वर्षों का इस ग्रह पर किया गया अध्ययन कितना विश्वसनीय होगा—कहना कठिन है, क्योंकि 1846 में इसको खोजे जाने के बाद इस पर अध्ययन आरम्भ हुआ है। तब से अब तक इसका एक चक्र भी पूर्ण नहीं हो पाया है (जबकि औसत रूप से किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कम से कम 4-5 पीढ़ियों का तो अध्ययन किया ही जाना चाहिए)।

पाश्चात्य ज्योतिषियों के अनुसार यह एक शांत प्रकृति का सौम्य ग्रह है। अत: इसके गुण-प्रभाव बृहस्पति के समान माने गए हैं। नेप्च्यून को गहन व गुप्त

विद्याओं के अध्ययन व ज्ञान का कारक माना गया है। बड़े उद्योग, राजनीति, आध्यात्मिक कार्य, जादू-टोना औषधियों के बड़े कारखाने आदि इसी ग्रह के प्रभाव क्षेत्र में माने गए हैं।

जन्मकुंडली में यदि यह ग्रह शुभ स्थिति में हो तो सट्टे, साझे तथा जायदाद खरीदने-बेचने के कार्यों में विशेष लाभकारी रहता है। जबकि अशुभ होने पर आलस्य, क्लेश, पारिवारिक मनमुटाव, उदर के रोग एवं वैवाहिक जीवन में असंतोष रहता है। मीन, कर्क, वृश्चिक (12,4,8) राशियों में इसे शुभ फल देने वाला कहा गया है। क्योंकि मीन में इसे स्वराशि का, कर्क में उच्च राशि (जैसा कि बृहस्पति है) का माना गया है। अत: बृहस्पति के समान ही मकर राशि में इसे नीच का माना गया है। जन्म समय में इस ग्रह का वक्री होना अच्छा माना गया है। इसके प्रभाव से जीवन सात्विक, परोपकारी, आध्यात्मिक, उदार किन्तु क्रांतिकारी विचारों वाला बनता है।

प्लूटो—यह एक राशि में 21 वर्ष लगभग रहता है तथा कुण्डली का एक चक्र 242 वर्षों में पूर्ण करता है। यानी जातक के जीवन में आधा चक्र भी नहीं लगा सकता। चौथाई चक्र से जरा ही अधिक लगा सकता है।

पाश्चात्य ज्योतिषाचार्यों ने प्लूटो के गुण-स्वभाव को मंगल की भांति माना है। अत: मंगल की राशियां मेष, वृश्चिक (1,8) ही इसकी स्वराशियां मानी जाती हैं। प्लूटो पुरानी परम्पराओं, विचारों को तोड़ने का कारक है तथा शरीर व आत्मा के सम्बन्ध विच्छेदन का कारक है। दीर्घसूत्री योजनाएं, लम्बे चलने वाले गुप्त कार्य, षड्यन्त्र, विनाशक किन्तु उद्धारक कार्य भी इसी ग्रह के प्रभाव क्षेत्र में माने गए हैं। अंतरात्मा का पुनरुत्थान प्लूटो के ही प्रभाव क्षेत्र में है। गर्भाधान तथा जीवन एवं मृत्यु के गूढ़ सम्बन्धों का कारक भी प्लूटो है।

प्लूटो शुभ स्थिति में हो तो जातक महान कार्य करने में सक्षम होता है तथा ऐसा जातक इतिहास में दीर्घकाल तक प्रभाव छोड़ जाता है। खानों, भूमिगत, गुफाओं आदि से सम्बन्धित कार्य प्लूटो से जुड़े माने गए हैं। जासूस, अनुसंधानकर्त्ता, शारीरिक व मानसिक चिकित्सा का कार्य भी प्लूटो के क्षेत्र में माना गया है। प्लूटो अशुभ हो तो जातक उग्रवादी, गुप्त अपराधों में लिप्त, माफिया आदि गिरोह से जुड़ा हो सकता है।

❑❑

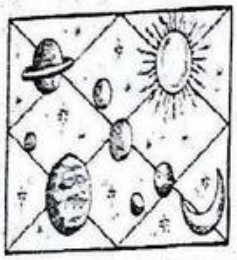

जन्मराशि व नक्षत्रों के नामाक्षर

जन्मराशि

जातक की जन्मराशि का अर्थ है कि उसके जन्म के समय चन्द्रमा किस राशि में था। इसी तरह जातक के जन्म नक्षत्र का अर्थ है कि उसके जन्म के समय चन्द्रमा आकाश के किस भाग में था।

प्रत्येक नक्षत्र के चार चरण/भाग होते हैं। हर चरण का एक वर्ण/अक्षर होता है। अत: प्रत्येक नक्षत्र के अंतर्गत चार वर्ण/अक्षर आते हैं। (एक राशि में सवा दो नक्षत्र होते हैं। यानी नक्षत्रों के नौ चरण होते हैं। दो नक्षत्रों के 4+4=8 चरण तथा तीसरे नक्षत्र का एक चरण। अत: सवा दो नक्षत्र यानी 9 चरण हुए। इसीलिए एक राशि के अन्तर्गत 9 वर्ण या अक्षर आते हैं। इन्हें आप आगे राशि प्रकरण में पढ़ेंगे। यहां आपको नक्षत्रों के अक्षर बता रहे हैं—)

नामाक्षर सारिणी

अश्विनी (चू, चे, चो, ला)	मघा (मा, मी, मू, मे)	मूल (ये, यो, भा, भी)
भरणी (ली, लू, ले, लो)	पू.फा. (मो, टा, टी, टू)	पू.आषाढ़ (भू, धा, फा, ढा)
कृतिका (अ, इ, उ, ए)	उ.फा. (टे, टो, पा, पी)	उ.आषढ़ (भे, भो, जा, जी)
रोहिणी (ओ, वा, वी, वू)	हस्त (पू, ष, ण, ठ)	श्रवण (खी, खू, खे, खो)
मृगशिरा (वे, वो, का, की)	चित्रा (पे, पो, रा, री)	धनिष्ठा (गा, गी, गू, गे)
आर्द्रा (कू, घ, ङ, छ)	स्वाति (रु, रे, रो, ता)	शतभिषा (गो, सा, सी, सू)
पुनर्वसु (के, को, हा, ही)	विशाखा (ती, तू, ते, तो)	पू.भाद्र. (से, सो, दा, दी)
पुष्य (हू, हे, हो, डा)	अनुराधा (ना, नी, नू, ने)	उ. भाद्र (इ, ष, ञ, ञ)
अश्लेषा (डी, डू, डे, डो)	ज्येष्ठा (नो, या, यी, यू)	रेवती (दे, दो, चा, ची)

नक्षत्रों का स्वामित्व

नक्षत्र	नक्षत्र स्वामी
अश्विनी, मघा, मूल	केतु
भरणी, पू.फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा	शुक्र
कृतिका, उ.फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा	सूर्य
रोहिणी, हस्त, श्रवण	चन्द्र
मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा	मंगल
आर्द्रा, स्वाति, शतभिषा	राहू
पुनर्वसु, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद	गुरु
पुष्य, अनुराधा, उत्तराभाद्रपाद	शनि
अश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती	बुध

गंडमूल नक्षत्र

केतु के (प्रथम) तीन नक्षत्र अश्विनी, मघा, मूल तथा बुध के (अंतिम) तीन नक्षत्र अश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती **गंडमूल नक्षत्र** कहलाते हैं। इन नक्षत्रों में जन्म लेने वाले जातक की मूल शांति न कराई जाए तो जातक अपराधी, हिंसक, उपद्रवी, उच्छृंखल तथा उत्पाती बन जाता है। शांति हो जाने पर चोर, डाकू, हत्यारा बनने की बजाय पुलिस या सेना में जाता है अथवा सर्जन या कसाई आदि बनता है।

नक्षत्रों के देवता

नक्षत्र	देवता	नक्षत्र	देवता
अश्विनी	दस्रौ	विशाखा	इन्द्राग्नि
भरणी	यम	अनुराधा	मित्र
कृतिका	अग्नि	ज्येष्ठा	इन्द्र
रोहिणी	ब्रह्मा	मूल	राक्षस
मृगशिरा	चन्द्र	पू. आषाढ़	जल
आर्द्रा	शिव	उ. आषाढ़	विश्वेदेवा

पुनर्वसु	अदिति	श्रवण	विष्णु
पुष्य	गुरु	धनिष्ठा	वसव
अश्लेषा	सर्प	शतभिषा	वरुण
मघा	पितर	पू. भाद्रपद	अजैकपाद
पू. फाल्गुनी	भग	उ. भाद्रपद	अहिर्बुध्न्य
उ. फाल्गुनी	अर्यमा	रेवती	पूषा
हस्त चित्रा स्वाति	सविता विश्वकर्मा वायु		

□□

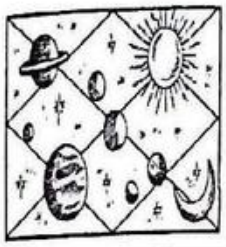

ग्रह एवं राशि : कारकत्व तथा स्वामित्व

इस अध्याय में हम ग्रहों तथा राशियों के सम्बन्धों, स्वामित्व, कारकत्व, अवस्था, स्थिति, दृष्टि, मित्रता, शत्रुता, स्वभाव, प्रकृति, लिंग, दिशा, धातु, रत्न, जाति, वर्ण, बल, प्रभाव, शक्ति, तत्त्व, गुण आदि पर विचार करेंगे। यह सब अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं तथा ज्योतिष सीखने के इच्छुकों को सदैव स्मरण रहने चाहिए। अत: हमने कुछ सरल सूत्रों की भी रचना करके उन्हें यहां संयोजित किया है। ताकि स्मरण रखने में सुविधा रहे। यह मेरा व्यक्तिगत प्रयास है जो किसी भी अन्य ज्योतिष की पुस्तक में उपलब्ध नहीं होगा।

राशियां व उनके स्वामी ग्रह

1.	मेष	मंगल
2.	वृष	शुक्र
3.	मिथुन	बुध
4.	कर्क	चन्द्र
5.	सिंह	सूर्य
6.	कन्या	बुध
7.	तुला	शुक्र
8.	वृश्चिक	मंगल
9.	धनु	गुरु
10.	मकर	शनि
11.	कुम्भ	शनि
12.	मीन	गुरु

यहां पाठक ध्यान दें कि सूर्य व चन्द्र को एक-एक राशि का स्वामित्व मिला है। जबकि शेष सभी को दो-दो राशियों का (राहू-केतु छायाग्रह हैं अत: उन्हें किसी भी राशि का स्वामित्व नहीं दिया गया है)।

4. बुध व चन्द्र इन शान्त व स्त्रैण स्वभाव के ग्रहों की ही मूलत्रिकोण राशि सम संख्या में है। शेष सभी ग्रहों की मूलत्रिकोण राशि विषम संख्या में है।

5. सभी ग्रहों की मूलत्रिकोण राशि उनकी स्वराशि भी है, पर चन्द्रमा 'अजातशत्रु' है। अत: दूसरे ग्रह की राशि में भी मूलत्रिकोण का हो जाता है। परन्तु 15 दिन बढ़ता व 15 दिन घटता है। अत: सामर्थ्य आधी होने से उसकी मूलत्रिकोण राशि (2), उसकी स्वराशि (4) से आधी है।

6. मंगल व गुरु, शुक्र व बुध तथा सूर्य व शनि की उच्च व नीच राशियां क्रमश: एक-दूसरे के विपरीत हैं। मंगल 4 में नीच 10 में उच्च, गुरु 10 में नीच 4 में उच्च, शुक्र 12 में उच्च 6 में नीच का होता है, बुध 6 में उच्च 12 में नीच का होता है। इसी प्रकार शनि 7 में उच्च व 1 में नीच का तो सूर्य 1 में उच्च व 7 में नीच का होता है। इन तथ्यों को ध्यान में रखेंगे तो मूलत्रिकोण तथा उच्च-नीच राशियों को भूलेंगे नहीं।

विशेष—इन सब तथ्यों को सूत्र रूप में मैंने रचा भी है। (संस्कृत का पूर्ण ज्ञान न होने से व्याकरण दोष तो हो सकता है) किन्तु याद रखने के लिए 2 लाइनों में सारी बातें आ गई हैं। अत: अच्छा फार्मूला है—

स्मरण सूत्र—

एकौ आत्मा द्वैत मनो दशेन्द्रिय षष्ठ नपुंसकम्।
पंगु, अजातशत्रु, गुरु भार्गव त्रिजटा सिंहिकासुतम्॥
षष्ठ योगे नीच लभते, केतवे राहुस्य विलोमकम्।
उच्च शुभं, नीच अशुभं, इति फलत: सामान्यतम्॥

अर्थात् आत्मा एक है (आत्मा का कारक सूर्य एक राशि में उच्च का है)। मन दो है (चेतन व अचेतन मन। मन का कारक चन्द्र दो/वृष राशि में उच्च का है)। इन्द्रियां दस हैं (5 ज्ञानेन्द्रिय, 5 कर्मेन्द्रिय। इन्द्रियां ऊर्जा से कार्य करती हैं तथा मांसपेशियों से बनती हैं। अत: ऊर्जा व मांसपेशियों का कारक मंगल 10 राशि में उच्च का है)। नपुंसक 6 प्रकार के हैं (आयुर्वेद में नपुंसक को 'षण्ढ' कहते हैं। इनके छ: प्रकार हैं—हस्तयोनी, नासायोनि, मुखयोनि, त्वक्योनि, शब्दयोनि तथा कुम्भीक/गुदयोनि नपुंसक)। स्वयं बुध भी नपुंसक ग्रह है। अत: 6 में ही उच्च का है।

पंगु (अपाहिज यानी शनि—जो लंगड़ा है उसको पंगु कहते हैं) सूर्य का विपरीत है। चन्द्रमा अजातशत्रु है अत: उसका कोई विपरीत/विरोधी नहीं है। गुरु मंगल का विपरीत है। भार्गव (शुक्र) बुध का विपरीत है तथा सिंहिका पुत्र (राहू) त्रिजटा (तीन जटा वाली एक राक्षसी का नाम) अर्थात् 3 राशि में उच्च का माना गया है। यदि उच्च राशि में 6 जोड़ दें तो नीच राशि प्राप्त हो जाती है। (जैसे—

सूर्य 1 में उच्च है तो 1+6=7 में नीच है। गुरु 4 में उच्च है तो 4+6=10 में नीच है आदि) और केतु राहू का विपरीत है।

(मतलब यह कि पहली पंक्ति में सूर्य, चन्द्र, मंगल तथा बुध की जो उच्च राशियां बताई गई है। उनमें 6 जोड़ें तो इन ग्रहों की नीच राशि ज्ञात हो जाएंगी। विपरीत होने से शनि सूर्य की उच्च राशि में नीच का तथा नीच राशि में उच्च का हो जाएगा। चन्द्रमा अजात शत्रु है अत: उसका कोई विपरीत नहीं है। परन्तु मंगल का विपरीत गुरु तथा बुध का विपरीत शुक्र है। अत: मंगल व बुध की उच्च राशियां क्रमश: गुरु व शुक्र की नीच राशियां बन जाएंगी। जबकि मंगल व बुध की नीच राशियां क्रमश: गुरु व शुक्र की उच्च राशियां बन जाएंगी। राहू तीसरी राशि में उच्च का है तो 3+6= 9 राशि में नीच का हो जाएगा और राहू का विलोम केतु 9 में उच्च व 3 में नीच का हो जाएगा।) सामान्यत: उच्च राशि के ग्रह शुभ फल देते हैं तथा नीच राशि के अशुभ फल देते हैं—यह इस बनाए गए सूत्र का अर्थ हुआ।

उच्च-नीच का कारण—उच्च व नीच राशियों में 180° का अंतर है। राहू व केतु सदा एक-दूसरे से 180° पर रहते हैं। अत: जो भी किसी ग्रह की उच्च राशि है, उससे सातवीं उस ग्रह की नीच राशि बन जाती है। (180° का अर्थ है ऐन विपरीत स्थिति। अत: उच्च राशि में जो शक्तिशाली है, वह नीच राशि में शक्तिहीन हो जाएगा। यह इसका तर्क है।)

विशेष—राहू-केतु किसी भी राशि के स्वामी नहीं हैं। फिर भी वृष राशि राहू की स्वराशि तथा वृश्चिक राशि केतु की स्वराशि मानी जाती है। (इन राशियों में ये अपनापन महसूस करते हैं। क्योंकि वृष शुक्र की राशि है और शुक्र दैत्यगुरु है तथा राहू दैत्य है। दूसरी ओर वृश्चिक मंगल की राशि है। मंगल क्रूर व कठोर है। केतु निर्मम व निर्मोही है तथा मंगल के समान फल देने वाला है।) तथा राहू को 3 (मिथुन) में उच्च का माना गया है जबकि केतु को 9 (धनु) में उच्च का मानते हैं। अत: इनसे ऐन विपरीत (180° पर आने वाली) राशियां क्रमश: 9 व 3 राहू, केतु की नीच राशियां हो गईं। क्योंकि ये दोनों सदा 180° पर रहते हैं। अत: एक की उच्च राशि दूसरे की नीच राशि है तथा दूसरे की उच्च राशि पहले की नीच राशि है।

ग्रहों की उच्चतम स्थिति—हमें ग्रहों की उच्च राशियां तो पता चल गईं। परन्तु बहुत-सी राशियां उच्च तथा मूल त्रिकोण दोनों हैं। ऐसे में यह कैसे तय किया जाए कि ग्रह स्वराशि में है, मूल त्रिकोण राशि में है अथवा उच्च राशि में है? जैसे चन्द्रमा के अलावा शेष सभी ग्रहों की मूल त्रिकोण राशि उनकी स्वराशि भी है तथा चन्द्र व बुध की उच्च राशि उनकी मूल त्रिकोण राशि भी है। ऐसे में ग्रह की स्थिति क्या है? वह शक्तिशाली है, अतिशक्तिशाली है या शक्तिहीन है? यह निर्णय राशि के आधार पर कैसे लें?

इसके लिए हमें गृह के अंश देखने होंगे। हम जानते हैं कि एक राशि/एक भाव 30° का है (अत: 1° से 30° तक एक ही भाव या राशि मानी जाती है)। देखना होगा कि कोई ग्रह किसी राशि या भाव को कितना पार कर चुका है? अथवा कितने अंशों पर है। तभी निर्णय हो पाएगा। अत: ग्रहों के अति उच्च राशि के अंशों की जानकारी लेनी होगी।

उच्चांश व नीचांश—सूर्य मेष राशि में 10° तक उच्च का, तुला में 10° तक नीच का होता है। इसी तरह चन्द्रमा वृष में 3° तक उच्च का होता है, उसके बाद वह मूल त्रिकोण में माना जाएगा न कि उच्च में। वृश्चिक में 3° तक नीच का होता है। मंगल मकर में 28° तक उच्च का, कर्क में 28° तक नीच का होता है। बुध कन्या में 15° तक उच्च का (इसके बाद मूलत्रिकोण राशि में माना जाएगा) तो मीन में 15° तक नीच का होता है। गुरु कर्क में 5° तक उच्च का तो मकर में 5° तक नीच का होता है। शुक्र मीन में 27° तक उच्च का, कन्या में 27° तक नीच का होता है। शनि तुला में 20° तक नीच का तथा मेष में 20° तक नीच का होता है। राहू मिथुन में 15° तक उच्च का तथा धनु में 15° तक नीच का होता है। केतु इसके विपरीत 15° में उच्च व नीच का होता है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कोई ग्रह अपनी उच्च राशि में जितने अंशों पर अति उच्च का होता है, उतने ही अंशों पर अपनी नीच राशि में अति नीच का होता है। क्योंकि ऐन विपरीत स्थिति 180° पर ही होती है। इन अंशों को सरलता से याद रखने के लिए भी मैंने एक अंशसूत्र की रचना की है। पाठकों की सुविधा के लिए यहां प्रस्तुत कर रहा हूं।

अंश स्मरण सूत्र

दशमत्रयो अष्टविंश पंचादश पंचमम्।
सप्तविंश विंश पंचादश पंचादशम्॥

अर्थात् 10-3-28-15-5
27-20-15-15

ये क्रमश: सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहू, केतु के उच्च व नीचांश हैं।

राशियों के सहित अंश याद रखने के लिए 'अंक सूत्र' इस प्रकार बनाया जा सकता है—

	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहू	केतु
उच्चांश									
	1/10	2/3							

राहू—वृष के 20° तथा मिथुन के 15° तक राहू की उच्च राशि है।
केतु—वृश्चिक के 20° तथा धनु के 15° तक केतु की उच्च राशि है।
(यानी सूर्य 1 राशि में 10° उच्च व 7 राशि में 10° नीच होता है)

मूल त्रिकोणांश—ग्रह मूल त्रिकोण राशि में है अथवा स्वराशि में? यह ज्ञान भी हमें अंशों द्वारा ही होता है। नीचे दर्शाई गई तालिका द्वारा इसे सरलता से समझा जा सकता है—

ग्रह	मूल त्रिकोण अंश	स्वराशि अंश
सूर्य	(5) सिंह के 20° तक	(5) सिंह के 20° से आगे
चन्द्र	(2) वृष के 4° से 30° तक	(4° से नीचे चंद्र उच्च का होगा)
मंगल	(1) मेष के 12° तक	(1) मेष के 12° से आगे
बुध	(6) कन्या के 16° से 25° तक	(6) कन्या के 16° से पूर्व 25° के बाद
गुरु	(9) धनु के 20° अंश तक	(9) धनु के 20° के बाद
शुक्र	(7) तुला के 20° तक	(7) तुला के 20° से आगे
शनि	(11) कुम्भ के 20° तक	(11) कुम्भ के 20° आगे
राहू	(11) पूरी 0 से 30° तक (कुम्भ)	
केतु	(5) पूरी 0 से 30° तक (सिंह)	

□□

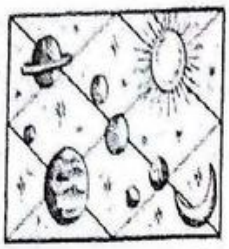

राशियां : गुण, स्वभाव, रोगादि विस्तार

राशियों के अपने गुण, स्वभाव, प्रकृति, जाति, लिंग आदि हैं। इनको ध्यान में रखे बिना सटीक फलादेश सम्भव नहीं है। अत: इन सबका याद रहना आवश्यक है। पाठकों की सुविधा के लिए विवरण के बाद प्रमुख तथ्यों को स्मरण रखने के संक्षिप्त सूत्र भी प्रस्तुत करूंगा। यहां भी सुविधा व सरलता के लिए समस्त विवरण तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत कर रहा हूं।

राशियों की जाति

ब्राह्मण—कर्क, वृश्चिक, मीन (4, 8, 12)।

क्षत्रिय—सिंह, मेष, धनु (5, 1, 9)।

वैश्य—वृष, कन्या, मकर (2, 6, 10)।

शूद्र—मिथुन, तुला, कुम्भ (3, 7, 11)।

राशियों के लिंग

पुरुष—मेष-मिथुन-सिंह-तुला-धनु-कुम्भ।

स्त्री—वृष-कर्क-कन्या-वृश्चिक-मकर-मीन।

(पुरुष में विषम संख्या—1, 3, 5, 7, 9, 11), (स्त्री में सम संख्या-2, 4, 6, 8, 10, 12)

राशियों की प्रकृति (त्रिदोष)

कफ—1, 4, 7, 10 (मेष, कर्क, तुला, मकर)।

पित्त— 2, 5, 8, 11 (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ)।

वात (वायु)—3, 6, 9, 12 (मिथुन, कन्या, धनु, मीन)।

राशियों के स्वभाव

चर—1 (मेष) 4 (कर्क) 7 (तुला) 10 (मकर)।

स्थिर—2 (वृष) 5 (सिंह) 8 (वृश्चिक) 11 (कुम्भ)।

द्विस्वभाव—3 (मिथुन) 6 (कन्या) 9 (धनु) 12 (मीन)।

राशियों की साध्यता

साध्य—1, 4, 7, 10 (मेष, कर्क, तुला, मकर)।

असाध्य—2, 5, 8, 11 (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ)।

कष्टसाध्य—3, 6, 9, 12 (मिथुन, कन्या, धनु, मीन)।

राशियों के तत्त्व

आकाश/वायु—मिथुन, तुला, कुम्भ (3, 7, 11)।

जल—कर्क, वृश्चिक, मीन (4, 8, 12)।

अग्नि—मेष, सिंह, धनु (1, 5, 9)।

पृथ्वी—वृष, कन्या, मकर (2, 6, 10)।

राशियों की दिशाएं

पूर्व—1 (मेष), 5 (सिंह), 9 (धनु)।

पश्चिम—4 (कर्क), 8 (वृश्चिक), 12 (मीन)।

उत्तर—3 (मिथुन), 7 (तुला), 11 (कुम्भ)।

दक्षिण—2 (वृष), 6 (कन्या), 10 (मकर)।

राशियों के रत्न एवं धातु

मेष—मूंगा, तांबा, सोना।

वृष—हीरा, चांदी, ज़र्किन।

मिथुन—पन्ना, चांदी, फिरोजा।

कर्क—मोती, चांदी, चन्द्रमणि।

सिंह—माणिक्य, सोना, लाल।

कन्या—पन्ना, चांदी, अकीक।

तुला—हीरा, रजत, ज़र्किन।

वृश्चिक—मूंगा, तांबा, सोना।

धनु—पुखराज, सोना, सुनहला।

मकर—नीलम, लोहा, नीली।

कुम्भ—नीलम, लोहा, नीली, पंचधातु (गनमैटल)।

मीन—पुखराज, सोना, अष्टधातु, पीली।

राशियों के उदय

पृष्ठोदयी—मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर (1, 2, 4, 9, 10)।

शीर्षोदयी—सिंह, कन्या, मिथुन, तुला, वृश्चिक, कुम्भ (5, 6, 3, 7, 8, 11)।

उभयोदयी—केवल मीन राशि (12)।

विशेष—1. शीर्षोदयी राशियां शीर्ष से उदित होती हैं। पृष्ठोदयी—पृष्ठ/पीठ से उदित होती हैं। उभयोदयी—दोनों से उदित होती हैं।

2. इनकी आवश्यकता फलादेश में विशेषकर इसलिए होती है कि पृष्ठोदयी राशि में बैठे पापग्रह अधिक अशुभ हो जाते हैं तथा शुभ ग्रह मध्यम हो जाते हैं। जबकि शीर्षोदयी राशियों में शुभ ग्रह अधिक शुभ हो जाते हैं तथा पापग्रह मध्यम हो जाते हैं। उभयोदय राशि में ग्रह अपने स्वभावानुसार ही फल देते हैं।

राशियों के बल

रात्रिबली—1, 2, 3, 4, 9, 10 (मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु, मकर)।

दिवसबली—5, 6, 7, 8, 11, 12 (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ, मीन)।

रात्रिबली राशियों का बल रात्रि में बढ़ता है। दिवसबली राशियों का बल दिन में बढ़ता है।

राशियों की प्रकृति (गुणावगुण)

अपूर्ण व क्रूर—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु, कुम्भ (विषम)।

पूर्ण व सौम्य—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन (सम)।

राशियों का आकार

ह्रस्व राशियां—मेष, वृष, कुम्भ, मीन (1, 2, 11, 12)।

मध्यम राशियां—मिथुन, कर्क, धनु, मकर (3, 4, 9, 10)।

दीर्घ राशियां—सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक (5, 6, 7, 8)।

राशियों के रंग तथा स्थान (निवास)

मेष—लाल—धातु, रत्न तथा भूमि में निवास।

वृष—सफेद—पर्वत शिखर पर निवास।

मिथुन—हरा—द्यूतगृह, रतिगृह में वास।

कर्क—लाल सफेद—झील, सरोवर, तालाब, वापी आदि में वास।

सिंह—सफेद/धूम्र—गुफा, वन एवं पर्वत में वास।

कन्या—विविध/पांडु—क्रीड़ास्थल, मनोरंजन स्थल में वास।

तुला—नीला/अनेक—बाज़ार, मंडी, विक्रय केन्द्र में वास।

वृश्चिक—सुनहरा/काला—बिल, छोटी सुरंग एवं विष में वास।

धनु—पीला/सुनहरा—अस्तबल/घुड़साल में वास।

मकर—पीला/पिंगल—सरिता, नदी, नहरों में वास।

कुम्भ—चितकबरा/भूरा—जलपात्र रखने के स्थान पर वास।

मीन—सफेद भूरा—समुद्र या बड़ी नदियों में वास।

राशियों के अंग/स्थान

मेष-मस्तक, **वृष**-मुख, **मिथुन**-स्तनमध्य, **कर्क**-हृदय, **सिंह**-उदर, **कन्या**-कटि, **तुला**-पेड़ू, **वृश्चिक**-उपस्थ, **धनु**-उरु, **मकर**-भुजाएं, **कुम्भ**-पिंडलियां, जांघें, **मीन**-पैर।

राशियों के वर्ण/अक्षर

1. मेष—चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, अ,

2. वृष—ई, उ, ऐ, ओ, वा, वी, वू, वे, वो,

3. मिथुन—का, की, कू, घ, ङ, छ, के, को, हा,

4. कर्क—ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो,

5. सिंह—मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे,

6. कन्या—टो, पा, पू, पी, ष, न, ठ, पे, पो,

7. तुला—रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू, ते,

8. वृश्चिक—तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू,

9. धनु—ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा, भे,

10. मकर—भो, जा, जी, खी, खू, खे, खो, गा, गी,

11. कुम्भ—गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो, दा,

12. मीन—दी, दू, थ, झ, दे, ञ, दो, चा, ची,

(प्रत्येक राशि में 9 वर्ण होते हैं। राशियां 12 हैं अत: 9×12=108 वर्ण हुए)।

नोट—मन्त्र जाप में 108 की संख्या का महत्त्व है। 27 नक्षत्र हैं। प्रत्येक नक्षत्र में 4 चरण/वर्ण हैं। अत: 27×4=108 वर्ण हुए। एक राशि में सवा दो नक्षत्र हैं। अत: 4+4+1=9 वर्ण एक राशि में हैं।

राशियों का रोगों पर अधिकार

मेष—सिर, दिमाग, माथा, पित्त—इनसे सम्बन्धित रोग।

वृष—कंठनली, टांसिल, चेहरा, मुंह, आंख—इनसे सम्बन्धित रोग।

मिथुन—कन्धे, भुजा, कान, श्वासनली, वायु—इनसे सम्बन्धित रोग।

कर्क—छाती, फेफड़े, कफ़—इनसे सम्बन्धित रोग।

सिंह—उदर, हृदय, पित्त—इनसे सम्बन्धित रोग।

कन्या—गुर्दे, आंत, वायु—इनसे सम्बन्धित रोग।

तुला—जननेन्द्रिय, मूत्रेन्द्रिय, गर्भाशय—इनसे सम्बन्धित रोग।

वृश्चिक—अण्डकोष, गुदा, पित्त—इनसे सम्बन्धित रोग।

धनु—नितम्ब, यकृत, जांघों का ऊपरी भाग, पीठ—इनसे सम्बन्धित रोग।

मकर—घुटने तथा निचली जांघें, वायु—इनसे सम्बन्धित रोग।

कुम्भ—पिंडली तथा टांग का निचला भाग, वायु—इनसे सम्बन्धित रोग।

मीन—तलवे, एड़ी, टखना आदि व इनसे सम्बन्धित रोग।

विशेष—रोग निर्धारण के समय मात्र राशियों पर ही ध्यान देना ज़रूरी नहीं है बल्कि ग्रहों व भावों पर भी पूर्ण विचार आवश्यक है। साथ ही कारक की स्थिति व दशा भी विचारनी चाहिए।

राशियों की संज्ञा

धातु—मेष, कर्क, तुला तथा मकर राशि धातु संज्ञक है।

मूल—वृष, सिंह, वृश्चिक व कुम्भ राशि मूल संज्ञक है।

जीव—मिथुन, कन्या, धनु व मीन राशि जीव संज्ञक है।

स्मरणीय संक्षिप्त सूत्र

तेरह सत्तावन नौ ग्यारह, चौबीस अड़सठ दस बारह।
ऊनी पुरुषौ क्रूर विषम, पूरी सौम्यौस्त्री सम॥

स्पष्ट—1 से 12 तक राशियां होती हैं। अत: जहां सूत्र में 12 से अधिक संख्या मिले, वहां इकाई व दहाई को अलग कर लें। जैसे 'तेरह' का अर्थ होगा 1 और 3

उपरोक्त सूत्र से सहज ही 8 तथ्य याद हो जाते हैं—1, 3, 5, 7, 9 तथा 11 यह प्रथम खण्ड की राशियां हैं। 2, 4, 6, 8 10 और 12 यह दूसरे खण्ड की राशियां हैं। नीचे की पंक्ति से स्पष्ट होता है कि प्रथम खण्ड की छ: राशियां—ऊनी (अपूर्ण), पुरुष, क्रूर तथा विषम हैं। दूसरे खण्ड की छ: राशियां—पूर्ण, सौम्य, स्त्री व सम हैं।

मस्तक मुख भुजा हृदय उदर कटि पेड़ु।
उपस्थो गुदा नितम्ब उरू गुल्फ पैर॥

स्पष्ट—इस सूत्र से राशियों का शरीर पर अधिकार सहज ही समझ आ जाता है। इसमें स्पष्ट है कि पहली राशि का मस्तक पर, दूसरी का मुख पर, तीसरी का भुजा पर, चौथी का हृदय पर, पांचवीं का उदर पर, छठी का कमर पर, सातवीं का पेड़ु पर, आठवीं का उपस्थ व गुदा पर, नौवीं का नितम्ब पर, दसवीं का जांघों पर, ग्यारहवीं का घुटनों से नीचे तथा बारहवीं का पैरों पर अधिकार होता है।

एक दो दशेक दो पांच छ: सात आठ।
ह्रस्व दीर्घ मध्य राशि तीन चार नौ दस॥

स्पष्ट—1 तथा 2 और (दस + एक, दस + दो यानी)—11, 12 तथा 5, 6,

7, 8 ये दो खंड हुए (पहले में एक दो दशेक दो है। यानी 1, 2, 11, 12 तथा दूसरे खंड में 5, 6, 7, 8 है)। पहले खंड की ह्रस्व राशि हैं, दूसरे खंड की दीर्घ। जो बच गई वो मध्यम राशि हैं। यानी-3, 4, 9, 10।

BKSV-4812-159-3711-2610-NEWS/WFAE

इस सूत्र को दूसरे ढंग से ऐसे कह सकते हैं—

अड़तालीसबारा—एक सौ उनसठ

सैंतीग्यारा-छब्बीदस

ब्राक्षशूवै-जआनभू-उपूपद।

स्पष्ट—पंजाबी-हिन्दी में बनाया गया यह स्मरण सूत्र भले ही अटपटा लगे, किन्तु इस एक सूत्र से आपको राशियों की दिशाएं, जातियां तथा तत्त्व तीनों याद हो जाएंगे। वह भी खेल-खेल में। (कहने की ज़रूरत नहीं कि 48 का मतलब 4 व 8 है। इसी प्रकार आगे भी उनसठ का अर्थ 5 व 9 होगा। सैंतीस तथा छब्बीस का क्रमश: 3-7 एवं 2-6 होगा)

इस सूत्र में राशियों के 4 खण्ड हैं। जैसाकि अंक संख्या में लिखे पहले ढंग से साफ पता चलता है। BKSV या 'ब्राक्षशूवै' का अर्थ है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य। इसी प्रकार NEWS या 'उपूपद' का अर्थ है—उत्तर (NORTH), पूर्व (EAST), पश्चिम (WEST) एवं दक्षिण (SOUTH) और WFAE या 'जआन भू' का अर्थ है जल (WATER), अग्नि/आग (FIRE), नभ/वायु (AIR) तथा पृथ्वी (EARTH) या भूमि।

आपको केवल इन खण्डों का एक-एक अक्षर क्रमश: अंकों के एक-एक खण्ड से जोड़ना होगा। इससे सरलता से याद हो सकेगा कि—

4, 8, 12—राशियां ब्राह्मण, उत्तर दिशा तथा जल राशि हैं।

1, 5, 9—राशियां क्षत्रिय, पूर्व दिशा व अग्नि राशि हैं।

3, 7, 11—राशियां शूद्र, पश्चिम दिशा व वायु राशि हैं।

2, 6, 10—राशियां वैश्य, दक्षिण दिशा व भूमि राशि है।

, 25811, 36912-M-D, S-M, D-J

इस अकसूत्र को शब्दों में भी अभिव्यक्त कर सकते हैं—

M¹ सैंतालीदस धातु S² अठावन ग्यारा मूल।
D³ उनत्तर बारह जीव, राशिस्वभाव संज्ञा न भूल॥

स्पष्ट—M¹ सैंतालीदस का अर्थ है कि MOVABLE (चर) राशियां—1, 4, 7, 10 हैं। इसी प्रकार S-2 का अर्थ स्टेबल (STABLE) या स्थिर राशियां हैं—जो-2, 5, 8, 11 हैं तथा D³ यानी ड्वेल (द्विस्वभाव राशियां—3,6,9,12 हैं। इनमें

प्रथम खंड की संज्ञा 'धातु' है। दूसरे खंड की 'मूल' है तथा तीसरे खंड की संज्ञा 'जीव' है—यह तथ्य इस सूत्र से याद होते हैं।)

ला स ह गु सिलेटी हल्का, विविधपांडु ओ नीलानेका।
चमककृष्ण ओ पीतसुनहला, पिंगल विचित्र ओ भूराश्वेत॥

स्पष्ट—यह सूत्र राशियों के रंग याद रखने में सुविधा देता है। यानी 1 राशि लाल, सफेद, 3 हरा, 4 गुलाबी, 5 हल्का सिलेटी, 6 विविध पांडु, 7 नीला व अनेक, 8 चमकीला काला, 9 पीला सुनहरा, 10 पिंगल, 11 विचित्र/चितकबरा तथा 12 राशि का रंग सफेद भूरा है।

उपरोक्त 6 सूत्रों में राशियों के सभी स्मरणीय घटक मौजूद हैं। विशेषकर 1, 4 तथा 5 सूत्र के फलित में विशेष उपयोगी घटक सिमटे हैं, जिन्हें तीन सूत्र याद करके आसानी से ध्यान में रखा जा सकता है। अब हम राशि प्रकरण को यहीं समाप्त करेंगे और ग्रहों की विस्तृत ज्योतिषीय उपयोगी जानकारी प्राप्त करेंगे।

□□

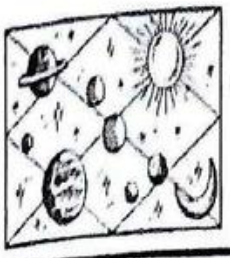

ग्रह : गुण, स्वभाव, रोगादि विस्तार

ग्रहों के वैज्ञानिक परिचय में आप जान चुके हैं कि जो ग्रह सूर्य से जितना अधिक दूर होता है, उसकी भ्रमण गति उतनी ही अधिक होती है (चन्द्र, राहू और केतु सूर्य की परिक्रमा नहीं करते)। किन्तु ज्योतिष में पृथ्वी को केन्द्र माना जाता है। अत: पृथ्वी के सबसे निकट चन्द्र व सबसे दूर शनि है। इस गणित से प्रधान नवग्रहों की औसत भ्रमण गति इस प्रकार है—

ग्रहगति (औसत)

सूर्य—एक अंश प्रतिदिन। एक राशि या 30° को पार करने में तीस दिन (एक सौर मास)।

चन्द्र—एक राशि पार करने में सवा दो दिन (दो दिन तथा 6 घंटे)।

मंगल—एक राशि पार करने में डेढ़ मास।

बुध—एक राशि पार करने में सत्ताईस दिन।

गुरु—एक राशि पार करने में एक वर्ष (लगभग)।

शुक्र—एक राशि पार करने में एक मास (लगभग)।

शनि—एक राशि पार करने में 30 महीने/ढाई साल।

राहू-केतु—एक राशि पार करने में 18 महीने/डेढ़ साल।

ग्रहों की चाल

1. सूर्य एवं चंद्र **मार्गी** ग्रह हैं। ये कभी भी वक्री नहीं होते। जो अपने स्वाभाविक परिक्रमा पथ पर आगे को गति करता है वह मार्गी कहा जाता है।

2. राहू व केतु **वक्री** ग्रह हैं। ये कभी भी मार्गी नहीं होते (क्योंकि सूर्य व चन्द्र के शत्रु हैं। अत: उनसे ऐन विपरीत स्वभाव के हैं)। जो अपने परिक्रमा पथ पर आगे को न बढ़कर पीछे की ओर (उलटा) गति करता है। वह वक्री कहा जाता है।

3. अन्य सभी ग्रह कभी मार्गी तो कभी वक्री होते रहते हैं। प्राय: जब कोई ग्रह सूर्य के निकटतम (अपने परिक्रमा पथ पर) पहुंच जाता है तब वक्री हो जाता है। किन्तु कुछ समय के लिए ही। फिर से मार्गी हो जाता है। ग्रह कभी-कभी **अतिचारी** या **मन्द** भी हो जाते हैं। यानी अपनी औसत/स्वाभाविक गति से अधिक तेज या अधिक धीरे भी कुछ काल के लिए चलते हैं।

विशेष—जन्म के समय कौन-सा ग्रह 'वक्री' था और कौन-सा 'मार्गी' था? यह जानना फलादेश की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है (पंचांग से यह जानकारी मिल जाती है)। जन्म समय में जो ग्रह 'मार्गी' होता है, वह जीवनभर 'मार्गी ग्रह' के रूप में फल देता है तथा जो उस समय 'वक्री' है, वह जीवनभर 'वक्री ग्रह' के रूप में ही फल देता है (भले ही गोचर में वह 'वक्री' या 'मार्गी' हो जाए)। अशुभ ग्रहों का 'वक्री' होना और भी खराब हो जाता है। जबकि शुभ ग्रह 'वक्री' होकर और भी अच्छे हो जाते हैं—यह एक सामान्य नियम है।

ग्रहों का काल स्वामित्व

काल	ग्रह स्वामित्व
अयन (6 मास)	सूर्य
मुहूर्त (48 मिनट)	चन्द्र
अहोरात्र दिवस (24 घंटे)	मंगल
ऋतु (2 मास)	बुध
मास (30 दिन)	गुरु
पक्ष (15 दिन)	शुक्र
वर्ष (12 मास)	शनि

शुभ ग्रह—गुरु, शुक्र, बुध, चन्द्र (पूर्वोत्तर शुभ)। (गुरु व शुक्र सदैव शुभ होते हैं। बुध अकेला हो और अस्त न हो तो शुभ होता है। चन्द्रमा कृष्ण पक्ष या अमावस का न हो तो शुभ होता। यह सामान्य नियम है।)

अशुभ ग्रह—राहू, शनि, मंगल, सूर्य (पूर्वोत्तर अशुभ)। यह एक सामान्य नियम है।

ग्रहों के तत्त्व, दिशा, रस, अवस्था एवं त्रिदोष (प्रकृति)

ग्रह	तत्त्व	दिशा के स्वामी	अवस्था	रस	त्रिदोष
सूर्य	अग्नि	पूर्व दिशा	वृद्ध	कटु	पित्त
चन्द्र	जल	वायव्य दिशा	प्रौढ़	नमकीन	वात कफ
मंगल	अग्नि	दक्षिण दिशा	युवा	तिक्त	पित्त
बुध	पृथ्वी	उत्तर दिशा	बाल	मिश्रित	वातपित्त कफ
गुरु	आकाश	ईशान दिशा	वृद्ध	मीठा	कफ
शुक्र	जल	आग्नेय दिशा	प्रौढ़	खट्टा	वातकफ
शनि	वायु	पश्चिम दिशा	वृद्ध	कषाय	वायु
राहू		नैर्ऋत्य दिशा	वृद्ध		
केतु					

ग्रहों के रंग, जाति, लिंग व आकार

ग्रह	रंग	जाति	लिंग	आकार
सूर्य	रक्तश्याम	क्षत्रिय	पुरुष	वर्ग/चौकोर
चन्द्र	शुभ्र श्वेत	वैश्य	स्त्री	
मंगल	रक्तवर्ण	क्षत्रिय	पुरुष	
बुध	हरितवर्ण	वैश्य	नपुंसक/उभयलिंगी	
गुरु	गौरपीत वर्ण	ब्राह्मण	पुरुष	
शुक्र	शुभ्रश्वेत	ब्राह्मण	स्त्री	
शनि	कृष्णश्याम वर्ण	शूद्र	स्त्री/नपुंसक	
राहू	नीलवर्ण	म्लेच्छ		
केतु	विचित्र वर्ण	अन्त्यज		

ग्रहों का भाव कारकत्व

सूर्य—प्रथम भाव का पूर्ण कारक, दशम भाव का प्रथम सहयोगी कारक तथा नवम भाव का सहयोगी कारक।

चंद्रमा—केवल चतुर्थ भाव का ही पूर्ण कारक।

मंगल—तृतीय, षष्ठ भावों का पूर्ण कारक।

बुध—चतुर्थ, सप्तम व दशम भावों का सहयोगी कारक।

गुरु—द्वितीय, पंचम व एकादश भावों का पूर्ण कारक, नवम भाव का प्रथम कारक तथा दशम भाव का सहयोगी कारक।

शुक्र—सप्तम भाव का पूर्ण कारक व द्वादश भाव का सहयोगी कारक।

शनि—अष्टम व द्वादश भावों का पूर्ण कारक तथा षष्ठ व दशम भावों का सहयोगी कारक।

राहू व केतु—दोनों ही ग्रह द्वादश भाव के सहयोगी कारक।

ग्रहों के शारीरिक अंगों व रोगों पर अधिकार

सूर्य—आत्मा, सिर, मुख, दायां नेत्र, हृदय। सिरदर्द, ज्वर, मन्ददृष्टि, हृदय रोग, पाचन, पित्त, जलन आदि।

चन्द्र—मन, कण्ठ, हृदय, बायां नेत्र, फेफड़े। निमोनिया, जुकाम, क्षयरोग, जलोदर, मानसिक रोग, दृष्टिमंद आदि।

मंगल—वल, वक्ष, पीठ, कंधे, भुजाएं, मांसपेशियां, रक्त। जलन, पित्त रोग, मांसपेशियों के रोग, क्षत आदि।

शुक्र को आचार्य होने के नाते सम्मान प्रदर्शन व 'उच्चता' के लिए अपनी स्वराशि प्रदान की है। अत: गुरु की ओर से शुक्र 'सम' ही होना चाहिए।

परन्तु यह भी सत्य है कि आखिरकार दोनों ही विरोधी दलों के मंत्री/आचार्य हैं। अत: उनके स्वभाव में विरोध के भाव तो रहने ही चाहिए। भले ही अन्य ग्रहों की अपेक्षा कम हों। ऐसा ही कुंडलियों के अध्ययन में अनुभव में भी आता है।

2. पाठक 'नैसर्गिक मैत्री चक्र' के आंकड़ों से भ्रम में न पड़ें। क्योंकि स्थूल रूप से कुछ स्थानों पर उनको विरोधाभास हो सकता है। उदाहरण के लिए—चन्द्र के आगे बुध 'मित्र' रूप में अंकित है, जबकि बुध के आगे चन्द्र 'शत्रु' रूप में। जहां कहीं भी ऐसा विरोध मिले तो उससे भ्रमित न हों। इसका अर्थ यह है कि बुध तो चन्द्र को अपना शत्रु मानता है, परन्तु चन्द्रमा बुध को अपना शत्रु नहीं मानता। ऐसा ही अन्य स्थानों पर समझें।

3. चन्द्रमा को 'अजातशत्रु' कहा जाता है। क्योंकि कोई भी ग्रह उसका शत्रु नहीं है। एक मात्र चन्द्रमा को ही यह गौरव प्राप्त है। यद्यपि राहू-केतु चन्द्र के आगे 'शत्रु' रूप में अंकित हैं। परन्तु वे मूलत: ग्रह नहीं हैं। वे 'छायाग्रह' हैं। अन्यथा मूल ग्रहों में से चन्द्रमा का कोई भी शत्रु नहीं है। अत: पाठक भ्रमित न हों कि एक स्थान पर चंद्र को 'अजातशत्रु' कह रहे हैं, जबकि दूसरे स्थान पर राहू व केतु को चन्द्रमा के शत्रु के रूप में अंकित किया गया है।

4. सूर्य और शनि पिता-पुत्र हैं तथा चन्द्रमा-बुध भी पिता-पुत्र हैं। अत: इनकी शत्रुता में भी एक लगाव-सा रहता है। विशेषकर पिता की ओर से। (क्योंकि पुत्र नालायक हो सकता है, परन्तु पिता फिर भी पिता होता है।) अत: बुध चन्द्रमा को अपना शत्रु मानता है पर चन्द्रमा बुध को शत्रु नहीं मानता। शनि सूर्य को अपना शत्रु मानता है। सूर्य भी (क्रूर होने के कारण) शनि को अपना शत्रु मानता है। (क्योंकि सूर्य चन्द्र की भांति सौम्य नहीं है।) फिर भी सूर्य की ओर से हम शत्रुता के भाव में वो प्रबलता नहीं होती जो शनि की ओर से होती है। यही कारण है कि सूर्य व शनि तथा बुध व चन्द्र में 'वेध' (VEDHA) नहीं माना जाता।

ग्रहों की तात्कालिक मित्रता

ग्रहों की तात्कालिक मित्रता जन्मकुंडली के आधार पर देखी जाती है। नैसर्गिक मित्रता स्थायी है। वह हरेक जातक के लिए AS IT IS होगी। परन्तु तात्कालिक मित्रता जातक की कुण्डली के हिसाब से अलग-अलग होती है। यह यदा रखना चाहिए।

ग्रहों की तात्कालिक मित्रता/शत्रुता (संबंधी) देखने के नियम इस प्रकार हैं—

मित्रता—प्रत्येक ग्रह अपने से दूसरे, तीसरे, चौथे तथा दसवें, ग्यारहवें, बारहवें भाव में बैठे ग्रहों का तात्कालिक मित्र होता है। यानी जिस राशि में कोई ग्रह है वह अपने स्थान से तीन अगले व तीन पिछले भावों में बैठे ग्रहों का मित्र होता है।

शत्रुता—प्रत्येक ग्रह अपने साथ वाले ग्रह का तथा अपने से पांचवें, छठे, सातवें, आठवें तथा नौवें भाव में बैठे ग्रहों का शत्रु होता है। (अपने साथ वाले से अर्थ उस ग्रह से है, जिससे उसकी युति हो रही हो।)

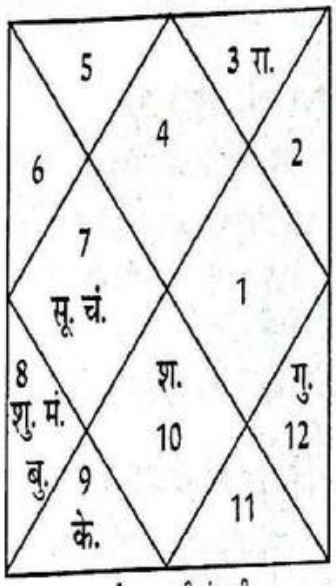

कर्क लग्न की कुंडली

जैसे प्रस्तुत कुंडली में सूर्य के चन्द्र, गुरु व राहू शत्रु (तात्कालिक) हैं। जबकि बुध, शुक्र, मंगल, केतु व शनि सूर्य के तात्कालिक मित्र हैं। इसी प्रकार शेष ग्रहों का सम्बन्ध बनेगा।

पंचधा मैत्री चक्र (ग्रहों के सम्बन्ध)

पंचधा मैत्री को नैसर्गिक मैत्री व तात्कालिक मैत्री के आधार पर निकाला जाता है। इसे 'पंचधा' इसलिए कहते हैं। क्योंकि इसके द्वारा मित्र, अधिमित्र, सम, शत्रु तथा अधिशत्रु—ये पांच सम्बन्ध जाने जाते हैं। पाठकों की सुविधार्थ एक उदाहरण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

ग्रहों की तात्कालिक मित्रता में उदाहरणार्थ दी गई कुंडली के अनुसार सूर्य के तात्कालिक मित्र बुध, शुक्र, मंगल, केतु व शनि हैं और तात्कालिक शत्रु चंद्र, गुरु व राहू हैं। नैसर्गिक मित्रता के अनुसार सूर्य के मित्र चंद्र, मंगल, गुरु हैं। जबकि शत्रु हैं शुक्र, शनि, राहू, केतु। इसे पंचधा मैत्री में निम्न प्रकार से कहा जाएगा—

सूर्य के लिए बुध मित्र है, क्योंकि वह नैसर्गिक रूप से सम है और तात्कालिक रूप से मित्र है। शुक्र सम है, क्योंकि वह नैसर्गिक रूप से शत्रु व तात्कालिक रूप से मित्र है। मंगल अधिमित्र है, क्योंकि वह नैसर्गिक रूप से भी मित्र है और तात्कालिक रूप से भी। केतु सम है, क्योंकि वह नैसर्गिक शत्रु है। परंतु तात्कालिक मित्र है। शनि भी सम है, क्योंकि वह नैसर्गिक शत्रु व तात्कालिक मित्र है। चंद्र सम है, क्योंकि वह नैसर्गिक मित्र व तात्कालिक शत्रु है। गुरु सम है, क्योंकि वह नैसर्गिक मित्र और तात्कालिक शत्रु है। जबकि राहू अधिशत्रु है, क्योंकि वह नैसर्गिक व तात्कालिक दोनों ही रूप से शत्रु है। यानी उदाहरण कुंडली के अनुसार पंचधा मैत्री में सूर्य के लिए बुध मित्र, मंगल अधिमित्र; शुक्र, केतु, शनि, चंद्र, गुरु

सम तथा राहू अधिशत्रु है। लेकिन शत्रु कोई नहीं है।

जिस प्रकार सूर्य का पंचधा मैत्री चक्र बनाया गया है, उसी प्रकार पाठकगण अन्य ग्रहों का पंचधा मैत्री चक्र स्वयं अभ्यासार्थ बनाएं।

पंचधा मैत्री चक्र (सूत्र)

अधिमित्र—जो नैसर्गिक व तात्कालिक दोनों चक्रों में मित्र हो।

अधिशत्रु—जो नैसर्गिक व तात्कालिक दोनों चक्रों में शत्रु हो।

मित्र—जो एक में मित्र हो और दूसरे में सम हो।

शत्रु—जो एक में शत्रु हो और दूसरे में सम हो।

सम—जो एक में मित्र व एक में शत्रु हो। अथवा दोनों में समझें।

ग्रहों के लोकों से सम्बन्ध

ग्रहों के प्रभावों द्वारा जैसे जातक के शारीरिक अंगों व रोगों का विचार किया जाता है। उसी प्रकार पूर्व जन्म में जातक किस लोक में था? अथवा भविष्य में किस लोक में जाएगा? आदि विषयों का विचार भी कुण्डलियों में ग्रहों के शुभाशुभ प्रभावों द्वारा किया जाता है। इसके लिए लोकों से ग्रहों का एक निश्चित सम्बन्ध निर्धारित किया गया है। जो इस प्रकार है—

लोक व ग्रह— गुरु—**स्वर्गलोक**, शुक्र व चन्द्र—**पितृलोक**

पाताल—बुध सूर्य व मंगल—**पृथ्वीलोक** (मृत्युलोक)

नरक—शनि

नोट—राहू और केतु क्योंकि छाया ग्रह हैं अत: किसी लोक विशेष से इनका सम्बन्ध निश्चित नहीं किया गया है। तथापि दोनों में क्योंकि पृथक्करण का प्रभाव शामिल है और दोनों ही एक-दूसरे के विपरीत (180°) पर रहते हैं। अत: राहू को अविद्या/मोह का कारक होने से आवागमन चक्र में घसीटने वाला माना गया है। जबकि केतु को इसके ऐन विपरीत आवागमन चक्र से छूट निकलने/मुक्त हो जाने या मोक्ष का कारक मानते हैं।

व्याख्या (संक्षिप्त)—इस प्रतीकात्मक संदर्भ को स्थूल रूप से यूं समझिए कि ज्ञान तथा भावना अथवा आत्मा व मन के कारक क्रमश: सूर्य व चन्द्र हैं। राहू मोहमाया तथा अविद्या का कारक होने से आत्मा व मन अथवा ज्ञान व भावना को दूषित करता है अथवा सूर्य, चन्द्र को ग्रहण लगाता है। अत: आवागमन चक्र में उलझाए रखता है (जीव को)। किन्तु केतु वह बिन्दु है जहां से सूर्य-चन्द्र ग्रहण मुक्त होने वाले होते हैं (राहू वह बिन्दु है जहां संग्रहण आरम्भ होता है)। अत: आत्मा (सूर्य) व मन (चन्द्र) केतु के प्रभाव से ही अविद्या/ग्रहण से मुक्त होते हैं। सो केतु मोक्ष का कारक है।

□□

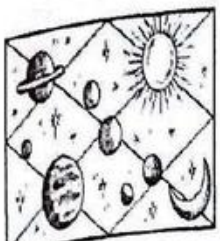

ग्रहों के बल, अवस्थाएं, संज्ञा व दृष्टियां

ग्रहों के गुण, प्रभाव, प्रकृति, तत्त्व, लिंग आदि के अलावा यह देखना भी फलादेश की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है कि किसी ग्रह का बल तथा अवस्था क्या है? क्योंकि यदि कोई स्वभाव से परोपकारी है तथा आपका शुभ चिन्तक भी है, परन्तु यदि निर्बल है अथवा विषम स्थिति में पड़ा है तो आपका कितना हित कर पाएगा—अर्थात् बावजूद शुभचिंतक होते हुए वह आपकी कुछ विशेष सहायता नहीं कर सकता।

ठीक इसी प्रकार कोई आपका विरोधी या शत्रु है परन्तु स्वयं निर्बल है या विषम परिस्थितियों में पड़ा हुआ है तो वह आपका विशेष अहित नहीं कर पाएगा। इस तर्क के आधार पर ग्रह बल तथा अवस्था का महत्व कुण्डली के फलादेश में सहज ही समझा जा सकता है। अनुकूल ग्रह यदि निर्बल हों तो उनका बल बढ़ाया भी जाता है तथा प्रतिकूल ग्रह यदि अत्यंत बली हों तो उनका बल घटाया भी जा सकता है। यह आप पुस्तक के अन्तिम भाग में उपाय/उपचार खण्ड में पढ़ेंगे। यहां ग्रह बल तथा अवस्था की बात करेंगे।

ग्रहों की अवस्था व संज्ञा

ग्रहों की दस अवस्थाएं (कुछ ज्योतिर्विद 9 ही मानते हैं) तथा चार संज्ञाएं होती हैं। ग्रहों का बल देखने में अवस्थाएं व संज्ञाएं भी महत्त्वपूर्ण होती हैं।

प्रदोत्तावस्था—जब कोई ग्रह अपनी मूलत्रिकोण राशि में होता है तो वह उसकी प्रदोत्त या प्रदोतावस्था मानी जाती है। इस अवस्था में ग्रह का तेज व प्रभाव बढ़ जाता है। अत: इसको सर्वश्रेष्ठ अवस्था कह सकते हैं।

मुदितावस्था—जब कोई ग्रह स्वराशि या मित्रराशि में होती, वह उस ग्रह की मुदितावस्था मानी जाती है। यह पहली अवस्था से कम प्रभावशाली होती है। ग्रह यहां प्रसन्न होता है।

शान्तावस्था—यदि कोई ग्रह किसी अन्य ऐसे ग्रह के वर्ग में हो—जो शुभ ग्रह हो—तो इस स्थिति में वह ग्रह शांत अवस्था में होता है। यहां ग्रह की अपनी शक्ति व तेज न तो बढ़ता है, न घटता है। ज्यों का त्यों रहता है, अत: इसे शान्तावस्था माना गया है।

शक्तावस्था—जब कोई ग्रह दीप्त किरणों से युक्त हो। यानी अपनी उच्च राशि में हो तब उसका तेज व प्रभाव बढ़ जाता है। इस स्थिति में ग्रह की स्वाभाविक शक्ति बढ़ जाती है। अत: इसे शक्तावस्था कहते हैं। कुछ ज्योतिर्विद इसे उच्चावस्था भी कहते हैं।

पीड़ितावस्था—जब कोई ग्रह अन्य ग्रहों के प्रभाव से पीड़ित हो (दृष्टि, युति आदि के द्वारा) तो वह ग्रह की पीड़ितावस्था होती है। ऐसी स्थिति में ग्रह के तेज (प्रभाव) का ह्रास होता ही है। जिस ग्रह द्वारा वह पीड़ित है उसके प्रभाव से संयुक्त होकर दूषित भी हो जाता है। अत: स्वयं उसका अपना प्रभाव पूर्ण व शुद्ध नहीं रह पाता।

दीनावस्था—शत्रु राशि में बैठा हुआ ग्रह दीनावस्था में होता है। शत्रु राशि/शत्रु क्षेत्र में होने से वह लाचारी की स्थिति में होता है। अत: उसका अपना तेज व बल काफी कम होता है तथा शत्रु द्वारा प्रभावित भी होता है।

खलावस्था—जब कोई ग्रह किसी अशुभ ग्रह के वर्ग में हो तो उसका अपना प्रभाव कम होता है तथा अशुभ ग्रह के प्रभाव से दूषित होकर स्वयं वह ग्रह भी दुष्ट के समान प्रभाव देने वाला हो जाता है। अत: इसको खल (दुष्ट) अवस्था कहा जाता है।

भीतावस्था—जब कोई ग्रह अपनी नीच राशि में हो तो वह अपने स्वाभाविक तेज व प्रभाव को काफी हद तक खो देता है। अत: दुर्बल होने से वह आतंकित/डरा हुआ हो जाता है, भयभीत होता है। इसलिए भीतावस्था कहा है।

विकलावस्था—जब कोई ग्रह अस्त हो अर्थात् अंशों में सूर्य से कम तथा बहुत निकट हो तो वह उस ग्रह की विकल अवस्था कही जाती है। इस अवस्था में ग्रह अपना बल, तेज खोकर परेशान/बेचैन हो जाता है। इसलिए इसको विकलावस्था कहा गया है। ऐसा ग्रह अपना पूर्ण प्रभाव नहीं डाल पाता।

नोट—दसवीं अवस्था कुछ ज्योतिषाचार्य किसी ग्रह का शुभ ग्रहों से युत होना मानते हैं। परन्तु कुछ ज्योतिर्विद इसको शक्तावस्था में ही गिन लेते हैं। अत: वे 9 अवस्थाएं ही मानते हैं।

सामान्य नियमानुसार प्रदीप्त या प्रदीप्तावस्था में कोई भी ग्रह सर्वाधिक प्रभावी तथा शक्तिशाली (BEST POSITION में) होता है। शक्तावस्था में उससे कम (BETTER POSITION में) होता है तथा मुदितावस्था में उससे भी कम (GOOD POSITION) में होता है। शान्तावस्था में ग्रह NUTRAL POSITION में होता है। इसके विपरीत खलावस्था में ग्रह सबसे खराब स्थिति में होता है। दीनावस्था तथा भीतावस्था में जरा-सा बेहतर होता है तथा पीड़ितावस्था या विकलावस्था में थोड़ा-सा और बेहतर माना जा सकता है। संक्षेप में इन अवस्थाओं को चार संज्ञाओं में भी बांटा गया है—

'बाल' (बालावस्था)—मित्रग्रह की राशि या स्वराशि में स्थित ग्रह। (बालक की तरह मस्त/प्रसन्न तथा विकास करने वाला)।

'कुमार' (कुमारावस्था)—मूल त्रिकोण राशि में स्थित ग्रह। (यह TEEN AGERS की तरह उत्साही, जोशीला, शक्तिवान तथा तीव्रगति से विकास करने वाला होता है)।

'युवराज' (युवावस्था)—यह अपनी उच्च राशि में बैठे ग्रह की अवस्था है। (पूर्ण विकसित, शक्तिसम्पन्न, ऊर्जावान तथा प्रभावशाली होता है, किन्तु आगे विकास की सम्भावना नहीं होती)।

'वृद्ध' (वृद्धावस्था)—शत्रु राशि या नीच राशि में पड़ा ग्रह। (वृद्ध की भांति निर्बल, असहाय तथा आगे और भी क्षीण हो जाने की सम्भावना वाला)।

ग्रहबल—यह छ: प्रकार के होते हैं। अत: इनको 'षड्बल' के नाम से जाना जाता है। ये इस प्रकार हैं—स्थानबल, दिग्बल, कालबल, दृग्बल, नैसर्गिक बल तथा चेष्टाबल।

स्थान बल—मूलत्रिकोण राशि, उच्च राशि, स्वराशि या मित्र राशि में बैठे हुए ग्रह को स्थान बल/ग्रह बल प्राप्त होता है। अपने घर में बैठा हुआ व्यक्ति जैसे—निश्चिंत, प्रसन्न व निर्भय, सुरक्षित होता है। उसी प्रकार अपने घर में बैठा ग्रह भी होता है। इसलिए स्वग्रही/मित्रग्रही/मूलत्रिकोण/उच्च राशि में बैठा ग्रह स्थान बली माना जाता है।

दिग्बल—अनुकूल दिशा में बैठे हुए ग्रह को दिग्बल या दिशाबल प्राप्त होता है। पूर्व दिशा (लग्न) में गुरु तथा बुध, उत्तर दिशा (चतुर्थ भाव) में शुक्र व चन्द्र, पश्चिम दिशा (सप्तम भाव) में शनि तथा दक्षिण दिशा (दशम भाव) में सूर्य व मंगल बली हो जाते हैं।

कालबल—जातक का जन्म यदि रात्रि का है तो चन्द्र, शनि तथा मंगल को काल/समय बल प्राप्त होता है। यदि दिन का जन्म है तो सूर्य, बुध व शुक्र को काल बल प्राप्त होता है। कृष्णपक्ष का जन्म हो तो पापग्रहों को बल प्राप्त होता है। शुक्ल पक्ष का जन्म हो तो शुभ ग्रहों को बल प्राप्त होता है। (गुरु सदैव बली रहता है। दिन का जन्म हो या रात का। गुरु दोनों स्थितियों में कालबल प्राप्त करता है।)

नोट—1. मेरे सुयोग्य आचार्य श्री अरुण कुमार गुलाटी के अनुसार बुध सूर्योदय के समय, सूर्य मध्याह्न के समय, शनि संध्या काल में, मंगल रात्रि के प्रथम प्रहर में, चन्द्र मध्य रात्रि में तथा शुक्र रात्रि के अंतिम प्रहर में विशेष कालबल प्राप्त करता है तथा गुरु सदैव बली रहता है।

2. बहुत से ज्योतिषाचार्य गुरु को दिन में बली मानते हैं व बुध को NUTRAL होने से रात्रि व दिवस दोनों में समान रूप से काल बली मानते हैं।

नैसर्गिक बल—स्वाभाविक रूप से सूर्य, चन्द्र, शुक्र, गुरु, बुध, मंगल तथा

शनि क्रमशः उत्तरोत्तर कम बली होते हैं। यानी सूर्य सबसे बलवान तथा शनि सबसे कम बल वाला स्वभावतः होता है।

दृग्बल—जिन ग्रहों पर शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़ती है, उनको दृग्बल/दृष्टिबल प्राप्त होता है। वे दृग्बली कहलाते हैं। यदि अशुभ ग्रहों की दृष्टि पड़े तो अन्य ग्रहों का—जो दृष्ट होते हैं—दृग्बल क्षीण हो जाता है।

चेष्टाबल—सूर्य तथा चन्द्र मकर, कुंभ, वृष तथा मिथुन राशि में चेष्टा बली होते हैं। मंगल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि वक्री होने पर चेष्टाबल प्राप्त करते हैं। (ऐसा मेरे सुयोग्य आचार्य श्री अरुण कुमार गुलाटी का मानना है।) बहुत से ज्योतिर्विद सूर्य को मकर में, कुम्भ में, मंगल को मीन में, बुध को मेष में, गुरु को वृष में तथा शुक्र को मिथुन में चेष्टाबली मानते हैं तथा शनि को वक्री होने पर चेष्टाबली मानते हैं।

***नोट* (ग्रह स्पष्ट)**—इनके अलावा ग्रहों का बल उनके अंशों से भी अवश्य देखा जाना चाहिए। कोई ग्रह कितने अंश का है? या अमुक राशि में कितने अंश पार कर चुका है? इसे 'ग्रह स्पष्ट' कहा जाता है यह भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है।

अंशों/ग्रह स्पष्ट की दृष्टि से ग्रहों की चार अवस्थाएं मानी जाती हैं।

बाल्यावस्था—जब कोई ग्रह 1° से 10° के भीतर हो तो वह बाल्यावस्था का ग्रह होता है। अतः बालक होने से वह अल्प तेज प्रभाव वाला होता है। वह जिस भाव में स्थित होता है, तत्सम्बन्धी फल पूर्णता व तीव्रता से नहीं देता।

युवावस्था—जब कोई ग्रह 10° से अधिक तथा 20° तक होता है तो वह युवावस्था में होता है। युवा होने से उसका तेज या प्रभाव बढ़ा हुआ होता है। वह जिस भाव में स्थित होता है, तत्सम्बन्धी फल पूर्णता व तीव्रता से देता है।

प्रौढ़ावस्था—जब कोई ग्रह 20° से अधिक तथा 28° तक होता है तो वह अपनी प्रौढ़ावस्था में होता है। प्रौढ़ होने से उसका तेज घटा हुआ होता है। अतः वह भी जिस भाव में होता है, तत्सम्बन्धी फल पूर्णता व तीव्रता से नहीं दे पाता। क्योंकि वृद्धत्व की ओर बढ़ रहा होता है।

मृतावस्था/सन्धि की अवस्था—जब कोई ग्रह 28° से 30° का अथवा 0° से 2° तक का होता है तो वह सन्धि की अवस्था में होता है। (एक भाव से दूसरे भाव या एक राशि से दूसरी राशि के जुड़ने की स्थिति सन्धि कहलाती है)। सन्धि का ग्रह अपना तेज या प्रभाव पूर्णता से खो चुका होता है। वह मृतप्रायः होता है अतः फल प्रदान करने में असक्षम होता है।

नोट—जो ग्रह 10° से जितना अधिक कम होगा (बाल्यावस्था) और जो 20° से जितना अधिक होगा (प्रौढ़ावस्था) उतना ही उसका तेज व सामर्थ्य अल्प होता जाता है। 15° के आसपास का ग्रह पूर्ण युवावस्था में होने से फल देने में सर्वाधिक बलवान होता है। इसी प्रकार 0° से 1° तक का तथा 29° से 30° तक का ग्रह सटीक सन्धि की स्थिति में आने से पूर्ण मृतक के समान हो जाता है। अतः फलादेश के समय ग्रह बल को ग्रह स्पष्ट द्वारा भी जरूर देखें।

विशेष—'ग्रह स्पष्ट' को 'भाव स्पष्ट' की तुलना में भी देखें। क्योंकि सामान्यतः एक भाव 30° का होता है। अतः उसी दृष्टि से दस-दस अंशों के तीन विभाग कर बाल्य, युवा तथा प्रौढ़ावस्था का विधान किया गया है तथा एक भाव/राशि का समाप्ति काल (30° के आसपास) तथा दूसरे भाव या राशि का आरम्भ काल (0° के आसपास) ही ग्रह की सन्धि अवस्था बनती है। किन्तु 'भाव स्पष्ट' करने पर कई बार कोई भाव 30° से कम भी हो जाता है। यद्यपि यह अन्तर एक आध डिग्री का ही होता है। तथापि इससे सन्धि की स्थिति बदल जाती है। (जैसे यदि 28° का पूरा भाव स्पष्ट हुआ तो साढ़े छब्बीस अंश से अधिक का ग्रह भी उस भाव की सन्धि में आ जाएगा तथा इसी प्रकार 15° की बजाय उस भाव में 14° के आसपास आया ग्रह अपनी पूर्ण युवावस्था में माना जाएगा)। अतः सटीक फलादेश के लिए ग्रह स्पष्ट को भाव स्पष्ट के अनुपात से ही देखा जाना चाहिए।

नोट—'ग्रह स्पष्ट' के अंतर्गत यह भी अवश्य देखें कि ग्रह वक्री है अथवा मार्गी? या फिर अस्त तो नहीं है? क्योंकि वक्री ग्रह में ये अवस्थाएं उलटी हो जाएंगी। जो मार्गी ग्रह की बाल्यावस्था है वो वक्री ग्रह की प्रौढ़ावस्था बन जाएगी। इसी प्रकार मार्गी ग्रह की प्रौढ़ावस्था वक्री ग्रह की बाल्यावस्था बन जाएगी। (यहां संदर्भवश पाठकों को पुनः स्मरण दिला दें कि सूर्य और चन्द्र सदा मार्गी रहते हैं, कभी वक्री नहीं होते और राहू-केतु सदा वक्री रहते हैं, कभी मार्गी नहीं होते। शेष ग्रह सूर्य की दूरी घटने-बढ़ने पर वक्री तथा मार्गी होते रहते हैं ग्रह कभी-कभी **अतिचारी** (सामान्य गति से अधिक तेज चलने वाले) या **मन्दाचारी** भी होते रहते हैं (यानी अपनी स्वाभाविक गति से धीरे भी चलते हैं)। यद्यपि ऐसा हमेशा नहीं होता तथा जब होता है बहुत कम समय के लिए होता है, तथापि गोचर की दृष्टि से तथा 'ग्रह स्पष्ट' की दृष्टि से ग्रहों की तात्कालिक गति पर ध्यान देना आवश्यक होता है (यह जानकारी हमें पंचांग में उपलब्ध हो जाती है)। विशेषकर '**काल सर्पयोग' की निश्चितता ग्रह स्पष्ट व ग्रह गति को जाने बिना हो ही नहीं सकती**।

ग्रहों की दृष्टियां

पूर्ण दृष्टि—फलादेश में ग्रहों की दृष्टियां अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। कौन-सा ग्रह किस दृष्टि से देखता है? यह जाने बिना आप कुण्डली का फलादेश कर ही नहीं सकते। ग्रहों की दृष्टियों के नियम इस प्रकार हैं—

- प्रत्येक ग्रह अपने से सातवें भाव में बैठे ग्रहों को तथा अपने से सातवें भाव को पूर्ण दृष्टि से देखता है।
- गुरु, राहू व केतु अपने से पांचवें तथा नौवें भाव को व उस भाव में बैठे हुए ग्रहों को भी पूर्ण दृष्टि से देखते हैं।

❑ मंगल अपने से चौथे तथा आठवें भाव को भी तथा वहां बैठे ग्रहों को भी पूर्ण दृष्टि से देखता है।

❑ शनि अपने से तीसरे एवं दसवें भाव को भी तथा वहां पर बैठे ग्रहों को भी पूर्ण दृष्टि से देखता है।

आंशिक दृष्टि—पूर्ण (100%) दृष्टि के अलावा ग्रहों के पास आंशिक दृष्टियां भी होती हैं। इनको एक पाद, द्विपाद तथा त्रिपाद दृष्टि भी कहते हैं। फलादेश में इनका आकलन भी क्रमश: 25%, 50% तथा 75% होता है।

❑ प्रत्येक ग्रह अपने से पांचवें तथा नौवें भाव को तथा वहां बैठे ग्रहों को द्विपाद दृष्टि (50%) से तथा अपने से तीसरे व दसवें भाव को और वहां बैठे ग्रहों को एकपाद दृष्टि (25%) से देखता है। साथ ही अपने से चौथे और आठवें भाव में तथा वहां बैठे ग्रहों को त्रिपाद दृष्टि (75%) से देखता है। (यहां उन ग्रहों की बात हो रही है, जिनके पास मात्र एक ही/सातवीं पूर्ण दृष्टि होती है। यानी—सूर्य, चन्द्र, बुध एवं शुक्र।)

❑ ग्रहों की पूर्ण दृष्टियों के बीच में आने वाले भाव तथा ग्रह भी आंशिक रूप से दृष्टग्रह से प्रभावित होते हैं। (कुछ ज्योतिषाचार्य जिनमें मेरे सुयोग्य आचार्य श्री अरुण कुमार गुलाटी भी शामिल हैं—राहू-केतु की सातवीं दृष्टि को मान्य नहीं मानते। क्योंकि राहू व केतु सदैव एक-दूसरे से सातवें स्थान पर ही रहते हैं। जबकि अन्य ज्योतिर्विद् जिनमें मेरे समर्थ गुरु श्री सुरेश दत्त शर्मा भी शामिल हैं—राहू-केतु की सातवीं दृष्टि को भी मान्य मानते हैं।)

विशेष—मेरा खुद का निष्कर्ष यही है कि राहू व केतु की सातवीं दृष्टि का प्रभाव स्वयं राहू व केतु के लिए ही अमान्य होगा परन्तु सातवें भाव तथा उस भाव में बैठे ग्रह अवश्य ही राहू-केतु की सातवीं दृष्टि से प्रभावित होंगे। अत: राहू-केतु की सातवीं दृष्टि को मानना ही चाहिए। भले ही राहू-केतु एक-दूसरे को अपनी सातवीं दृष्टि से प्रभावित न कर पाते हों।

केन्द्रीय दृष्टि/केन्द्रीय प्रभाव—इन पूर्ण तथा आंशिक दृष्टियों के अलावा ग्रहों के पास केन्द्रीय दृष्टि (CENTRAL-ASPECT) भी होती है, जिसके अनुसार प्रत्येक ग्रह अपने से चौथे भाव तथा उस भाव में बैठे ग्रह को प्रभावित करता है। अथवा कुंडली में केन्द्र (1, 4, 7, 10 भाव) में बैठे ग्रह एक-दूसरे को इसी केन्द्रीय प्रभाव/केन्द्रीय दृष्टि से प्रभावित करते हैं। यद्यपि इसे दृष्टि न कहकर प्रभाव कहा जाता है। क्योंकि यह आंशिक होता है। तथापि प्रभाव तो डालता ही है। स्थूल (GENRAL) फलादेश (प्रिडक्शन) में इसे नजरअंदाज कर सकते हैं, परन्तु सटीक व सूक्ष्म फलादेश में इसे महत्व देना ही पड़ता है। विशेषकर 'रोग ज्योतिष' (MEDICAL-ASTROLOGY) में इस प्रभाव को देखा जाना अत्यंत महत्त्वपूर्ण व आवश्यक होता है।

विशेष—अपनी पूर्ण तथा आंशिक दृष्टियों (पूर्ण दृष्टि का महत्व विशेष है)

तथा केन्द्रीय प्रभावों के द्वारा ग्रह अपने निजी (शुभ/अशुभ) प्रभाव को सम्बन्धित भाव/राशि/ग्रह पर डालता है। जिससे तत्सम्बन्धित भाव/राशि/ग्रह के अपने गुण, दोष एवं प्रभाव से प्रभावित होते हैं। घटते-बढ़ते या परिष्कृत/दूषित होते हैं। अत: राशि/भाव/ग्रह के अपने मूल गुण, स्वभाव एवं क्षेत्रों के विषय में सटीक निष्कर्ष दृष्टियों के अध्ययन के बिना नहीं निकाला जा सकता।

पुनरावृत्ति—पाठकों की सुविधा के लिए ग्रहों की पूर्ण दृष्टि को अंकों के माध्यम से पुन: व्यक्त कर रहे हैं। ताकि याद करने में सुभीता हो—

गुरु, राहू, केतु— 5, 7, 9
शनि— 3, 7, 10 पूर्ण दृष्टि
मंगल—4, 7, 8

सूर्य, चन्द्र, बुध, शुक्र—7

3, 10— एक पाद
5, 9— द्विपाद आंशिक दृष्टि
4, 8— त्रिपाद

विशेष—इनके अलावा केन्द्र के ग्रहों का केन्द्र के अन्य ग्रहों से सम्बन्ध होता है। अथवा हर ग्रह अपने से चौथे भाव पर केन्द्रीय प्रभाव डालता है।

मैंने अब तक के अनुभव में पाया है कि प्रारम्भिक छात्रों को अक्सर ग्रहों की मैत्री/शत्रुता याद रखने में बहुत कन्फ्यूजन होता है। क्योंकि कुछ ग्रहों में मित्रता/शत्रुता के आंकड़े बदल जाते हैं। (उदाहरण के लिए बुध के सम्बन्ध अन्य ग्रहों से देखें तो चन्द्रमा बुध का शत्रु रहता है। जबकि चन्द्र के सम्बन्ध अन्य ग्रहों से देखें तो बुध चन्द्रमा का मित्र बन जाता है।) अत: नैसर्गिक मित्रता को निकालने का एक आसान फार्मूला मेरे सुयोग्य आचार्य श्री गुलाटी ने मुझको सिखाया था। जिसे कुछ 'एडीशन' व 'सिम्पलीफिकेशन' के बाद और भी सरल करके मैं अमल में लाता हूं। पाठकों की सुविधा के लिए वह यहां उसी सरलीकृत ढंग से दे रहा हूं।

मैत्री सम्बन्ध ज्ञात करने का सरल फार्मूला/सूत्र—इस विधि में मात्र ग्रहों की मूल त्रिकोण राशियां याद होनी चाहिए तथा उनका स्वामित्व भी इन्हें याद रखने का सूत्र पहले 'राशि प्रकरण' में बताया जा चुका है। आपको करना केवल इतना है कि जिस ग्रह की मित्रता/शत्रुता जाननी हो—उसकी मूल त्रिकोण राशि को कुण्डली के प्रथम भाव/लग्न में लिखिए और उससे आगे की शेष 11 राशियों को शेष 11 भावों में क्रमश: भर लीजिए। अब निम्न व्याख्या को समझ लीजिए—

मित्र जीवनभर साथ न भी दें। परन्तु शत्रु सदा साथ रहता है। अत: कुण्डली के मध्य में चित्रानुसार एक रेखांकित 'सात' बनाइए। यह 'सात' शत्रुओं के 'साथ' का प्रतीक है। क्योंकि यह तृतीय भाव (बन्धु, साहस व जीवन का संघर्ष), प्रथम भाव (आपका व्यक्तित्व व शरीर तथा दिमाग), एकादश भाव (लाभ, आमदनी/आय), दशम भाव (व्यापार/ आजीविका/कार्यक्षेत्र), सप्तम भाव (साझेदारी,

पत्नी) तथा षष्ठ भाव (रोग, ऋण, शोक, शत्रु, मुकदमा) को घेर लेता है। इसका सांकेतिक अर्थ हुआ कि शत्रु (छठा भाव) शेष रेखांकित भावों पर अवश्य असर डालता है। अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि इन भावों में आने वाली राशियों के स्वामी ग्रह, मूलत्रिकोण, राशि वाले ग्रह के शत्रु हुए और शेष मित्र। (जिनकी गिनती, दोनों स्थानों पर है यानी मित्र व शत्रु दोनों)—वह 'सम' माना जाएगा।

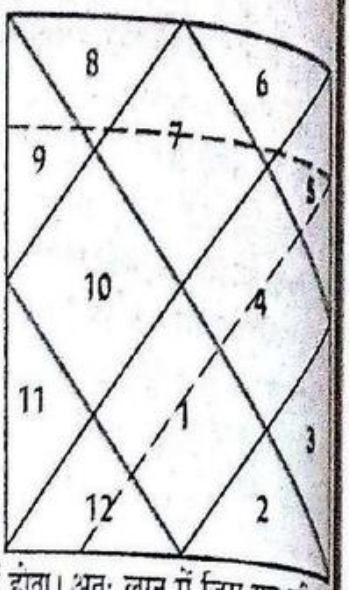

दूसरी बात यह कि अपना शत्रु कोई नहीं होता। अत: लग्न में जिस ग्रह की मू त्रिकोण राशि है, वह भी अपना शत्रु नहीं होगा। अब इसे एक उदाहरण द्व समझते हैं। प्रस्तुत चित्र में हम शुक्र के शत्रु व मित्र ज्ञात कर रहे हैं। शुक्र की मू त्रिकोण राशि तुला है। अत: कुण्डली में 7 को (तुला लग्न लिखकर शेष भावों क्रमशः अन्य राशियां लिखें)।

चित्र में—9, 7, 5, 4, 1, 12 रेखांकित सात (शत्रु वर्ग) में आ गए और शेष—8, 10, 11, 2, 3, 6, (मित्र वर्ग) रेखांकित सात से बाहर आ गए। अत: इ राशियों के स्वामी भी क्रमशः—गुरु, शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मंगल व गुरु (पुनः) श वर्ग में और शेष—मंगल, शनि, शनि (पुनः), शुक्र व बुध, बुध (पुनः) मित्र व में आ गए। यानी मित्र हुए—मंगल, शनि (डबल), शुक्र, बुध (डबल), श हुए—गुरु (डबल), शुक्र, सूर्य, चन्द्र व मंगल।

अपना शत्रु कोई नहीं होता। अत: शुक्र जो शत्रु व मित्र दोनों में शामिल है स्वयं शुक्र के लिए समान ही रहेगा। न शत्रु होगा न मित्र। शेष ग्रह जो दोनों व में शामिल है (मंगल) वह भी शुक्र के लिए सम होगा तथा जो शत्रु में डब शामिल है (गुरु) वह अधिशत्रु होगा। जो मित्रों में डबल शामिल है (शनि, बुध वह अधिमित्र होंगे।

निष्कर्ष सामने यह आया कि

शुक्र के लिए—मंगल सम है—सूर्य, चन्द्र शत्रु हैं—गुरु अधिशत्रु है—शनि व बुध अधिमित्र हैं व शेष मित्र हैं।

इसी प्रकार अन्य ग्रहों की शत्रुता, मित्रता भी निकाली जा सकती है। कुण्डली में 1, 3, 6, 7, 10, 11 भाव वाले शत्रु तथा 2, 4, 5, 8, 9, 12 भाव वाले मि होंगे। जो दोनों भावों में आएंगे वो सम होंगे। जो एक ही वर्ग में पुनः/डबल आए वे अधिक हो जाएंगे।

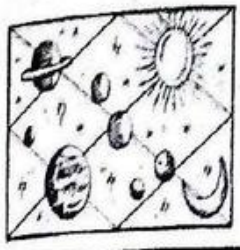

ग्रहों की दशाएं, क्रम व महत्त्व

पाराशरी ज्योतिष जातक की आयु 120 वर्ष मानकर चलता है। उसके अनुसार ग्रहों की 'विंशोत्तरी दशा' की व्यवस्था की गई है। (इसमें सब ग्रहों की दशाओं का योग 120 वर्ष होता है)। यद्यपि अन्य प्रणालियों में—(जैमिनी आदि) अष्टोत्तरी दशा (108 वर्ष) तथा षोडशोत्तरी दशा (116) वर्ष की भी व्यवस्था है। इनके अलावा विस्तार के लिए—कालचक्र दशा, योगिनी दशा, त्रिभगी दशा, चर दशा आदि भी जन्मकुंडलियों में रहती हैं। परन्तु इनमें विंशोत्तरी दशा ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं प्रचलित है। मैंने भी अपने तीनों गुरुओं—श्री सुरेश दत्त शर्मा, श्री मदनमोहन कौशिक और श्री अरुण कुमार गुलाटीजी से 'विंशोत्तरी दशा' से सम्बन्धित ज्ञान (पाराशर पद्धति) प्राप्त किया है। अत: यहां हम विंशोत्तरी दशा को ही चर्चा में लेंगे।

ग्रह दशाएं पांच प्रकार की मानी गई हैं—महादशा, अन्तरदशा, प्रत्यंतर दशा, प्राण दशा तथा सूक्ष्म दशा। कोई घटना या कार्य कब फलित होगा यह जानने के लिए दशा ज्ञान अनिवार्य है। जितना अधिक सूक्ष्म परिणाम निकालना हो उतनी ही सूक्ष्म दशा में जाना पड़ता है। महादशा हमें 10-20 वर्षों की जानकारी देती है। अन्तरदशा 2-4 वर्षों की जानकारी देती है। प्रत्यंतर दशा 4-6 महीनों की जानकारी देती है। प्राण दशा से दो-चार सप्ताहों की जानकारी मिल जाती है। मगर सूक्ष्मदशा से दिनों व घंटों में जानकारी मिलती है। अत: जितना हम दशाओं की सूक्ष्म गणना तथा विवेचना करते हैं उतना ही हम घटने वाली घटना के सटीक समय को जान पाते हैं। (आमतौर पर सभी कुंडलियों में—महादशा, अंतरदशा तथा प्रत्यंतर दशा से ही काम चलाया जाता है। क्योंकि इन्हीं से 80-85% काम चल जाता है। अधिक गहराई में या बिल्कुल सटीक समय/परिणाम को जानना न तो जातक ही आवश्यक समझता है, न ही ज्योतिषी इतना श्रम करने को तैयार होता है। और न ही ज्योतिषी को ऐसे परिणाम निकालने के लिए किए जाने वाले अतिरिक्त श्रम व लगाए जाने वाले अतिरिक्त समय का उचित पारिश्रमिक कोई देने को तैयार होता है। हम भी यहां प्रधान तीन दशाओं को ही चर्चा में लेंगे। अन्यथा पुस्तक का

कलेवर बहुत बढ़ जाएगा तथा प्रारम्भिक स्तर के पाठकों के लिए जटिलता व दुरूहता बढ़ जाएगी। (प्राण दशा व सूक्ष्म दशा की आवश्यकता ADVANCE STAGE पर ही पड़ती है। यहां केवल पाठकों की जिज्ञासा शांति के लिए इनका परिचय दे दिया गया है। इनकी व्याख्या/विस्तार यहां भ्रामक व अनावश्यक होगा, अत: इन्हें किसी अन्य पुस्तक में चर्चा में लेंगे।)

संक्षेप में विंशोत्तरी दशा (ग्रहदशा) का विभाजन पांच खंडों में होगा, जिनमें प्रथम तीन ही अधिकता से प्रयुक्त किए जाएंगे। इन्हीं तीनों की हम चर्चा करेंगे।

ग्रह दशा (विंशोत्तरी)—महादशा—अन्तरदशा—प्रत्यंतरदशा—प्राणदशा—सूक्ष्मदशा

ग्रहों की दशाओं का क्रम सदैव इस प्रकार होगा। केतु, शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहू, गुरु, शनि, बुध। इसके लिए एक स्मरण सूत्र याद रखें—

दशा स्मरण सूत्र—KVSM मं. रा. गु. के साथ श. बु. से मिलने गया। (इसमें दशा क्रम स्पष्ट है—केतु, वीनस/शुक्र, सन/सूर्य, मून/चन्द्र, मंगल, राहू, गुरु, शनि, बुध)

महादशा की अवधि इस प्रकार होगी—

केतु = सात वर्ष	शुक्र = 20 वर्ष
सूर्य = छ: वर्ष	चन्द्र = 10 वर्ष
मंगल = सात वर्ष	राहू = 18 वर्ष
गुरु = 16 वर्ष	शनि = 19 वर्ष
बुध = 17 वर्ष	कुल = 120 वर्ष

अत: दशा क्रम तथा दशा अवधि दोनों को एकसाथ याद रखने के लिए स्मरण सूत्र इस प्रकार बना सकते हैं—

स्मरण सूत्र— के शु र च म/7, 20, 6, 10, 7
रा गु श बु/18, 16, 19, 17

अर्थात् केतु, शुक्र, रवि (सूर्य), चंद्र, मंगल की दशावधि क्रमश: 7, 20, 6, 10, 7 वर्ष की है और राहू, गुरु, शनि व बुध की क्रमश: 18, 16, 19, 17 वर्ष है।

प्रमुख दशा ही महादशा है। महादशा में किसी ग्रह की अंतरदशा तथा अंतरदशा से प्रत्यंतर दशा देखी जाती है। (आगे भी इसी प्रकार प्रत्यंतर में प्राण तथा प्राण में सूक्ष्म दशा देखी जाती है।)

दशा का शेष भोग्य काल (BALANCE OF DASA)—व्यक्ति यदि अपने 120 वर्ष की ब्रह्मा प्रदत्त औसत व सर्वमान्य आयु को भोगने से पूर्व समाप्त हो जाता है। (जैसा कि प्राय: होता है। आजकल तो विशेष रूप से क्योंकि जब पाराशर आदि ऋषियों ने ज्योतिषशास्त्र की रचना की तब सामान्य जनों की औसत आयु

120 वर्ष मानी थी। आज यह प्राय: 90 वर्ष ही है।) तब अगले जन्म में उसे अपनी शेष दशाएं भोगनी पड़ती हैं। अत: कोई व्यक्ति जिस ग्रह की महादशा में मरता है, उसे उसी ग्रह की शेष रह गई दशा के साथ जन्मना पड़ता है।

पाठकों ने प्राय: कुण्डलियों में दशा का शेष भोग्य काल/BALANCE OF DASA लिखा देखा होगा। यह शेष/BALANCE पूर्व जन्म की शेष दशा को दर्शाता है। जैसे यदि केतु की 7 वर्ष की महादशा को भोगते हुए कोई 5 वर्ष बाद मर गया है तो अगले जन्म में वह केतु की 2 वर्ष की शेष भोग्यकाल की दशा लेकर पैदा होगा। आगे सब दशाएं क्रमानुसार ही चलेंगी। इस संदर्भ में यह नियम याद रखना चाहिए—

नियम—जिस नक्षत्र में जातक जन्म लेता है। उसी नक्षत्र के स्वामी ग्रह की महादशा उसके जन्म के समय उसे 'बैलेंस' के रूप में मिलती है। (यानी यदि जातक विशाखा नक्षत्र में जन्मा है तो अवश्य ही गुरु की बैलेन्स ऑफ दशा लेकर पैदा हुआ होगा। जो कृतिका नक्षत्र में जन्मा है वह अवश्य सूर्य की बैलेन्स ऑफ दशा में पैदा हुआ होगा आदि।)

महादशा—महादशा का आधार चन्द्रमा है। क्योंकि जातक के जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, उसी नक्षत्र के स्वामी ग्रह की महादशा में जातक का जन्म होता है। एफेमरीज या पंचांग से तात्कालिक चन्द्रमा के अंशों को तात्कालिक ग्रह दशा से घटाकर शेष भोग्य काल (BALANCE OF DASA) जाना जाता है।

अंतर्दशा—अंतरदशा निकालने के लिए किसी ग्रह की महादशा की अवधि (वर्षों की संख्या) को उस ग्रह की महादशा की अवधि (वर्षों की संख्या) से गुणा करके 120 से भाग देते हैं, जिस ग्रह की अंतर्दशा जानना हो। क्योंकि कुल ग्रहों की महादशा की अवधि (वर्षों की संख्या) 120 ही है।

जैसे गुरु की महादशा 16 वर्ष की है और गुरु की अंतरदशा ज्ञात करनी है तो—16×16÷120 = 256/120 = 2-1-18 की अंतरदशा।

यदि गुरु में शनि का अंतर जानना होगा तो 16×16 के स्थान पर 16×19 करना पड़ेगा। क्योंकि गुरु की महादशा 16 वर्ष है और शनि की 19 वर्ष है।

महादशा सूत्र—ग्रह महादशा की अवधि × जिसकी अंतरदशा जाननी है उस ग्रह की महादशा की अवधि÷120

इस विषय में ध्यान रखें कि किसी भी ग्रह की महादशा में सबसे पहली अंतर्दशा उसी ग्रह की होती है, जिसकी महादशा है। आगे फिर दशा के क्रम के अनुसार ही अंतर्दशाएं चलती हैं। जैसे महादशा का क्रम—केतु, शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहू, गुरु, शनि, बुध का है। ऐसे में गुरु की महादशा में पहली अंतर्दशा गुरु

इसी प्रकार शेष भाव भी बदल गए हैं। अन्य लग्नों में भी इसी प्रकार भाव परिवर्तन होंगे।

पाठकों के ज्ञानवर्धन के लिए यहां दक्षिण भारत की कुंडली की संक्षिप्त चर्चा कर दी है। अन्यथा आगे समस्त चर्चा उत्तर भारतीय कुंडली पर ही होगी।

किस भाव को किस नाम से पुकारें?

1. प्रथम/पहला भाव (घर/खाना), लग्न भाव, तनु भाव, आत्म भाव आदि प्रथम भाव के नाम हैं। (FIRST HOUSE)
2. द्वितीय/दूसरा भाव (घर/खाना), धन भाव, कुटुम्ब भाव आदि द्वितीय भाव के नाम हैं। (SECOND HOUSE)
3. तृतीय/तीसरा भाव (घर/खाना), भातृ भाव, साहस भाव, पराक्रम भाव, सहज भाव आदि तीसरे भाव के नाम हैं। (THIRD HOUSE)
4. चतुर्थ/चौथा भाव (घर/खाना), मातृ भाव, सुख भाव, परिवार भाव आदि चौथे भाव के नाम हैं। (FORTH HOUSE)
5. पंचम/पांचवां भाव (घर/खाना), पुत्रभाव/संतान भाव, विद्या/शिक्षा भाव इसके नाम हैं। (FIFTH HOUSE)
6. षष्ठ/छठा भाव (घर/खाना), रोग भाव, ऋण भाव, रिपु भाव, शोक भाव, शत्रु भाव आदि इसके नाम हैं। (SIXTH HOUSE)
7. सप्तम/सातवां भाव (घर/खाना), पत्नी भाव/जाया भाव, पति भाव आदि इसके नाम हैं। (SEVENTH HOUSE)
8. अष्टम/आठवां भाव (घर/खाना), मृत्यु भाव, मारक भाव आदि इसके नाम हैं। (EIGHTH HOUSE)
9. नवम/नौवां भाव (घर/खाना) भाग्य भाव, धर्म भाव आदि इसके नाम हैं। (NINETH HOUSE)
10. दशम/दसवां भाव (घर/खाना), राज्य स्थान, कर्म भाव आदि इसके नाम हैं।
11. एकादश/ग्यारहवां भाव (घर/खाना), आय भाव, आमदनी (INCOME HOUSE), लाभ स्थान इसके नाम हैं।
12. द्वादश/बारहवां भाव (घर/खाना), व्यय स्थान, व्यय भाव, हानि भाव आदि इसके नाम हैं।

भावों के सामूहिक नाम (गुण-दोषात्मक स्वभाव)

इन बारह भावों में 6 भाव शुभ तथा 6 अशुभ होते हैं। इन 6 में भी कुछ अतिशुभ, कुछ अतिअशुभ होते हैं। कुछ उदासीन/NUTRAL भी होते हैं। इस

स्वाभाविक गुण-दोष/शुभाशुभ की दृष्टि से भावों को सामूहिक नामों से 7 भागों में विभाजित किया गया है, जिनका फलित में विशेष प्रयोग होता है। अतः इन्हें भी भली प्रकार से जान-समझ लेना चाहिए।

केन्द्र—पहला, चौथा, सातवां, दसवां भाव केन्द्र कहलाते हैं। (प्रत्येक भाव से चौथा, सातवां, दसवां उस भाव के लिए केन्द्र होता है। विशेषकर चौथा)—4, 7, 10

त्रिकोण—पहला, पांचवां तथा नौवां भाव त्रिकोण होता है। (हर भाव से पांचवां तथा नौवां उसके लिए त्रिकोण होगा)—1, 5, 9

केन्द्र

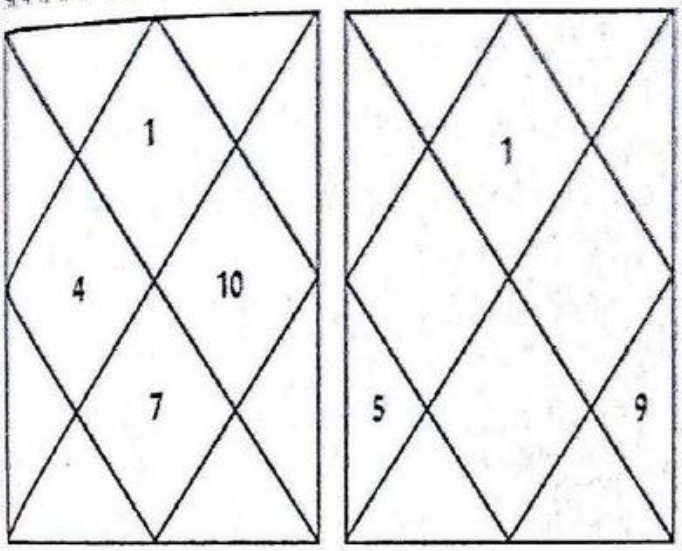

त्रिकोण

त्रिक्—छठा, आठवां, बारहवां भाव त्रिक् स्थान होते हैं। (हर भाव से छठा, आठवां, बारहवां भाव उस भाव के लिए त्रिक् होगा)—6, 8, 12

पणफर—दूसरा, पांचवां, आठवां, ग्यारहवां भाव पणफर कहे जाते हैं—2, 5, 8, 11

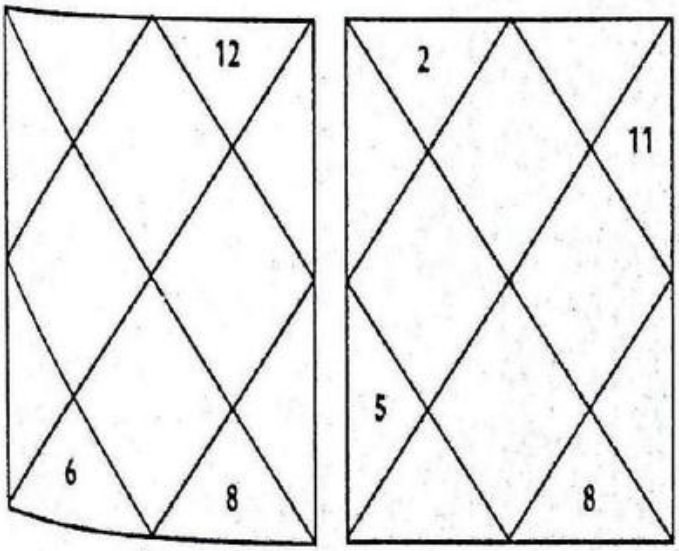

त्रिक्

पणफर

आपोक्लिम—तीसरा, छठा, नौवां, बारहवां भाव (तीन के पहाड़े में आने वाले) आपोक्लिम कहे जाते हैं—3, 6, 9, 12

उपचय—तीसरा, छठा व दसवां भाव उपचय कहलाता है—3, 6, 10

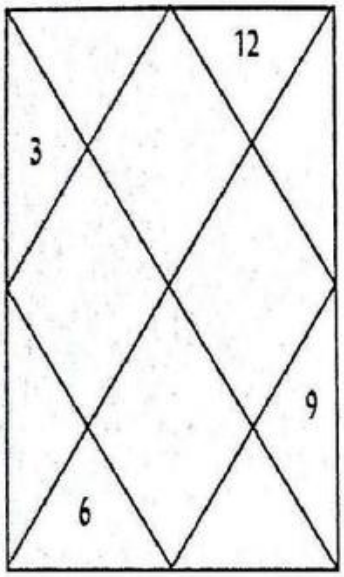

आपोक्लिम

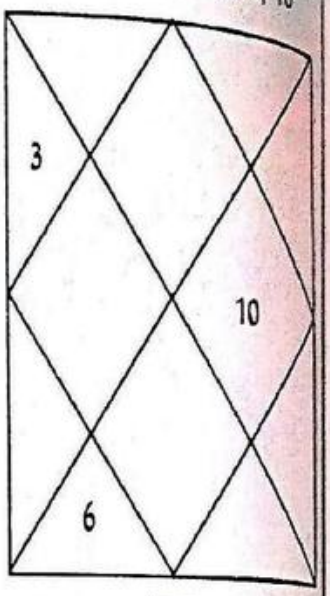

उपचय

मारक—दूसरा तथा आठवां भाव मारक कहलाता है—2, 8

त्रिषडाय—छठा व ग्यारहवां भाव त्रिषडाय कहलाता है—6, 11

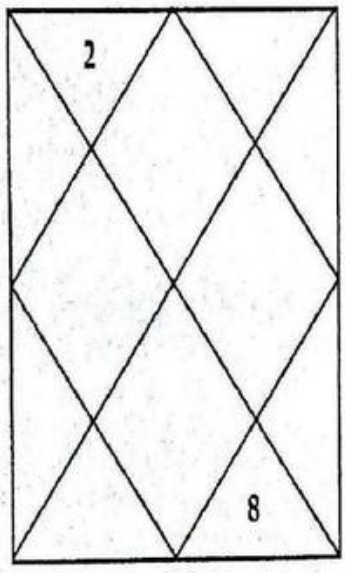

मारक

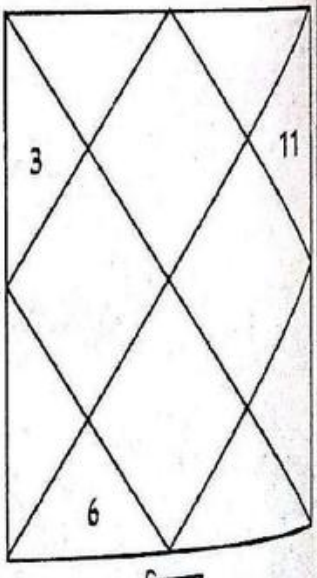

त्रिषडाय

चतुरस्त्र—चौथा व आठवां तथा बारहवां भाव चतुरस्त्र कहा जाता है—4, 8, 12

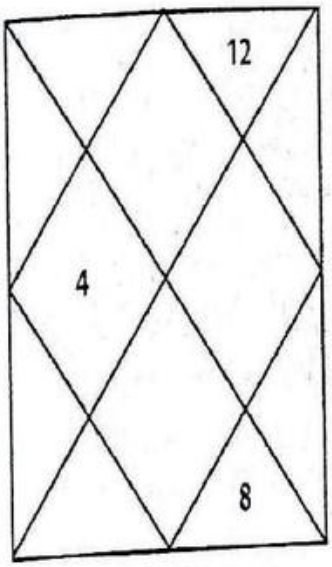

चतुरस्त्र

उपरोक्त वर्णन में बहुत से भाव अनेक विभागों में शामिल पाए जा रहे हैं। इससे पाठक भ्रमित न हों। गुण, प्रभाव तथा शुभत्व आदि की दृष्टि से जिस भाव में अनेक विशेषताएं हैं, वो तत्सम्बन्धी अनेक विभागों में शामिल हैं। फलादेश की दृष्टि से ये बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

शुभाशुभ की व्याख्या—यहां पाठकों को संक्षेप में शुभाशुभ की दृष्टि से भावों का विभाग स्पष्ट कर रहे हैं, जिससे पाठकों को सुविधा होगी।

सर्वाधिक शुभ भाव—त्रिकोण तथा केन्द्र के समस्त भाव—शुभ भावों के अन्तर्गत आते हैं। केन्द्र में 1, 4, 7, 10 भाव उत्तरोत्तर अधिक शुभ हैं। यानी पहले भाव से चौथा अधिक शुभ है। चौथे से सातवां अधिक शुभ है तथा सातवें से दसवां अधिक शुभ है। केन्द्र की अपेक्षा त्रिकोण (1, 5, 9) के भाव अधिक शुभ हैं। त्रिकोण में भी प्रथम की अपेक्षा पांचवां तथा पांचवें की अपेक्षा नौवां भाव अधिक शुभ होता है। अतः कुंडली में 5 तथा 9 भाव सर्वाधिक शुभ होते हैं। नौवें भाव को तो LUCK OF LUCK कहा जाता है।

सर्वाधिक अशुभ भाव—त्रिक्, मारक तथा त्रिषडाय भाव अशुभ माने जाते हैं। यानी—6, 8, 12, 11, 2, 3 भाव।

शुभाशुभ भाव—शेष पणफर, आपोक्लिम, उपचय व चतुरस्त्र भाव शुभ व अशुभ दोनों माने जाते हैं।

निष्कर्ष—1, 4, 5, 7, 9, 10—यह छह भाव शुभ हैं। इनमें भी 1, 5, 9 विशेष शुभ हैं। इनमें भी 9 अत्यधिक शुभ है। क्योंकि यह भाग्य स्थान है।

2, 3, 6, 8, 11, 12—यह छह भाव अशुभ हैं। इनमें भी 6,8,12 अधिक

अशुभ है। इनमें भी छठा भाव अत्यधिक अशुभ है। (यद्यपि कुछ ज्योतिषाचार्य- 3, 6, 8, 11 को ही अशुभ मानते हैं। 2 तथा 12 भाव को उदासीन अथवा न्यूट्रल मानते हैं। जबकि कुछ 2, 6, 8, 12 को अशुभ मानते हैं तथा 3 व 11 को शुभ-अशुभ दोनों मानते हैं।)

निष्कर्ष रूप से कुंडली के 6 भाव शुभ तथा 6 भाव अशुभ हैं।

नोट—कभी-कभी भाव को स्थान भी कह देते हैं।

लग्नेश—प्रथम भाव का स्वामी ग्रह कहलाता है। भावों के स्वामी **भावेश** कहे जाते हैं। राशियों के स्वामी को **राशीश** कहते हैं।

द्वितीयेश/धनेश—द्वितीय भाव का स्वामी ग्रह।

तृतीयेश/भ्रात्रेश—तृतीय भाव का स्वामी ग्रह।

चतुर्थेश/सुखेश—चतुर्थ भाव का स्वामी ग्रह।

पंचमेश/पुत्रेश—पंचम भाव का स्वामी ग्रह।

षष्ठेश/रोगेश/ऋणेश—छठे भाव का स्वामी ग्रह।

सप्तमेश/भार्येश—सातवें भाव का स्वामी ग्रह।

अष्टमेश/मारकेश—आठवें भाव का स्वामी ग्रह।

नवमेश/भाग्येश—नौवें भाव का स्वामी ग्रह।

दशमेश/कर्मेश/राज्येश—दसवें भाव का स्वामी ग्रह।

एकादशेश/आयेश लाभेश—ग्यारहवें भाव का स्वामी ग्रह।

द्वादशेश/व्ययेश—बारहवें भाव का स्वामी ग्रह।

अंग्रेजी में इनको क्रमश:

LORD OF FIRST HOUSE से LORD OF XIITH HOUSE कहा जाता है। (जिस भाव में जो राशि होती है, उस राशि का स्वामी ग्रह ही उस भाव का भी स्वामी/मालिक/LORD कहा जाता है।

□□

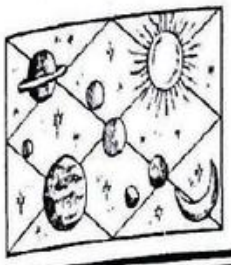

किस भाव से क्या-क्या देखें?

प्रथम भाव—लग्न, शरीर (सम्पूर्ण), कदकाठी, रंग, चेहरा/रूप, मस्तक, सिर, मस्तिष्क, नाना, दादी, प्रारम्भिक शिक्षा, व्यक्तित्व, पूर्व दिशा, स्वभाव, प्रकृति, मानसिकता/विचार आत्मा, यश, जाति आदि इस भाव से देखते हैं।

द्वितीय भाव—जायदाद/पैतृक धन, धन संग्रह, भूमि, कुटुम्ब, वाणी, मुख, दायां नेत्र, नासिका, कंठ, जिह्वा, जीवनसाथी की मृत्यु का कारण/आयु, खान-पान, शिष्टता/भाषा शैली, श्रवण शक्ति, वाक्शक्ति, मिडिल शिक्षा, पड़ोस/पड़ोसी आदि इस भाव से देखते हैं।

तृतीय भाव—छोटे भाई-बहन, बन्धु, साहस, आत्मबल/इच्छाशक्ति, कामेच्छा, संघर्षशीलता, पुरुषार्थ, कंधा, भुजा (दायां), गला, जीवनसाथी का भाग्य, ससुर, जीवनसाथी का धर्म, माता का व्यय/हानि हायर सेकण्डरी शिक्षा, पराक्रम, वीरता, दायां कान आदि इस भाव से देखते हैं।

चतुर्थ भाव—मन, कल्पना, भावना, माता, मातृसुख, घर, भवन, अपना परिवार, वाहन, ऐश्वर्य, वैभव, जीवनसाथी का कर्म, शांति/व्यथा, मनोबल, सुख, फेफड़े, हृदय, छाती, उत्तर दिशा, ग्रेजुएशन शिक्षा, भतीजा, भतीजी, अन्त:करण ससुर आदि इस भाव से देखते हैं।

पंचम भाव—प्रेम, प्रेमी/प्रेमिका, विद्या, तकनीकी शिक्षा या उच्च शिक्षा, संतान, पुत्र, माता का कुटुम्ब, अपना पेट, हृदय, आमाशय, वाहन, पूर्वजन्म, यात्रा, बुद्धि, विवेक, पीठ का ऊपरी भाग, तंत्र-मंत्र, अचानक लाभ आदि इस भाव से देखते हैं।

षष्ठ भाव—रोग, ऋण, शत्रु, शोक, मुकदमेबाजी, विवाद, मामा, मौसी, झगड़ा, अदालत, फूफा, चाची, आंतें, नाभि, दायां पैर, निराशा, शंका आदि इस भाव से देखते हैं।

सप्तम भाव—पति/पत्नी, जीवनसाथी, गुप्तांग, मूत्रमार्ग, वीर्य, पश्चिम दिशा, व्यावसायिक साझेदारी, प्रतिद्वन्द्विता प्रतियोगिता, परीक्षा, माता का वैभव, यात्रा/प्रवास, पिता का कर्मक्षेत्र, छोटे भाई की संतान, अपनी दूसरी संतान, गृहस्थ जीवन, विवाह, मारक स्थान आदि सब इस भाव से देखे जाते हैं। दादा, नानी, भोग-विलास, दैनिक रोजगार, कमर, हार-जीत, सौभाग्य आदि भी इसी भाव से देखते हैं।

अष्टम भाव—मृत्यु का कारण, जीवन अवधि/आयु, छोटा मामा, मौसी, माता का पेट, माता की विद्या, समुद्र यात्रा, छोटे भाई के रोग, ऋण, मुकदमे, डूबा/खोया हुआ धन, खजाना (गड़ा हुआ), वसीयत, ससुराल, डूबा हुआ ऋण, लॉटरी, जुआ, सट्टा, माता का प्रेमी, चोरी, गुदा, अंडकोश, धोखा/विश्वासघात, द्रोह, पुरातत्त्व, बांया पैर, कष्ट आदि इसी भाव अर्थात् मारक भाव या आठवें भाव से देखते हैं।

नवम भाव—भाग्य, धर्म, धार्मिकता, दान-पुण्य, उपासना, आध्यात्मिकता, संचित कर्म, वर्तमान स्थिति, माता के रोग, ऋण, भाभी, जीजा, साला, साली, पत्नी का आत्मबल, संघर्षक्षमता, पिता, पोता/पोती, नितम्ब व ऊपरी जांघें, यकृत, भक्ति, पीठ आदि इस भाव से देखते हैं।

दशम भाव—राज्य, सरकार, सरकारी नौकरी, व्यवसाय, आजीविका, कर्म, कर्मक्षेत्र, उन्नति, पदोन्नति, पद, प्रतिष्ठा, अवनति, सरकार द्वारा पुरस्कार/मान/दण्ड, मुकदमे, भाभी/जीजा का कुटुम्ब, वाणी, भानजा, भानजी, सास, पत्नी का मन तथा वैभव, घुटने, राजनीति, व्यापार, हृदय, छाती, गुरु आदि इस भाव से देखते हैं।

एकादश भाव—आय, आय के साधन, लाभ, पुत्रवधू, दामाद, संतान की प्रतियोगिता, संतान का प्रतिद्वन्द्वी/साझेदार, संतान की गृहस्थी व गुप्तांग, पिता का कुटुम्ब—ताऊ आदि, पिता की वाणी, माता की जीवन अवधि, मृत्यु का कारण, पत्नी का पेट व शिक्षा, मामा, मौसी के रोग, ऋण आदि, भाइयों का भाग्य/धर्म, जातक का अगला जन्म तथा लम्बी यात्रा, पिंडली, बाईं भुजा/कंधा, मित्र, बायां कान, गला आदि का विचार इस भाव से करते हैं।

द्वादश भाव—व्यय, हानि, खर्च, हस्पताल, जेल, महायात्रा, मोक्ष, मामी, मौसा, देश निकाला/निष्कासन, दायां नेत्र, शयन सुख, सम्भोग सुख, निद्रा/निद्रासुख, चाचा, बुआ/मामा, मौसी की मृत्यु का कारण/आयु क्षय, मृत्यु, पुरुषार्थ (काम शक्ति एवं काम प्रवृत्ति), विदेश का सम्बन्ध आदि इस भाव से देखते हैं।

भावों के स्थिर कारक ग्रह—भावों का कारकत्व निश्चित ग्रहों को प्रदान किया गया है। भाव में जो भी राशि हो उसका **राशीश ही भावेश** (LORD OF

HOUSE) कहलाता है। किन्तु उस भाव का कारक वही ग्रह रहता है, जो निश्चित है। भाव में राशियां परिवर्तित होती हैं। परन्तु कारक ग्रह कभी परिवर्तित नहीं होते। ये इस प्रकार हैं—प्रथम भाव—सूर्य, द्वितीय भाव—गुरु, तृतीय भाव—मंगल, चतुर्थ भाव—चन्द्र, बुध, पंचम भाव—गुरु, षष्ठ भाव—मंगल, शनि, सप्तम भाव—शुक्र, बुध, अष्टम भाव—शनि, नवम भाव—गुरु, सूर्य, दशम भाव—सूर्य, गुरु, शनि, बुध, एकादश भाव—गुरु, द्वादश भाव—शनि, राहू, शुक्र।

विशेष—स्थिर कारक सदैव वही रहते हैं। किसी भी मूल्य पर बदलते नहीं हैं। इन स्थिर कारकों के अलावा कारक ग्रह भी होते हैं, जो अस्थायी होते हैं तथा प्रत्येक कुंडली में भिन्न होते हैं। उसका नियम इस प्रकार है—**1. कुंडली में जो नवग्रहों में सर्वाधिक स्पष्ट तुल्य अंशों वाला ग्रह होगा वह आत्मा का कारक होगा। 2. उससे कम अंश वाला मातृ कारक। 3. उससे कम अंश वाला पितृ कारक। 4. उससे कम अंश वाला पुत्र कारक। 5. उससे कम अंश वाला जातिकारक। 6. उससे भी कम अंश वाला स्त्रीकारक।**

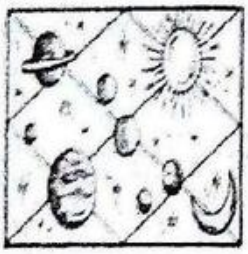

कालपुरुष की कुंडली

भारतीय ऋषियों की यह विशेषता रही है कि वे विषयों को सरल व सुग्राह्य बनाने की दृष्टि से उसका मानवीकरण करते रहे हैं। जैसे देवताओं, प्राकृतिक शक्तियों, भावनाओं, गुण-दोषों, कीटाणुओं, रोगाणुओं, ईश्वर, वर्षा, विद्युत, ग्रह-नक्षत्र-तारों, नदियों, पहाड़ों का—यहां तक कि यज्ञ व यज्ञ सामग्री का भी उन्होंने मानवीकरण किया है जिससे न केवल उन्हें समझने में सरलता रहती है वरन् उनका महत्त्व भी बढ़ जाता है। इन सबसे ऊपर किसी पदार्थ/वस्तु/शक्ति/सत्ता/अस्तित्व के भीतर छिपी आत्मा/आत्मभाव को साकार करने व उसका साक्षात्कार करने की प्रणाली भी है। इसी आधार पर वास्तुशास्त्र में 'वास्तु' का मानवीकरण करके 'वास्तुपुरुष' की कल्पना की गई है तथा ज्योतिषशास्त्र में भी 'काल पुरुष' की कल्पना की गई है। कालपुरुष को कुंडली में स्थापित करके प्रत्येक भाव से शारीरिक अंगों का सम्बन्ध स्पष्ट किया गया है। यह जातक की संरचना, शारीरिक गुण-दोष, आकृति एवं अंगों के स्वास्थ्य व शक्ति को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। 'रोग ज्योतिष' में तो इसका विशेष महत्त्व है। (रोग ज्योतिष की चर्चा हम बाद में करेंगे) यहां काल पुरुष की कुंडली प्रस्तुत है—

कालपुरुष की कुंडली

जन्मकुंडली के भाव—त्रिगुण तथा पुरुषार्थचतु: का परिचय भी देते हैं।

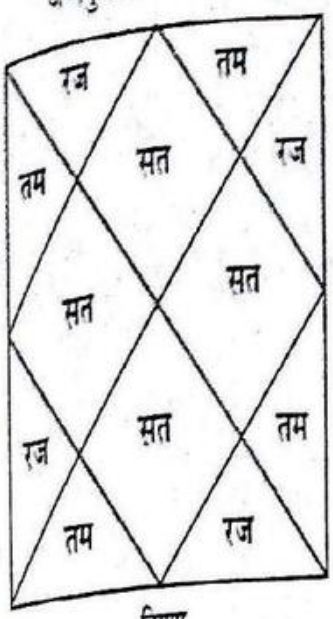

त्रिगुण

चार पुरुषार्थ

कालपुरुष कुंडली में भाव व्यवस्था हम जान चुके, अब राशि व ग्रहों का आधिपत्य भी देखें—

कालपुरुष कुंडली में राशियों का आधिपत्य—प्रथम भाव—मेष राशि, द्वितीय भाव—वृष राशि, तृतीय भाव—मिथुन, चतुर्थ भाव—कर्क, पंचम भाव—सिंह, षष्ठ भाव—कन्या, सप्तम भाव—तुला, अष्टम भाव—वृश्चिक, नवम भाव—धनु, दशम भाव—मकर, एकादश भाव—कुम्भ राशि तथा द्वादश भाव—मीन राशि।

कालपुरुष के शरीर में ग्रहों का आधिपत्य—सूर्य—आत्मा, मस्तक व दायां नेत्र, चंद्र—मन एवं वक्ष, बायां नेत्र, मंगल—पराक्रम एवं भुजाएं, बुध—आंतें तथा त्वचा, गुरु—यकृत एवं चर्बी, शुक्र—वीर्य, काम एवं मूत्र, शनि—विषाद, नाड़ी तंत्र।

विशेष—इन सबके अतिरिक्त 12 भावों से और भी बहुत कुछ देखा जाता है। रोग ज्योतिष/प्रश्न कुंडली की दृष्टि से भी तथा रिश्ते, अंगों व अन्य दृष्टियों से भी। जैसे—

प्रथम भाव—चित्त, साहस (आत्मबल), शरीराकृति आदि।

द्वितीय भाव—सेवक, मित्र, बैंक-बैलेंस, संसार में आसक्ति, अचल सम्पत्ति, सोना-चांदी व रत्न संग्रह, दाढ़ी-मूछ आदि।

तृतीय भाव—गुप्तशत्रु, पड़ोसी, नजदीकी रिश्तेदारों/बांधवों का सुख, धैर्य, चालाकी, पत्र लेखन, गुप्त कामेच्छा।

चतुर्थ भाव—भूमिसुख, चार पहियों का वाहन, पैतृक संपत्ति, अचल सम्पत्ति, बगीचा, स्तन, मित्र, जनता, बुढ़ापे की स्थिति, स्वयं का परिवार आदि।

पंचम भाव—कामुकता, व्यभिचार के सम्बन्ध, ज्ञान, नीति, प्रतिभा, विनय आदि।

षष्ठ भाव—दुख, चिंता, अशुभ कर्म, बदनामी, कार्यों में रुकावट, चोरी की संपत्ति आदि।

सप्तम भाव—वैवाहिक जीवन, मैथुन, साइड बिजनेस, स्त्री की कुंडली में पति का नपुंसकत्व, वियोग, तलाक, विधवा/विधुर होना, विदेश यात्रा आदि।

अष्टम भाव—उलटी बातें, अज्ञान, आलस्य, वसीयतनामा आदि।

नवम भाव—धार्मिक भावनाएं, तीर्थ यात्रा, दीक्षा, लम्बी यात्रा (विदेश यात्रा), देवर, दान आदि।

दशम भाव—सरकारी नौकरी, सरकार, आजीविका, विदेश गमन आदि।

एकादश भाव—मित्र, सहयोगी/सहायक आदि।

द्वादश भाव—विदेश में स्थायी रूप से बसना, शरीर का नाश, राजदंड, जुर्माना, परदेश गमन, जेल यात्रा, खर्चों की स्थिति, बाहरी सम्बन्ध आदि।

किस भाव से क्या देखा जाना चाहिए?

कुण्डली के 12 भावों से क्या-क्या देखते हैं? इसकी चर्चा पहले की जा चुकी है। परन्तु अगर प्रश्न यह हो कि कुण्डली के 12 भावों से क्या-क्या देखा जा सकता है? तो इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए शायद एक अलग पुस्तक की आवश्यकता पड़े। क्योंकि ऐसा कुछ भी नहीं है जो इन बारह भावों द्वारा देखा न जा सकता हो। विशेष प्रश्नों के विचार के लिए कुंडली को घुमाने की जरूरत पड़ती है। जितना ही कुंडली घुमाते जाएंगे उतना ही इन्हीं बारह भावों से अलग-अलग ज्ञान प्राप्त करते चले जाएंगे। जितना गहनता में जाएंगे उतना ही अधिक घटक/तथ्य इन भावों से पकड़ पाएंगे।

उदाहरण के लिए कुंडली का आठवां भाव जातक की आयु व मृत्यु का कारण बताता है। रोग व शारीरिक अंगों की दृष्टि से आठवें भाव से गुदा तथा अंडकोष देखते हैं। यूं आठवां भाव आकस्मिक बाधा व आकस्मिक हानि तथा गुप्त रहस्यों का भी है। अब जरा कुंडली को घुमाते हैं। प्रथम भाव जातक का है और सातवां भाव उसके जीवनसाथी का है। दूसरा भाव जातक के कुटुम्ब, वाणी, धन, पैतृक सम्पत्ति, मुख, बाएं नेत्र आदि का है तो आठवें भाव से जातक के जीवन साथी का कुटुम्ब, वाणी, धन, पैतृक सम्पत्ति, मुख, बायां नेत्र आदि भी देखे जाएंगे क्योंकि यह सातवें से दूसरा होने के कारण जीवनसाथी का दूसरा भाव हुआ। अतः आठवें भाव से जातक की ससुराल भी देखी जाएगी।

इसी प्रकार कुंडली का चौथा भाव माता का है तो आठवां भाव माता की

शिक्षा, विद्या, ज्ञान, उदर, संतान आदि का भी होगा। क्योंकि यह माता के भाव (चौथे) से पांचवां हुआ और पांचवें भाव से शिक्षा, ज्ञान, उदर, संतान आदि देखे जाते हैं।

और कुंडली घुमाएं तो नौवां भाव पिता, धर्म, भाग्य, आस्तिकता आदि का है। आठवां भाव क्योंकि नौवें से बारहवां हुआ, अतः पिता, धर्म आदि का व्यय, हानि, नुकसान आदि आठवें घर से देखेंगे। क्योंकि बारहवां भाव हानि तथा व्यय का है और हमारी कुंडली का आठवां भाव हमारे लिए मारक है। परन्तु हमारे पिता के भाव से बारहवां होने के कारण पिता के लिए बारहवां भाव हुआ। इसी प्रकार तीसरा भाव भाइयों का है। हमारी कुंडली का छठा भाव यद्यपि रोग-ऋण-शत्रु का है, परन्तु माता के भाव (चौथे) से तीसरा होने के कारण माता के भाइयों-बहनों का भाव भी यही होगा। अतः छठे भाव से मामा, मौसी भी देखेंगे। बात आठवें भाव की चल रही थी। आठवां भाव छठे से तीसरा है। अतः मामा, मौसी के छोटे भाई-बहन, उनकी संघर्ष क्षमता, उनके कंधे, पुत्र आदि आठवें भाव से देखेंगे। क्योंकि हमारी कुंडली का 8वां भाव हमारे मामा, मौसी के भाव (छठे) से तीसरा होगा।

इस प्रकार कुंडली घुमाने पर एक ही भाव से सैकड़ों तथ्य विचारे जाते हैं। सबको लिपिबद्ध करना सम्भव नहीं है। (न ही प्रारम्भिक पाठकों के लिए यह आवश्यक है। इच्छुक पाठक कुंडली घुमा सकें इसलिए यह थोड़ा-सा स्पष्टीकरण कर दिया है।) सामान्य पाठकों के लिए स्थूल तथ्यों से ही काम चल जाएगा जो ज्योतिष में गहनता से अध्ययन करना चाहें उनका भी मार्गदर्शन हो सके, इसलिए यह संक्षिप्त दिशा-निर्देश या मार्गदर्शन कर दिया है।

यहां हम उन स्थूल तथ्यों को बताएंगे जिन्हें प्रामाणिक व शास्त्रोक्त रूप से मान्यता प्राप्त है। जो प्रमुख रूप से इन भावों से देखा जाता है (आगे कुंडली घुमाने पर अगणित बातें पाठक देख सकते हैं)।

कुंडली के 12 भाव : प्रमुख विषय

ज्योतिषशास्त्र जिन प्रमुख एवं मूल विषयों को इन बारह भागों से सम्बद्ध करता है, वो इस प्रकार हैं—

प्रथम भाव

देहं रूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाबलम्।
सुखं दुखं स्वभावञ्च लग्नभावान्निरीक्षयेत्॥

शरीर, रूप, ज्ञान, रंगत, बलाबल (शारीरिक सामर्थ्य), सुख-दुख एवं स्वभाव—इनको लग्न (प्रथम भाव) से विचारा जाना चाहिए।

द्वितीय भाव

धन धान्यं कुटुम्बांश्च मृत्युजालं मित्रकम्।
धातु रत्नादिकं सर्वं धनस्थानान्निरीक्षयेत्॥

धन, धान्य (बैंक-बैंलेस आदि), कुटुम्ब, मृत्यु, अमित्र, धातु (सोना, चांदी, जेवर आदि), रत्न, वाणी आदि का विचार दूसरे भाव से ही किया जाता है।

तृतीय भाव

विक्रमं भृत्य भ्रात्रादि चोपदेश प्रयाणकम्।
पित्रोर्वा मरणं विज्ञो दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत्॥

पराक्रम/वीरता, सेवक, भाई (छोटे), उपदेश, यात्रा, माता व पिता की मृत्यु आदि का विचार तीसरे भाव से करें।

चतुर्थ भाव

वाहनान्यथ बन्धूश्च मातृ सौख्यादिकान्यपि।
निधिं क्षेत्रं ग्रहं चापि चतुर्थात् परिचिन्तयेत्॥

वाहन (चौपाया), बन्धु, माता, सुख, निधि (ऐश्वर्य), खेत, घर-मकान आदि का विचार चौथे भाव से करना चाहिए (मन एवं शांति को भी इसी भाव से देखते हैं)।

पंचम भाव

यन्त्रमन्त्रं तथा विद्यां बुद्धेश्चैव प्रबन्धकम्।
पुत्रराज्यापभ्रंशादीन् पश्येत् पुत्रालयाद् बुधः॥

यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि, प्रबन्ध (मैनेजमेंट व लेखन, योजना आदि), पुत्र/संतान, राज्यच्युत होना आदि को बुद्धिमानजन पांचवें घर से देखते हैं।

षष्ठ भाव

मातुलान्तकशंकानां शत्रूंश्चैव प्रणादिकान्।
सपत्नीमातरं चापि षष्ठ भावान्निरीक्षयेत्॥

मामा (मौसी), रोग, शत्रु, प्रण, ऋण तथा सौतेली माता का विचार छठे घर से किया जाता है (कुछ ज्योतिर्विद् नौकरी का विचार भी छठे घर से करते हैं)।

सप्तम भाव

जाया मध्वप्रयाणं च वाणिज्यं नष्टवीक्षणम्।
मरणं च स्वदेहस्य जाया भावान्निरीक्षयेत्॥

पत्नी/पति, यात्रा, व्यापार (साझा), खोई वस्तु, मारकता, पत्नी का शरीर आदि सातवें भाव से देखते हैं।

अष्टम भाव

आयुं रणं रिपुं चापि दुर्गं मृतधनं तथा।
गत्यनुकादिकं सर्वं पश्येद्रन्ध्राद्विचक्षण॥

आयु, युद्ध, शत्रु, किला, मरे व्यक्ति का धन—(वसीयत, बीमा आदि) अथवा मरा हुआ धन (डूबा हुआ पैसा/भूमिगत हो गया धन), छिद्र (LOOP-HOLE) आदि को आठवें भाव से देखते हैं। क्लेश, अपवाद, मृत्यु, विघ्न, दास तथा स्त्रियों का सौभाग्य भी इसी भाव से विचारा जाता है।

नवम भाव

भाग्यं श्यालं च धर्मं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा।
तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मं स्थानान्निरीक्षयेत्॥

भाग्य, धर्म, भाई की स्त्री, तीर्थयात्रा, साले का विचार नौवें भाव से करते हैं। गुरु, आचार्य, तप, पुण्य आदि भी इसी भाव से विचारते हैं (दक्षिण भारतीय ज्योतिष में पिता का विचार भी नौवें भाव से ही किया जाता है)।

दशम भाव

राज्यं चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा।
प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योम स्थानान्निरीक्षणम्॥

राज्य, आकाशवृत्तांत, सम्मान, पिता, प्रवास, ऋण, हुकूमत, पद प्राप्ति, ऊंचाई, पद, व्यापार, उन्नति, कर्म, आज्ञा आदि को दसवें भाव से देखते हैं।

एकादश भाव

नानावस्तु भवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च।
आयं वृद्धिं पशूनां च भव स्थानान्निरीक्षणम्॥

अनेक वस्तु, आय, लाभ, पुत्रवधू, वृद्धि, पशुशाला, प्राप्ति, प्रशंसा आदि ग्यारहवें भाव से देखे जाते हैं।

द्वादश भाव

व्ययं च वैरिवृत्तान्त रिःकमन्त्यादिकं तथा।
व्ययाच्चैव हि ज्ञातव्यमिति सर्वत्र धीमता॥

व्यय, खर्चा, शत्रुओं का वृत्तान्त, गुप्त शत्रु, वाम नेत्र, दुख, पैर, खुफिया पुलिस, चुगलखोर, दरिद्रता, पाप, शयन सुख आदि का विचार बारहवें घर से करते हैं (जेलयात्रा, अंतिमयात्रा, हस्पताल आदि भी इसी घर से विचारे जाते हैं)।

विशेष—दूसरा, सातवां तथा आठवां स्थान मारक होते हैं। अतः द्वितीयेश,

अष्टमेश व सप्तमेश मारकेश कहे जाते हैं। यह एक मजे की बात है कि सप्तम भाव पत्नी का भी होता है और मारक भी होता है। क्योंकि 180° पर आमने-सामने होने से प्रतिद्वन्द्वता इसी भाव से आती है। और भी मजे की बात यह है कि मारकेश की दशा/अन्तर्दशा में ही जातक की मृत्यु होती है तथा मारकेश की ही दशा/अन्तर्दशा में जातक का विवाह भी होता है।

अतिविशेष—गुरु, शुक्र व शनि क्योंकि क्रमशः दूसरे, सातवें तथा आठवें भाव के कारक हैं। अतः मारक स्थानों के कारक होने से इनकी अनुकूलता प्राप्त हुए बिना जातक का विवाह नहीं होता। ये तीनों ही आचार्य हैं। इन तीनों की कृपा प्राप्त हुए बिना जातक का जीवन सुखमय तथा उन्नत भी नहीं होता (तीनों में से कम से कम एक का अनुकूल होना जीवन में उन्नति के लिए अनिवार्य है)। मारकेश तो वो ग्रह होंगे जो कुंडली में दूसरे, सातवें व आठवें घर के स्वामी होंगे। परन्तु गुरु, शुक्र, शनि इन भावों के स्थायी कारक होने से गुप्त मारकेश भी कहे जा सकते हैं। यह ध्यान रखना चाहिए।

□□

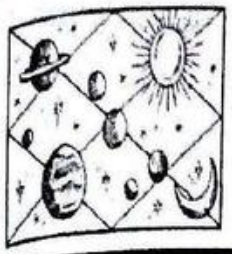

फलादेश के सूत्र, नियम व सिद्धांत

यहां हम कुंडली को पढ़ना (उनका अध्ययन, विश्लेषण) तथा निष्कर्ष निकालना (फलादेश) सिखाएंगे। यह पाठकों के लिए अधिक रुचिकर होगा।

ग्रहों का मूल त्रिकोण राशि में होने का फल

सूर्य—सूर्य यदि लग्नकुंडली में अपनी मूलत्रिकोण राशि में हो (सिंह के 20° तक) तो जातक सम्मान, धन, सुख एवं यश प्राप्त करनेवाला होता है।

चन्द्र—चन्द्रमा यदि लग्नकुंडली में अपनी मूलत्रिकोण राशि (वृष के 4° से 30° तक) में हो तो जातक को धन व पद तो दिलाता है। परन्तु स्वार्थी, क्रोधी, नीच, दुष्ट, निर्दयी व चरित्रहीन भी बनाता है (चन्द्रमा के सम्बन्ध में यह अवश्य देखना चाहिए कि चन्द्रमा शुक्ल पक्ष का है अथवा कृष्ण पक्ष का। क्योंकि इससे चन्द्रमा के फल क्रमशः शुभ व अशुभ हो जाते हैं)।

मंगल—मंगल यदि लग्नकुंडली में अपनी मूलत्रिकोण राशि (मेष के 18° तक) में हो तो जातक को धनी, स्वार्थी व नीच प्रकृति का बनाता है।

बुध—बुध यदि लग्नकुंडली में अपनी मूलत्रिकोण राशि (कन्या 16° से 20° तक) में हो तो जातक को विद्वान, महत्वाकांक्षी, अत्यंत धनाढ्य, व्यवसायी बनाता है।

गुरु—गुरु यदि लग्नकुंडली में अपनी मूल त्रिकोण राशि (धनु के 13° तक) में हो तो जातक को यशस्वी, तपस्वी, ज्ञानी व धार्मिक बनाता है।

शुक्र—शुक्र यदि लग्नकुंडली में अपनी मूल त्रिकोण राशि (तुला के 10° तक) में हो तो जातक को भूमिपति, स्त्रीप्रिय तथा पुरस्कार जीतने वाला बनाता है।

शनि—शनि यदि लग्नकुंडली में अपनी मूलत्रिकोण राशि (कुम्भ के 20° तक) में हो तो जातक को साहसी, सेनापति, वैज्ञानिक, अस्त्र-शस्त्र निर्माता तथा कर्तव्यनिष्ठ बनाता है।

राहू-केतु—राहू-केतु छाया ग्रह हैं। ये किसी राशि के स्वामी नहीं हैं। तथापि इनकी मूलत्रिकोण, उच्च व नीच राशि अवश्य मानी गई हैं। फलकथन को

दृष्टि से याद रखें कि राहू-केतु तथा बुध जिस ग्रह के साथ होते हैं, वैसा ही फल प्रदान करते हैं। अकेले होने पर ही इनका निज/स्वतंत्र प्रभाव जातक पर पड़ता है। राहू व केतु के फल क्रमश: शनि व मंगल की भांति होते हैं। जैसा कि कहा गया है—**शनिवत् राहुकुजवत्केतु** (अर्थात् राहू शनि के समान तथा केतु मंगल के समान फल देता है।) राहू की मूलत्रिकोण राशि कुम्भ है और केतु की सिंह।

ग्रहों का उच्च राशि में होने का फल

सूर्य—यदि सूर्य लग्नकुंडली में अपनी उच्चराशि (मेष) में हो तो जातक को सौभाग्य, धन, नेतृत्व क्षमता, विद्या, शौर्य, यश एवं सुख प्रदान करता है।

चन्द्र—चन्द्रमा यदि लग्नकुंडली में अपनी उच्चराशि (वृष) में हो तो जातक अलंकार व शृंगारप्रिय, मिष्ठानप्रेमी, यशस्वी, विलासी, लोकप्रिय व सम्मानित, प्रेमी, सुखी तथा चंचल होता है। (पुन: स्मरण दिला दें कि चन्द्रमा जन्म के समय शुक्ल या कृष्ण पक्ष में से कौन-सा है—यह अवश्य देखना चाहिए।)

मंगल—मंगल यदि लग्नकुंडली में अपनी उच्चराशि (मकर) में हो तो जातक पराक्रमी, साहसी, कर्तव्यनिष्ठ तथा राज्य से सम्मान प्राप्त करने वाला होता है।

बुध—बुध यदि लग्नकुंडली में अपनी उच्चराशि (कन्या) में हो तो जातक चतुर, लेखक, सुखी, राजमान्य, वंशवृद्धिकर्त्ता, बुद्धिमान, प्रसन्नचित्त व शत्रुहंता होता है।

गुरु—गुरु लग्नकुंडली में यदि अपनी उच्चराशि (कर्क) में हो तो जातक ज्ञानी, मंत्री, शासक, विद्वान, राजा का प्रिय, सुखी, धीर-गम्भीर तथा ऐश्वर्यशाली होता है।

शुक्र—शुक्र लग्नकुंडली में यदि अपनी उच्चराशि (मीन) में हो तो जातक कामी, भोगी, विलासी, भाग्यवान, शौकीनमिजाज तथा संगीत व कलाप्रेमी होता है।

शनि—शनि यदि लग्नकुंडली में अपनी उच्चराशि (तुला) में हो तो जातक जमींदार, कृषक/खेती से सम्बन्धित कारोबार करने वाला अथवा राजा, अधिपति, यशस्वी एवं परमशक्तिवान होता है।

राहू—राहू यदि लग्नकुंडली में अपनी उच्चराशि (मिथुन) में हो तो जातक वीर, धनी, निडर परन्तु लम्पट, युद्ध व कलहप्रिय और द्यूतप्रेमी होता है।

केतु—केतु यदि लग्नकुंडली में अपनी उच्च राशि (धनु) में हो तो जातक को राजा, भ्रमणप्रिय परन्तु निम्न प्रकृति (नीच स्वभाव) वाला बनाता है।

ग्रहों का स्वराशि में होने का फल

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि ये सातों स्वराशि/स्वक्षेत्र में अपने स्वभाव व गुणों के अनुसार ही फल देते हैं। (ग्रहों के गुण-स्वभाव पहले समझा

दिए गए हैं। यहां उनका दोहराना आवश्यक नहीं समझते पर निष्कर्ष रूप में कुछ तथ्य याद रखिए)—

- कुंडली में यदि एक भी ग्रह स्वराशि में हो तो जातक को पंक्ति में श्रेष्ठ बनाता है।
- दो ग्रह कुंडली में स्वक्षेत्री हों तो जातक धनी तथा सम्मानित होता है। तीन हों तो सम्मान व धन और बढ़ाता है।
- यदि चार ग्रह स्वक्षेत्री हों तो जातक धन-सम्मान के साथ यश, सम्पन्नता व नेतृत्व गुणों से युक्त होता है।
- पांच या पांच से अधिक ग्रह स्वक्षेत्री हों तो जातक राजा या राजा के समान होता है। अर्थात् भूमि, धन, पद, अधिकार, ऐश्वर्य, शक्ति, यश से सम्पन्न होता है।
- राहू और केतु स्वक्षेत्री स्वराशि में हों तो शनि तथा मंगल के समान फल प्रदान करते हैं।

ग्रहों का मित्र राशि में होने का फल (भाग-I)

- एक ग्रह कुंडली में मित्रराशि/मित्रक्षेत्र में हो तो जातक को पराए धन की प्राप्ति होती है।
- दो ग्रह मित्र क्षेत्र में हों तो जातक मित्र के धन का उपयोग व सहयोग प्राप्त करता है।
- तीन ग्रह मित्र राशि के हों तो स्वार्जित धन का उपयोग जातक करता है तथा स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर होता है।
- चार ग्रह कुंडली में मित्रराशि में हों तो जातक स्वावलम्बी व आत्मनिर्भर होने के साथ दानी तथा औरों को धन का सहयोग देने वाला होता है।
- पांच ग्रह स्वक्षेत्री हों तो जातक में नेतृत्व क्षमता होती है।
- छ: ग्रह मित्रक्षेत्री हों तो जातक उच्च पदाधिकारी तथा सम्मानित होता है।
- सात ग्रह मित्रक्षेत्री हों तो जातक राजा के समान होता है।
- राहू-केतु यदि मित्रक्षेत्री हों तो शनि के समान फल देने वाले होते हैं।

निष्कर्ष—जातक की कुंडली में जितने अधिक ग्रह उच्च के होंगे, भाग्य की दृष्टि से व शुभ फलों की वृद्धि की दृष्टि से उतना ही श्रेष्ठ होगा। उच्च के न हों तो मूल त्रिकोण में हों। यदि उच्च या मूलत्रिकोण राशि में कोई ग्रह नहीं है तो कम से कम स्वराशि या मित्र राशि में अधिकाधिक ग्रह हों। कम से कम दो-चार तो होने ही चाहिए।

विशेष—संक्षिप्त फलादेश निष्कर्ष के लिए याद रखें कि मित्र या स्वक्षेत्री ग्रह 'बालावस्था' संज्ञा वाले माने गए हैं। इनका प्रभाव 'सुख' होता है। मूलत्रिकोण

राशि में स्थित ग्रह 'कुमार अवस्था' संज्ञा वाले होते हैं। इनका प्रभाव 'श्रेष्ठ आचरण' होता है। अपनी उच्च राशि में स्थित ग्रह 'युवराज/युवावस्था' संज्ञा वाले होते हैं। इनका फल प्रभाव 'राज्याधिकार' होता है। जबकि शत्रु राशि में स्थित ग्रहों की संज्ञा 'वृद्धावस्था' होती है। इनका प्रभाव 'ऋण व रोग' होता है। नीच राशि के ग्रह अथवा अस्त या सन्धि के ग्रह मृतप्राय अवस्था वाले होते हैं, ये प्राय: निष्फल होते हैं। अथवा अशुभ फलों में वृद्धि करते हैं।

ग्रहों का मित्र राशि में होने का फल (भाग-II)

सूर्य—सूर्य जन्मकुंडली में यदि अपने मित्रों (चन्द्र, मंगल व गुरु) की राशियों में से किसी राशि में हो तो मित्र राशि में माना जाएगा। ऐसा सूर्य जातक को दानी, यशस्वी, व्यवहारकुशल तथा सौभाग्यशाली बनाता है।

चन्द्र—जन्मकुंडली में चन्द्रमा यदि अपने मित्रों सूर्य या बुध की राशियों (सिंह या कन्या) में हो तो जातक गुणी तथा धनवान होता है।

मंगल—जन्मकुंडली में मंगल अपने मित्रों सूर्य, चन्द्र व गुरु की राशियों में से किसी में यदि हो तो जातक धनी व प्रिय होता है।

बुध—जन्मकुंडली में यदि बुध अपने मित्रों सूर्य या शुक्र की राशियों में हो तो जातक निपुण, शास्त्रज्ञ, हंसमुख व दयालु होते हैं।

गुरु—गुरु कुंडली में अपने मित्रों सूर्य, चन्द्र, मंगल की राशियों में से किसी में हो तो जातक सुखी, बुद्धिमान होता है तथा जीवन में उन्नति करता है।

शुक्र—जन्मकुंडली में शुक्र अपने मित्रों शनि या बुध की राशियों में से किसी में हो तो जातक सुखी तथा पुत्रवान होता है।

शनि—जन्मकुंडली में शनि अपने मित्रों बुध या शुक्र की राशियों में से किसी में हो तो जातक मित्र स्वभाव का, धनी व सुखी होता है।

विशेष—सिंह राशि का गुरु यद्यपि शुभ फल देता है। परन्तु प्राय: देखने में आया है कि ऐसे जातक को सन्तान कठिनाई से ही प्राप्त होती है।

ग्रहों का शत्रुराशि/शत्रुक्षेत्र में होने का फल

सूर्य—सूर्य यदि कुंडली में अपने शत्रुओं शुक्र या शनि की राशियों में से किसी में हो तो जातक सदा दुखी रहता है। प्राय: नौकरी करता है। किन्तु उसे जीवन में वो सम्मान नहीं मिल पाता जिसका वह अधिकारी होता है।

चन्द्र—चन्द्रमा यद्यपि अजातशत्रु है। कोई ग्रह उसका शत्रु नहीं है तथापि छायाग्रह राहू व केतु उसके शत्रु हैं। राहू तथा केतु की स्वराशि मिथुन व धनु मानी गई है। (वास्तव में स्वराशि नहीं यह इनकी उच्च राशि हैं। परन्तु यही स्वराशि के रूप में आवश्यकता पड़ने पर प्रयुक्त की जाती हैं। कुछ ज्योतिर्विद वृष तथा वृश्चिक को इनकी स्वराशि मानते हैं। परन्तु ये भी वास्तव में इनकी उच्च राशियां ही हैं, जो आवश्यकता होने पर स्वराशि के रूप में स्वीकार कर ली जाती हैं) चन्द्रमा यदि राहू-केतु की राशियों में कुंडली में बैठा हो तो जातक हृदय रोगी तथा माता के कारण/माता की ओर से दुखी होता है।

मंगल—मंगल अपने शत्रु बुध की राशि में हो तो जातक को दीन बना देता है।

बुध—बुध अपने शत्रु चन्द्र की राशि में हो तो जातक कर्तव्यहीन होता है तथा सामान्य सुख ही प्राप्त करता है।

गुरु—गुरु अपने शत्रु बुध या शुक्र की राशि में हो तो जातक चतुर, कूटनीतिज्ञ व भाग्यशाली होता है तथा धर्म के मामले में नियमित व रुचि लेने वाला नहीं होता।

शुक्र—शुक्र अपने शत्रु सूर्य या चन्द्र की राशि में हो तो जातक दास प्रवृत्ति का तथा गुलामी/सेवा द्वारा जीवनयापन करने वाला होता है।

शनि—शनि अपने शत्रु सूर्य, चन्द्र या मंगल की राशि में हो तो जातक जीवनभर दुखी व चिन्तित रहता है।

विशेष—जिस जातक की कुण्डली में जितने अधिक ग्रह शत्रु क्षेत्र/शत्रु राशि में हों—जातक उतना ही दुखी, चिन्तित, दरिद्र तथा भाग्यहीन होता है। यह संक्षिप्त फलादेश के रूप में याद रखें। वैसे तीन ग्रह शत्रुक्षेत्रीय हों तो जीवन का पूर्वार्द्ध तथा मध्य दु:खों से घिरा रहता है। किन्तु उत्तरार्द्ध में कुछ सुख मिल जाता है। तीन से अधिक ग्रह शत्रुराशि में हों तो सारा जीवन दुखों में ही रहता है। तीन से कम हों तो जीवन में सुख-दुख साथ चलते रहते हैं।

ग्रहों का नीच राशि में होने का फल

सूर्य—कुंडली में सूर्य अपनी नीच राशि (तुला) में हो तो जातक पाप कर्मा किन्तु बन्धु सेवक होता है। आत्मबल कमजोर रहता है।

चन्द्र—चन्द्रमा कुंडली में अपनी नीच राशि (वृश्चिक) में हो तो जातक निष्ठुर, मातृसुख में अभाव वाला तथा कमजोर मनोबल वाला होता है।

मंगल—मंगल अपनी नीच राशि (कर्क) में हो तो जातक उत्साहहीन, प्राय: डरपोक होता है।

बुध—बुध अपनी नीच राशि (मीन) में हो तो जातक की बुद्धि, विद्या तथा शिक्षा अल्प होती है या कठिनाई से पूरी हो पाती है।

गुरु—गुरु अपनी नीच राशि (मकर) में हो तो जातक ज्ञान तथा धर्म के विषय में अल्प रुचि वाला होता है। प्राय: ऐसा जातक हठबुद्धि होता है और शिक्षा में व्यवधान पड़ता है।

शुक्र—शुक्र अपनी नीच राशि (कन्या) में हो तो जातक सदा दुखी रहता है। उसका पौरुष तथा भोग संदेहास्पद होते हैं।

शनि—शनि अपनी नीच राशि (मेष) में हो तो जातक दरिद्र होता है।

निष्कर्ष—संक्षिप्त फलादेश की दृष्टि से ध्यान रखिए कि कुंडली में जितने अधिक ग्रह नीच राशि के होंगे, उतना ही अशुभ फल जातक को भोगना होगा। यदि तीन या तीन से अधिक ग्रह नीच के हों तो जातक बड़ा दुर्भाग्यशाली तथा महामूर्ख होता है (कहना न होगा कि राहू व केतु अपनी नीच राशि में शनि-मंगल के समान ही फल देने वाले होते हैं)।

स्मरणीय तथ्य—जातक की कुंडली में अधिकांश ग्रह उच्च, मूलत्रिकोण, स्व या मित्र राशि के हों तो पूर्वोत्तर अधिक शुभ प्रभाव होते हैं। जबकि शत्रु क्षेत्रीय या नीच राशि के ग्रह अधिक हों तो उत्तरोत्तर अशुभ प्रभाव होते हैं। मोटेतौर पर मूल त्रिकोण व उच्च राशि के ग्रह अतिशुभ, स्वराशि व मित्रराशि के ग्रह सामान्य शुभ तथा शत्रु राशि या नीच राशि के ग्रह अशुभ होते हैं। किन्तु साथ ही यह भी अवश्य देखना चाहिए कि ग्रह अस्त न हो, अथवा सन्धि में न हो, अथवा अति बाल्यावस्था का या अतिवृद्धावस्था का न हो। अन्यथा उच्च का होकर भी विशेष फल नहीं दे सकेगा। दूसरे यह भी ध्यान देना चाहिए कि कोई ग्रह वक्री तो नहीं है।

सामान्यत: शुभ ग्रह वक्री होने पर और भी शुभ हो जाते हैं। जबकि अशुभ ग्रह वक्री होने पर और भी अशुभ हो जाते हैं (परन्तु रोग ज्योतिष में अशुभ ग्रह का वक्री होना अच्छा तथा शुभ ग्रह का वक्री होना खराब माना गया है। यह ध्यान रखें)। शायद यह स्मरण दिलाने की जरूरत न होगी कि राहू-केतु सदा वक्री ही रहते हैं और सूर्य-चन्द्र सदा मार्गी ही रहते हैं। अत: इनका वक्री/मार्गी होना उपरोक्त फलादेश में कोई मायने नहीं रखता।

समीक्षा के लिए राम, कृष्ण, विक्रमादित्य आदि की कुंडलियां

कुछ कुंडलियों की पाठक स्वयं समीक्षा करें। इनमें अधिकांश ग्रह अपनी उच्च राशियों में बैठे हैं। परिणामत: जिन लोगों की ये कुंडलियां हैं। वे महान यशस्वी, प्रतापी, गुणी, लोकप्रिय तथा इतिहास में अमर हो गए हैं। इनके गुणों की गिनती करना भी सामान्य व्यक्ति की सामर्थ्य से परे है।

राम (चक्रवर्ती योग)

उच्च राशि—गुरु, सूर्य, शनि, मंगल, शुक्र

स्वराशि—चन्द्रमा

मित्रराशि—बुध

नीचराशि—राहू, केतु (अगली कुंडलियों में यह समीक्षा स्वयं करें। तार्किक अभ्यास हो)।

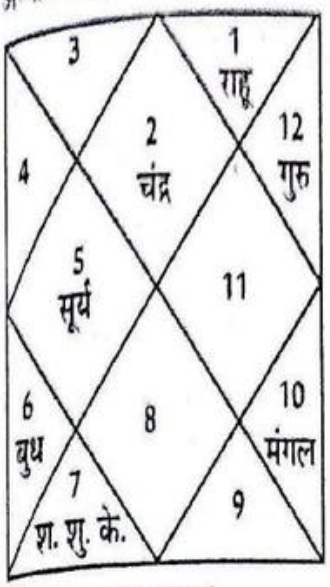

भगवान कृष्ण

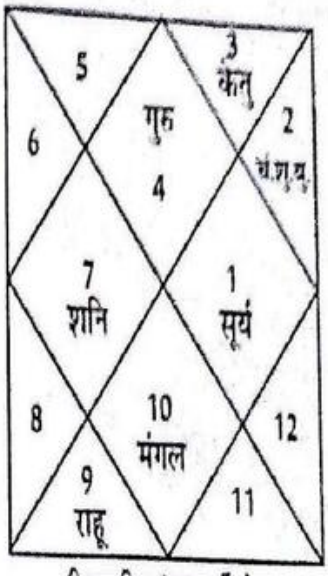

विक्रमादित्य (चक्रवर्ती योग)

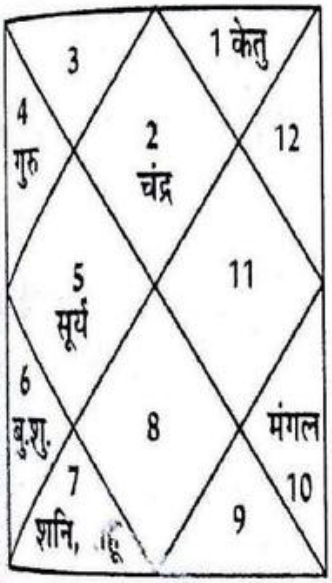

संत ज्ञानेश्वर

भगवान महावीर

❑❑

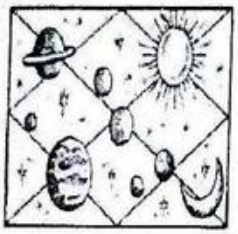

सदा स्मरणीय प्रमुख फलित सूत्र

फलादेश के सम्बन्ध में और अधिक विस्तार में जानने से पूर्व कुछ शास्त्रोक्त अति महत्त्वपूर्ण फलित सूत्रों को भली प्रकार मस्तिष्क में बैठा लें। ये फलादेश में स्थान-स्थान पर अत्यंत उपयोगी सिद्ध होंगे।

1. मीनांशे त्वचरे लग्न दशमे गुरु संस्थिते।
बालारिष्टं विहन्त्याशु गिरिं वज्रधरो यथा॥

—देव केरलम्

शुभ लग्न हो, मीनांश में लग्न हो तथा गुरु दशम भाव में हो तो चन्द्रकृत 'बालारिष्ट योग' (इसके विषय में योग प्रकरण में विस्तार से पढ़ेंगे। संक्षेप में इसका अर्थ—बाल्यावस्था में ही रोग, कष्ट, अशुभत्व एवं अनिष्ट होना है) ऐसे ही नष्ट हो जाता है, जैसे इन्द्र के वज्र द्वारा पर्वत।

2. चन्द्रात् दशमे भानुः मातुर्मरणं करोति पापयुतः॥

—सर्वार्थ चिंतामणि

चन्द्रमा से दसवें घर में सूर्य पापयुक्त हो तो जातक की माता का शीघ्र मरण हो जाता है।

3. छायात्मजः पंगुदिवाकरेषु खरेद्वयो दिशतियत्र निज प्रभावम्।
नूनं पृथकता विषयाद्धि तस्माद्दशमे यथा राज्यन्यासमाहुः॥

राहू, शनि, सूर्य में से कोई भी दो ग्रह जिस भाव आदि पर निज प्रभाव डाल रहे हों—उससे निश्चयपूर्वक पृथकता हो जाती है। जैसे राजा की कुंडली में दशम भाव पर ऐसा प्रभाव हो तो राज्य से पृथकता/राज्य त्याग हो जाता है। (राहू का अर्थ मात्र राहू ही नहीं, केतु भी है। क्योंकि वह भी छायापुत्र/छाया ग्रह है। अतः केतु यहां UNDERSTOOD है।)

4. लग्नप्राणमयं राशिस्थ भवनं देहस्तयोस्तत्फलम्।
भावात् भावपतेश्च कारकवशात् तत्फलं योजयेत्॥

लग्न प्राणमय (MOST IMP.) है। चन्द्र जिस भाव में हो वह देह (IMP.) है।

दोनों जीवन रूप हैं। कोई भी फल भाव से, भावेश से तथा भाव के कारक को विचार कर ही कहना चाहिए।

व्याख्या

☐ जन्मकुंडली के प्रथम भाव में जो राशि हो वह लग्न कहलाती है। कुंडली में चन्द्रमा जिस राशि में हो वह **जन्मराशि** कहलाती है। लग्न व चन्द्र दोनों ही महत्वपूर्ण हैं। अतः फलादेश करते समय लग्नकुंडली व चन्द्रकुंडली दोनों में विचारना चाहिए।

☐ किसी भाव विशेष से सम्बन्धित फल कहने से पूर्व भाव की स्थिति, भावस्थ ग्रह की स्थिति, भावेश (भाव के स्वामी) की स्थिति तथा भाव के कारक की स्थिति को विचार लेना चाहिए। तभी फल शुद्ध व सटीक प्राप्त होता है।

5. **बुध सूर्य सुतो नपुंसको**—बुध व सूर्यपुत्र शनि नपुंसक हैं। (अतः विशेषकर वैवाहिक सम्बन्धों तथा रोग ज्योतिष में फलादेश के समय इस तथ्य पर भी अवश्य ध्यान देना चाहिए।)

6. **राहौ द्वितीये गुलिकेन दृष्टे युक्तेऽथवा साभियं वदन्ति**—यदि द्वितीय भाव से राहू तथा गुलिका/गुलिक का दृष्टि या युति द्वारा सम्बन्ध हो जाए तो सर्प से अथवा विष से भय कहना चाहिए।

गुलिका/गुलिक—रविवार आदि जन्मदिनों में दिनमान को क्रमशः 26, 27, 18, 14, 10, 6, 2 से गुणा करके 30 से भाग दें। जो उत्तर आए उस घड़ी-पल से लग्न साधो—वह **गुलिका/गुलिक** कहलाती है। (मुहूर्त, वर्षफल आदि अनेक कार्यों में गुलिका, मुन्थहा आदि का विचार होता है। यह प्रारम्भिक छात्रों के काम का नहीं होता। जानकारी के लिए संक्षिप्त परिचय दे दिया है। हमारी पुस्तक के पाठ्यक्रम में यह शामिल नहीं है। प्रसंगवश चर्चा हो गई है।)

विशेष—'विष भक्षण योग' तथा 'सर्पदंश योग' प्रायः एक समान ही होते हैं। यहां उपरोक्त सूत्र की व्याख्या से यह तथ्य और स्पष्ट होगा। पाठकों को स्मरण होगा कि दूसरे भाव से और चीजों के अलावा मुंह (MOUTH) भी देखते हैं तथा राहू अन्य चीजों के अलावा विष का भी प्रतिनिधित्व करता है और स्वयं भी सर्प है (इसीलिए राहू-केतु 'कालसर्पयोग' बना देते हैं)। अतः दूसरे भाव में राहू बैठा हो या राहू की दूसरे भाव पर दृष्टि हो तो मुख एवं विष का संयोग सिद्ध होता है। सांप अपने मुंह से विष छोड़ता है। अतः सर्पदंश का योग भी ऐसा ही होगा, जातक अपने मुख से विषपान करेगा। अतः विषपान योग भी ऐसा ही होगा। तथापि विशेषज्ञ ज्योतिषी इस योग के अन्तर को अपने अनुभव एवं उच्च ज्ञान से भांप सकते हैं। भले ही यह दोनों योग एक जैसे हैं। जैसे सूत्र में राहू के साथ गुलिका का सम्बन्ध भी दूसरे भाव से हो तब सर्पदंश योग होना कहा है।

7. कारको भावा नाशाय:—कारक भाव को नष्ट करता है। (यदि भाव का कारक अपने ही भाव में बैठ जाए तो उस भाव के प्रभावों को नष्ट कर देता है। अथवा नष्टप्राय: कर देता है।)

यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण सूत्र है। साथ ही यह भी याद रखें कि **त्रिखलदोष** बनाने में भी कारक का अपने भाव में बैठना उत्तरदायी होता है और इसके परिणाम अच्छे नहीं होते। अवरोध, व्यवधान आदि रहते हैं।

उदाहरण—उदाहरण के रूप में पिछले अध्याय में दी गई भगवान राम की कुंडली देखें। कुंडली के दसवें भाव में उच्च का सूर्य विराजमान है। दसवां भाव पिता का है। सूर्य दसवें भाव का कारक है। सूर्य पिता का भी कारक है। मेष राशि का सूर्य है। मेष राशि के अन्तर्गत अश्वनी, भरणी (दोनों पूरे) तथा कृतिका नक्षत्र (एक चरण) आते हैं। कृतिका नक्षत्र का स्वामी भी सूर्य है। इस प्रकार कुंडली में न केवल त्रिखलदोष बन रहा है। (तीन सूर्य इकट्ठे हो रहे हैं—पहला सूर्य जो दसवें भाव में बैठा है। दूसरा सूर्य जो दसवें भाव तथा पिता का कारक है। तीसरा सूर्य जो कृतिका नक्षत्र का स्वामी है।) साथ ही कारक अपने ही भाव में बैठा है। परिणामस्वरूप भगवान राम के पिता की मृत्यु शीघ्र हो गई तथा भगवान राम के राज्याभिषेक में बाधा व अवरोध पड़े (परन्तु सूर्य उच्च का होने से अन्तत: उन्हें न केवल राज्य प्राप्त हुआ बल्कि वे चक्रवर्ती सम्राट भी बने। यदि सूर्य उच्च का न रहा होता तो यह फल प्राप्त होने में भारी संदेह रहता)। इस उदाहरण से कारक भाव को कैसे नष्ट करता है? यह बात पाठक भली प्रकार समझ गए होंगे।

पिता की शीघ्र मृत्यु तो राज्याधिकार का त्याग या वंचित होना और भी निश्चित हो गया क्योंकि दसवें भाव तथा सूर्य पर शनि की सातवीं दृष्टि, राहू की पांचवीं दृष्टि तथा मंगल की भी चौथी दृष्टि है। इससे सूत्र नं. तीन की पुष्टि हो जाती है। शेष विवेचन में न उलझकर आगे बढ़ते हैं—

8. स्थान हानि करो जीव: स्थान वृद्धिकरो शनि॥

गुरु जिस स्थान पर बैठता है, वहां की हानि करता है। शनि जिस स्थान पर बैठता है, वहां की वृद्धि करता है। (यद्यपि गुरु जिन भावों पर दृष्टि डालता है वहां की वृद्धि करता है। तथा शनि जिन स्थानों पर दृष्टि डालता है, वहां की हानि करता है।) यह थोड़ी-सी उलझी हुई बात है, परन्तु बहुत महत्त्वपूर्ण व उपयोगी है।

9. बुधो लग्न पश्येत् त्वग्रूपमेव चन्द्रस्त्वेस्वम् रक्तस्यं रूपम्।
शनैरगोस्येत् दृग्योगयुक्तौमलिन प्रभावात्कुष्ट प्रदौतौ॥

बुध लग्नेश हो तो पक्का त्वचा का प्रतिनिधि होता है। अन्य स्थानों पर भी त्वचा का प्रतिनिधित्व करता है। चन्द्र लग्नेश हो तो पक्का रक्त का प्रतिनिधि होता है। अन्य स्थानों पर भी रक्त का प्रतिनिधि होता है। बुध व चन्द्र यदि शनि व राहू

से युति करें या दृष्ट हों तो राहू व शनि के मलिन प्रभाव से जातक को त्वचा सम्बन्धी रोग या कुष्ठ रोग प्रदान करते हैं।

विशेष (व्याख्या)—यह सूत्र रोग ज्योतिष से सम्बन्धित है। बुध कुंडली में बुद्धि, वाणी, आंतों, त्वचा आदि का प्रतिनिधित्व करता है। चन्द्रमा कुंडली में कफ, मन, बाएं नेत्र, रक्त (जलीय होने से) तथा वर्ण आदि का प्रतिनिधित्व करता है (फेफड़े आदि का भी)। किन्तु जब ये लग्नेश (लग्न के स्वामी) होंगे तब पक्के तौर पर क्रमश: त्वचा अथवा रक्त का ही प्रतिनिधित्व करेंगे—क्योंकि बुध के लिए त्वचा तथा चन्द्र के लिए रक्त अन्य घटकों की अपेक्षा अधिक व्यापक हैं। अत: ऐसे में बुध या चन्द्र पर पाप प्रभाव हो तो पक्के तौर पर क्रमश: त्वचा या रक्त के रोग होंगे। यदि बुध (त्वचा) तथा चन्द्र (रक्त) दोनों ही विषाक्त (राहू) या मलिन (शनि) प्रभाव में हो तो कुष्ठ आदि चर्म रोग तीव्रता से सम्भावित होंगे। यह उपरोक्त सूत्र का स्पष्ट भावार्थ है।

10. कुजवत् केतु, शनिवत् राहू/पंगुवत् राहू॥

केतु मंगल के समान तथा राहू शनि के समान ही होता है। (फलादेश की दृष्टि से इसे याद रखना चाहिए।)

11. सुतेशे रिपुभावस्थे कारके रवि संयुते।
गर्भस्त्रावयुता भार्या जायते च मृतप्रजा॥

(सर्वार्थ चिन्तामणि)

जन्मकुंडली में यदि पंचमेश छठे भाव में हो तथा गुरु व सूर्य से युक्त हो तो जातक की पत्नी गर्भ गिरने के रोग से ग्रस्त रहती है अथवा मरी हुई संतानें पैदा करने वाली होती है। (क्योंकि छठा घर रोग-ऋण आदि का है और पंचमेश छठे भाव में अपने भाव से 'द्विद्वादश' हो जाता है। सूर्य गर्भपात कराता है। गुरु पुत्र का कारक व शुभ ग्रह है।)

12. केन्द्राधिपत्य दोषस्तु बलवान् गुरु शुक्रयो:॥

केन्द्राधिपतिदोष—सर्वाधिक गुरु को लगता है। उसके बाद शुक्र को (क्योंकि गुरु सर्वाधिक शुभ ग्रह है। उसके बाद शुक्र शुभ है।)

केन्द्राधिपति दोष में शुभ ग्रह अपनी शुभता खो देते हैं और अशुभ ग्रह शुभ हो जाते हैं, बशर्ते वो अच्छे भावों के स्वामी हों। (केन्द्राधिपति दोष की व्याख्या आगे पाठक पढ़ेंगे।)

13. बुधान्तरे अरिष्ट स्यात् शान्त्या शान्तिं प्रयास्यति॥

(देव केरलम्)

बुध यदि अरिष्ट कारक हो तो बुध की अन्तर्दशा में अरिष्ट होगा और शान्ति कराने से अरिष्ट दूर हो जाएगा। (संदर्भ यह सूत्र धनु व मीन लग्न वालों के लिए है। क्योंकि उनका बुध अरिष्ट कारक व केन्द्राधिपति दोष में होता है।)

14. अष्टम् हि आयुषः स्थानम्॥

आठवां भाव ही आयु का स्थान है। (जीवनावधि या आयु का विचार इसी घर से करना चाहिए। भले ही द्वितीय या सप्तम भाव भी मारक है और आठवां भाव भी मारक है। तथापि आयु निर्णय आठवें भाव से ही किया जाता है)।

15. क्षीणे हिमगौ व्ययगे पापै रुदयाष्टमगैः।
केन्द्रेषु शुभाश्च न येत् क्षिप्रं निधनं प्रवदेत्॥
(वराहमिहिर)

चन्द्रमा क्षीण हो, व्यय स्थान में हो, लग्न व अष्टम में 'पाप ग्रह हों' तथा केन्द्र में कोई शुभ ग्रह भी न हो तो बालक (जातक) शीघ्र ही मर जाता है। (यह 'बालारिष्ट योग' का एक प्रकार है। विशेष स्थानों में चन्द्र विशेष अरिष्टकारी होता है।)

16. बुधो मूर्तिगो मार्जयेदन्यरिष्टं गरिष्ठाधियो वैखरी वृत्तिभावः।
जनादिव्य चामीकरी भूतदेहा रिचकित्साविदो दुश्चिकत्सा भवन्ति॥
(चमत्कार चिन्तामणि)

(यह बालारिष्ट योग का एक और प्रकार है)। बुध यदि लग्न में बलवान हो तब तो अन्य अरिष्टों का नाश करता है। जातक बड़ा बुद्धिमान व पढ़-लिखकर पैसा कमाने वाला होता है। परन्तु यदि बुध निर्बल हो तो फिर चिकित्सा जानने वालों की चिकित्सा भी व्यर्थ होती है। (यानी जातक बावजूद अच्छे डॉक्टरों के इलाज के बाल्यावस्था में ही मर जाता है।)

विशेष—चन्द्र माता का कारक है। बुध बुद्धि का तथा खेल/मनोरंजन का कारक है। अतः यह दोनों जातक के बचपन के भी कारक हैं। (विशेषकर चन्द्र) अतः बालारिष्ट योगों से चन्द्रमा तथा बुध की निर्बल स्थिति या पाप प्रभाव विशेष विचारणीय होता है।

17. षष्ठे जीवे सुरांशरस्थे दशमे चन्द्रसंस्थिते।
नक्षत्र गण्ड दोषस्तु नास्तीनि मनुऽब्रवीत्॥

मनु कहते हैं कि षष्ठ स्थान में गुरु हो तो दशम स्थान में सन्धिगत चन्द्रमा (यानी मेष के बिल्कुल आरम्भ में) द्वारा बनाया गया गण्डदोष नष्ट हो जाता है। (ज्योतिष में केन्द्राधिपति दोष, गण्डदोष, त्रिखलदोष, मांगलीक दोष आदि बहुत से दोष कुंडलियों में उपस्थित रहते हैं। परन्तु बहुत से मामलों में अन्य ग्रहों की स्थिति/युति/दृष्टि इन दोषों का निवारण भी कर देती है। अतः दोषों या योगों का फलित करने से पूर्व इन सम्भावनाओं पर विचार कर लेना जरूरी हो जाता है कि वे कट तो नहीं रहे। उनका निवारण अपने आप ही तो नहीं हो रहा? यहां गण्डदोष का एक निवारण मनु द्वारा कहा गया है।

18. देहे पाप ग्रहे काले देह पीडा विनिर्दिशेत्।
जीव भागे जीवनाशं दशासन्धौ महाविपत्॥

गुरु दशा के सन्धिकाल में महान विपत्ति आती है। (एक दशा का अन्त व दूसरी दशा का आरम्भ 'डेलीकेट/सेंसेटिव' होता है। विशेषकर महादशा का। यही बात यहां कही गई है।)

वास्तव में सन्धि स्थान अक्सर खतरनाक होते हैं। भले ही वह ऋतुओं की सन्धि हो, हड्डियों की सन्धि हो, समय की संधि हो, मार्गों की सन्धि हो, राशियों की संधि हो, नक्षत्रों या भावों की संधि हो अथवा दशाओं की सन्धि हो। संधि समय/संधि स्थान पर विशेष सतर्कता बरतनी ही चाहिए। क्योंकि सन्धिकाल में ही प्रायः रोग, दुर्घटनाएं, उत्पात् एवं असंतुलन उत्पन्न होते हैं। विपत्तियां या विषम परिस्थितियां आ जाती हैं।

19. भावात् भावपतेश्च कारकवशात् तत्तत् फलं योजयत्॥

(जिस मुद्दे पर विचार करना हो उससे सम्बन्धित)—भाव, भावेश, भाव के कारक, मुद्दे के कारक पर संयुक्त विचार करके ही फल कहना चाहिए।

यह फलादेश की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसे छोटे से उदाहरण द्वारा समझें। मान लीजिए कि जातक की पत्नी के सम्बन्ध में हमें विचार करना हो तो हमें कुंडली का सातवां भाव देखना होगा। क्योंकि पत्नी का भाव सातवां है। सातवें भाव के कारक तथा पत्नी के कारक ग्रह की स्थिति को विचारना होगा (जो कि शुक्र ग्रह है)। सातवें भाव में जो राशि है। उस राशि के स्वामी (भावपति/भावेश) की स्थिति को भी विचारना होगा। फिर संयुक्त विचार से जो परिणाम निकले उसी का फलादेश करना होगा। इसी प्रकार यदि शिक्षा के सम्बन्ध में विचार करना है तो कुंडली के पांचवें भाव का विचार विशेष रूप से किया जाएगा। पांचवें भाव में जो राशि है, उसके स्वामी की स्थिति भी विचारी जाएगी। पांचवें भाव तथा ज्ञान के कारक गुरु (बृहस्पति) की स्थिति भी विचारनी होगी, साथ ही बुद्धि के कारक बुध की स्थिति भी विचारेंगे—इनके संयुक्त विश्लेषण द्वारा परिणाम निकालेंगे। आदि।

20. ज्योतिषशास्त्र फलं पुराणमणकैरादेश इच्युच्यते
नूनं लग्नबलाश्रितिः पुनश्यं तत् स्पष्ट खेराश्रयम्।
ते गोलाश्रयिणोऽन्तरेण गणितं गोलोपि न ज्ञायते
तस्मात् यो गणित च वेत्तिस कथं गोलादिकं ज्ञायस्यति॥
(गोलाध्याय भास्कराचार्य)

ज्योतिषशास्त्र का फल ही शुभाशुभ बताना है और यह कार्य लग्न का ज्ञान होने पर ही किया जाना सम्भव है। (अतः लग्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।) लग्न का

ज्ञान सूर्यादि ग्रहों के ज्ञान पर निर्भर है—जो सब गोल (आकाश/भचक्र) पर आश्रित है। बिना गणित के गोल का ज्ञान नहीं हो सकता। अत: जो गणित नहीं जानता, वह कैसे गोलादि का ज्ञान कह सकता है। (अत: ज्योतिष में गणित अतिआवश्यक है/अनिवार्य है।)

21. ज्योतिषां सूर्यादि ग्रहणां बोधक शास्त्रम्॥

ज्योतिष सूर्यादि ग्रहों का बोध कराने वाला (उन ग्रहों की स्थिति तथा उनकी स्थिति से जातक पर पड़ने वाले प्रभाव) शास्त्र है। (यह ज्योतिष का फलित सूत्र नहीं परिभाषा सूत्र है।)

22. सूर्य हन्ति अग्रेजातं पृष्टे जातं शनैश्चरः।
अग्रजं पृष्ठजं हन्ति सहजस्थो धरासुतः॥

सहज भाव (तीसरे) में बैठा सूर्य बड़े भाई लिए तथा शनि छोटे भाई के लिए मारक/घातक होता है, परन्तु तीसरे भाव में बैठा पृथ्वीपुत्र (मंगल) बड़े-छोटे दोनों भाइयों के लिए मारक अथवा घातक होता है। (जिस जातक की कुंडली में मंगल तृतीय भाव में हो, सबल हो किन्तु गुरु आदि शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो जातक के भाई होते ही नहीं। होते हैं तो मर जाते हैं—यदि अन्य शुभ योगों से जीवित भी रह जाएं तो जातक की उनके साथ बिल्कुल नहीं पटती या कोर्ट-कचहरी की नौबत रहती है।)

विशेष—आगे फलादेश के नियमों व सिद्धांतों में भी प्रसंगानुसार इन सूत्रों की चर्चा मिलेगी। तथापि यहां पर विभिन्न वैरायटी में ये सूत्र पृथक संकलित कर दिए गए हैं। मात्र उन पाठकों के लिए जो बिना संस्कृत के श्लोकों को देखे, पुस्तक को प्रामाणिक नहीं मानते। इस प्रकार के श्लोक/सूत्र अनगिनत हैं। सबको यहां लिखना पुस्तक के कलेवर में अनावश्यक वृद्धि करना तथा पठनीय सामग्री को कम कर देना ही होगा। अत: आगे हम बिना श्लोकों के ही नियमों की चर्चा करेंगे। जो पाठक श्लोकों को रटने तथा उन्हें अवसर पर कहकर अपना प्रभाव जमाने की मानसिकता वाले हैं तथा संस्कृत श्लोकों को ही प्रमाण मानते हैं, उनके लिए इतना ही पर्याप्त है। (वैसे मात्र रट्टा लगा लेने से कोई लाभ नहीं होता। आंकड़े/सूत्र रट लेने का काम कम्प्यूटर ज्यादा बेहतर कर सकता है। आदमी के लिए तो तथ्य को समझना व अमल में लाना जरूरी है न कि रट्टा लगाकर कंठस्थ कर लेना। बहरहाल।)

विशेष सूत्र—चौथे भाव में कोई भी पापग्रह बैठा हो तो बाल्यावस्था कष्ट में बीतती है। (यह अनुभवजन्य सूत्र है, शास्त्रीय या परम्परागत नहीं। किन्तु बिल्कुल सही उतरता है।)

□□

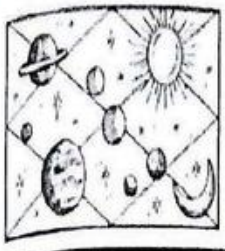

सूर्य का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—प्रथम भाव में सूर्य हो तो जातक सम्मान के प्रति सचेत, तुनकमिजाज/अधीर, संवेदनशील या भावुक परन्तु क्रोधी/शीघ्र क्रोधित हो जाने वाला, वायु रोगी, विदेश में रहने का इच्छुक (यदि अन्य शुभ लक्षण कुंडली में हो तो विदेश जाने में सफल), इकहरे शरीर वाला, ऊंचे मस्तक वाला, प्राय: तीखी या तनी हुई (उन्नत) नाक वाला, अस्थि प्रधान शारीरिक गठन वाला, साहसी, न्यायप्रिय, अपनी बात ऊंची रखने वाला, राजा के समान जीवन जीने वाला, भेदभाव न करने वाला तथा सिर व शरीर पर कम बालों वाला होता है। ऐसे जातक के पास धन तो होता है परन्तु अस्थिर रहता है। यदि सूर्य की स्थिति शुभ हो तो सरकार की ओर से लाभ मिलता है। ऐसे जातक को चाहिए कि दूसरों से काम लेते समय नम्र व्यवहार करे। दिमाग की गरमी (गुस्से) पर संयम करे। अपनी बात कट जाए तो चिड़चिड़ा न हो जाए।

प्रथम भाव में सूर्य होने के साथ यदि सातवां भाव खाली हो तो जातक का भाग्योदय विवाह के बाद होता है। यदि सूर्य शुक्र के साथ अशुभ योग करता है तो जातक के पिता की मृत्यु जातक की छोटी उम्र में ही हो जाने की पूर्ण सम्भावना होती है। ऐसा लाल किताब का मत है। (क्योंकि सूर्य पिता का कारक है और शुक्र सूर्य का शत्रु है।)

विशेष—सूर्य की अन्तर्दशा में सूर्य 6 मूलांक (जिनका योग 6 आता हो जैसे—42, 15, 33, 60, 6, 24 आदि) वाले वर्षों में जातक के दसवें तथा सातवें घर को डिस्टर्ब करेगा (विशेषकर दसवें को)। ऐसे में जातक का स्थानांतरण, व्यवसाय परिवर्तन, प्रमोशन आदि हो सकता है। परन्तु पत्नी के साथ तनातनी की स्थिति रहेगी।

द्वितीय भाव—यदि लग्नकुंडली में सूर्य दूसरे भाव में हो तो जातक धनाढ्य होता है, परन्तु पैतृक या कौटुम्बिक धन से, अपने परिश्रम से नहीं। भाग्यवान तथा शाही ठाठ-बाट से जीवन जीने वाला होता है। सरकार की ओर से नुकसान की सम्भावना रहती है। जातक अभद्र वाणी वाला तथा स्वार्थी होता है। उसका परिवार

उससे प्रसन्न नहीं रहता। (शुभ स्थिति हो तो जातक दूसरों का हमदर्द व उनको जरूरत पड़ने पर सहायता देने वाला होता है और किसी पर आश्रित नहीं रहता।) जातक को नेत्र रोग, मुख रोग, दांतों के रोगों की सम्भावना रहती है। वह दूसरों पर नहीं, स्वयं पर खर्च करता है। लाल किताब के अनुसार दूसरे

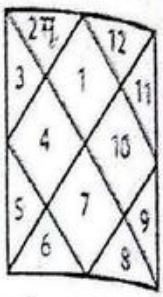

घर में सूर्य हो तो जातक को दूसरों से दान आदि नहीं लेना चाहिए। शनि/धनेश (द्वितीयेश) वक्री होकर—2, 6, 8, 12 या 3 भाव में हो तो लाख प्रयासों के बाद भी जातक दरिद्र रहता है। शरीर में गर्मी सदा रहती है, हाथ-पैरों से पसीना आता है, दृष्टि कमजोर होती है।

तृतीय भाव—तीसरे भाव में सूर्य हो तो जातक अदम्य साहसी और वीर होता है। उसका आत्मबल बढ़ा रहता है। सरकार से सम्मानित व प्रसिद्ध होता है। संघर्ष करने वाला (जुझारू), धनवान होता है। काव्य में रुचि सम्भव होती है। परन्तु उसको अपने रिश्तेदारों व भाइयों से खुशी व सम्मान प्राप्त नहीं होता। न ही रिश्तेदारों को उससे खुशी मिलती है। ऐसे व्यक्ति के प्राय: बड़ा भाई नहीं होता। होता है तो मर जाता है। अन्य शुभ योगों से जीवित रह जाए तो जातक की उससे पटती नहीं है, वैर-विरोध रहता है। ऐसा जातक SELF MADE या स्वयं कमाकर खाने वाला होता है। परन्तु यदि अन्य कारणों से जातक अपना चाल-चलन बिगाड़ ले तो सूर्य के शुभत्व में कमी आ जाती है। जिसका प्रभाव आर्थिक रूप से व अन्य सम्बन्धों में पड़ता है। ऐसा लाल किताब का मत है।

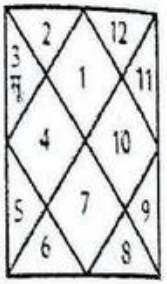

चतुर्थ भाव—चौथे भाव में सूर्य हो तो जातक का व्यक्तित्व आकर्षक होता है। वह धनी, पराविद्या का जानकार तथा प्राय: समुद्री यात्राओं से अपार धन अर्जित करने वाला होता है। धनी होते हुए भी निजी वाहन का सुख नहीं होता, रिश्तेदारों से अप्रसन्न व दुखी रहता है। ऐसा जातक निर्दयी तथा कुछ कंजूस किस्म का होता है। (वह धन बच्चों के लिए जोड़कर जाता है, स्वयं अपने ऊपर खर्च नहीं करता।) प्राय: माता-पिता की सेवा का मौका उसे कम ही मिलता है। लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को अंधों को भोजन कराने से शुभ फलों की प्राप्ति होती है। यदि इस भाव में वृष राशि हो तो बहुपत्नी योग या अन्य स्त्रियों से शारीरिक सम्बन्ध सम्भावित होते हैं। वृश्चिक या कुम्भ राशि हो तो हृदयशूल होता है।

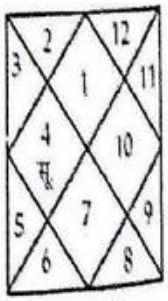

पंचम भाव—लग्न कुंडली के पांचवें भाव में सूर्य हो तो जातक चरित्रवान और मेधावी होता है। परन्तु प्राय: उदर रोगी होता है। सन्तान होने से कठिनाई आती

है। हृदय की सम्भावना (यदि पाप प्रभाव हो तो) होती है। जातक अपने परिवार की उन्नति करने वाला और भरे-पूरे परिवार वाला होता है। पुत्र जन्म से ऐसे जातक का भाग्य और चमकता है। लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक अपनी संतान पर जो धन व्यय करता है, उसके शुभ फल प्राप्त होते

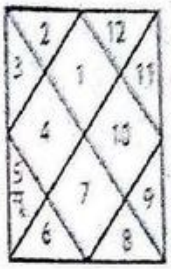

हैं। ऐसे जातक की पत्नी को गर्भपात या संतति अवरोध अवश्य होता है। सन्तान कम होती है तथा दुर्बल व रोगी होती है या शीघ्र नष्ट हो जाती है। प्राय: ऐसे जातक के कन्याएं अधिक होती हैं। (यदि गुरु की दृष्टि पांचवें भाव पर हो तो पुत्र प्राप्त हो जाता है) अग्नितत्व की राशि हो तो सन्तानाभाव या संतान से सुख का अभाव रहता है। वायु तत्व राशि हो तो जातक के दो विवाह सम्भव होते हैं। स्वराशि में हो तथा पाप प्रभाव में हो तो उदररोगी और हृदय रोगी बनाकर मृत्यु भय देता है।

षष्ठ भाव—छठे भाव में सूर्य लग्न कुंडली में हो तो जातक शत्रुजित्, अपने सम्मान के लिए चिंतित, कठोर हृदय, स्वार्थी, धन के सम्बन्ध में लापरवाह तथा अपने भाग्य से संतुष्ट रहने वाला होता है। ऐसे जातक को सरकार की ओर से दण्ड (जुर्माना आदि) सम्भावित होता है। जीवनसाथी के साथ उसकी पटती नहीं है। (विशेषकर तब जब सूर्य छठे घर में व शनि बारहवें घर में स्थित हो—तब पत्नी के लिए और भी अशुभ फल प्राप्त होते हैं।) लाल

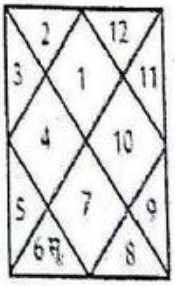

किताब के अनुसार यदि छठे घर में सूर्य हो और दूसरा भाव खाली हो तो जातक के पिता के लिए अशुभ होता है। अशुभ सूर्य का प्रभाव जातक की संतान पर भी पड़ सकता है—इसके लिए बन्दरों को गुड़ खिलाना लाभकारी होता है। सूर्य अष्टमेश होकर छठे भाव में हो तो राज्यपक्ष से वैर रहता है।

ऐसा जातक यंत्र तंत्र मंत्र में रुचि लेता है। शत्रु अधिक होते हैं (किन्तु शत्रुहंता होता है)। यदि सूर्य पाप प्रभाव में हो तो जातक लम्बे रोग से ग्रस्त रहता है। कन्या या मीन राशि में छठे घर का सूर्य हो तो क्षय रोग की सम्भावना बनती है। यदि वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशि में हो तो दमा, ब्रोंकाइटिस, डिप्थीरिया आदि सम्भव होते हैं। पुरुष राशि हो तो युवावस्था में ही प्रमेह का रोग सम्भव होता है।

सप्तम भाव—सातवें भाव में सूर्य हो तो जातक सदा अप्रसन्न रहने वाला, कठोर हृदय व स्वार्थी होता है। प्राय: जीवनसाथी (पत्नी) की मृत्यु का कारण बनता है। अपने सम्मान को बनाए रखने के लिए कुछ भी कर सकता है। सरकार की ओर से दण्ड सम्भावित होता है तथा जीवनसाथी से वियोग सम्भावित होता है। प्राय: पत्नी की मृत्यु शीघ्र होकर जातक विधुर हो सकता है। (यदि गुरु आदि शुभ ग्रहों से सातवां भाव दृष्ट न हो तो)।

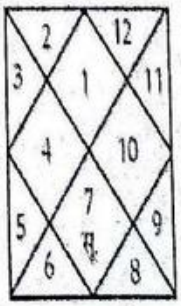

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक 34 वर्ष की आयु तक अशुभ समय भोगता है। जीवन में डरा-डरा रहता है तथा तपेदिक जैसे रोगों से ग्रस्त हो सकता है। यदि सूर्य अशुभ स्थिति में हो तो जातक बहुत अधिक क्रोधी व स्वार्थी होता है। वह स्वयं तो कलपता किलसता रहता ही है, दूसरों को भी किलसाता है। ऐसे जातक की मृत्यु उसके घर पर ही होती है, भले ही वह रोजगार के लिए बाहर रहता हो। जातक का विवाह विलम्ब से होता है। दाम्पत्य का पूर्वार्ध कलहपूर्ण होता है। (खासकर तब जब सूर्य अग्नि राशि में हो, विलम्ब से विवाह या दो विवाह का योग बनता है।) पुरुष राशि में सूर्य हो तो जातक संतान कम होती है।

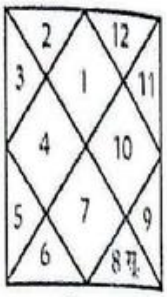

अष्टम भाव—आठवें भाव का सूर्य जातक को तुनकमिजाज (शीघ्र क्रोधित हो जाने वाला/चिड़चिड़ा) बनाता है। जातक धनवान तो होता है परन्तु अधीर व स्थूल बुद्धि होता है। यदि सूर्य षष्ठेश होकर अष्टमस्थ है तो जातक न्यायप्रिय किन्तु हिंसक व नेत्रविकारी होता है। यदि आठवां सूर्य स्वराशि या उच्च का हो तो असावधानी से जातक की मृत्यु की सम्भावना भी बनती है। प्राय: ऐसे जातक के पिता की मृत्यु जल्दी हो जाती है। यदि किसी शुभ योग से बचाव न होता हो तो। (क्योंकि आठवां भाव नौवें से बारहवां है यानी LOSSES का है और सूर्य तथा नौवां भाव पिता का कारक होता है।)

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक एक तपस्वी राजा की भांति होता है। ऐसा जातक यदि दुश्चरित्र हो जाए तो उसे और उसके उत्तराधिकारियों को भी अशुभ फल भोगने पड़ते हैं। ऐसा जातक यदि अपने भाई-बहनों या खून के सम्बन्धियों का बुरा सोचे या उनके साथ बुरा करे तो परिणाम स्वयं जातक को बुरा भोगना पड़ता है।

यदि वृश्चिक, मकर, कुम्भ या तुला राशि का सूर्य आठवें घर में हो तो जातक लम्बे रोग भोगकर मरता है। पुरुष राशि का सूर्य हो तो दृष्टिमंद, गुप्तरोग व सन्तान सुख अल्प रहता है।

नवम भाव—लग्नकुंडली में सूर्य नौवें भाव में हो तो जातक चरित्रवान, व्यवहारकुशल, साहसी, वाहनसुखी (भले ही अपना वाहन न हो) तथा बहुत से सेवकों वाला होता है। ऐसा जातक योगी, नेता या ज्योतिषी भी हो सकता है। परन्तु अपने पिता के लिए जातक विशेष कष्टकारी होता है। जातक प्राय: दीर्घायु होता है। भाइयों से संतप्त रहता है।

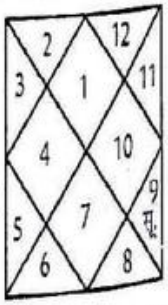

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक अपने खानदान के लिए अपना सब कुछ खर्च कर देता है और बदले में कोई आशा नहीं रखता। ऐसे जातक के जन्म

के बाद परिवार में खुशहाली आ जाती है। उसके जन्म से पूर्व प्राय: परिवार बदहाल होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो जातक का भाग्य अच्छा होता है।

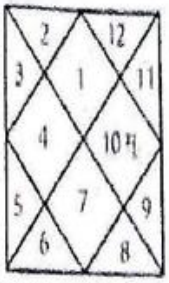

दशम भाव—सूर्य यदि दसवें भाव में हो तो जातक सम्मानित, धनाढ्य, कीर्तिवान, प्रशासनिक गुणों से युक्त तथा यशस्वी होता है। सरकार से बार-बार सम्मान प्राप्त करता है। उच्च पद (मंत्री आदि) प्राप्त करता है। बुध भी अच्छी स्थिति में हो तो सफल तथा उच्च व्यापारी बन सकता है। स्वास्थ्य उत्तम तथा समाज में सम्मान प्राप्त करता है। यद्यपि स्वभाव से कुछ वहमी भी हो सकता है। जातक के पिता के सुख के लिए दसवां सूर्य बाधक होता है। प्राय: जातक पिता के साथ रहकर प्रगति नहीं कर पाता। या उसे पिता से दूर होना पड़ सकता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को अपनी ससुराल में रहना या राहू से सम्बन्धित काम करना और अपनी कमियों का स्वयं प्रचार करना नुकसानदायक होता है। ऐसे जातक को सिर पर सफेद या शरबती रंग की पगड़ी या टोपी पहनना लाभकारी होता है। यूं तो दसवें भाव में सूर्य नीच राशि का हो तो भी सम्मानित पद दिलाता है। परन्तु उच्च का सूर्य दसवें भाव में हो तो चक्रवर्ती की भांति पद व सम्मान दिलाता है। वायु राशियों में दशमस्थ सूर्य—राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, राज्यपाल या विधान/संसद सभा का सदस्य बनाता है। पृथ्वी राशियों में—I.A.S. ऑफिसर जैसे उच्च पदों पर ले जाता है। जल राशियों में—आबकारी व आयकर विभाग से लाभ प्राप्त करता है। अग्नि राशियों में—पुलिस या सेना के उच्च पद पर ले जाता है। वृश्चिक राशि का दशमस्थ सूर्य चिकित्सा क्षेत्र में भेज सकता है (शनि तथा राहू की स्थिति भी विचारनी होगी) परन्तु जातक वृद्धावस्था में रोगी हो जाता है। यह दशम सूर्य का एक और दुष्परिणाम है।

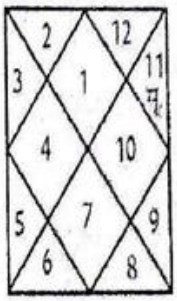

एकादश भाव—लग्नकुंडली में ग्यारहवें भाव में सूर्य हो तो जातक शक्तिवान, धनवान, अल्प संततिवाला, योगी के समान किन्तु उदर रोगी व अभिमानी होता है। भले ही लालची हो परन्तु राजा के समान हैसियत व सम्मान वाला तथा धार्मिक होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक ऐशपसंद होता है। मनमोहक नेत्रों वाला, गायन-वादन में रुचि लेने वाला तथा परोपकारी होता है। किन्तु वह स्त्रियों का रसिया होता है। (ऐसे जातक को शाकाहारी ही रहना चाहिए। यदि वह मांस मदिरा का सेवन करे तो उसे अशुभ फल भोगने पड़ते हैं।) सन्तान कष्ट या चिंता भी बनी रहती है। परन्तु शत्रुओं पर भारी पड़ता है। राज्यकृपा प्राप्त होने की प्रबल सम्भावना होती है। जैसा कि शास्त्रकार भी स्वीकारते हैं—

खौ संसभेत्स्वंच लाभोपायते नृपद्वारतो राजमुद्राधिकारत्।
प्रतापानलेशत्रवः सम्पतन्ति श्रियोऽनेकदुःखादिभंगद्भवानाम्॥

अर्थात् सूर्य एकादशस्थ हो तो जातक राजकृपा से धन कमाता है। राजा की मुद्राओं द्वारा नाना सम्पदा प्राप्त करता है। उसके प्रताप की अग्नि में शत्रु जल मरते हैं। पर संतानादि का कष्ट उसे रहता है।

द्वादश भाव—सूर्य यदि बारहवें भाव में हो तो जातक आलसी तथा छरहरे शरीर वाला होता है। उसे मित्रों का अभाव होता है। बाएं नेत्र में रोग अवश्य हो जाता है। विदेश गमन से लाभ होता है। विदेश यात्रा सम्भव होती है। जीवन में सुखी होता है। अच्छी नींद लेता है। दूसरों की विपत्ति अपने सिर लेने की प्रवृत्ति होती है। गृहस्थ सुख नहीं होता (अल्प होता है)।

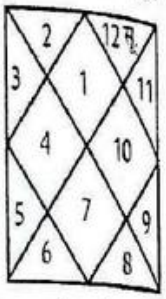

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक का जीवनसाथी दुश्चरित्र होता है। (निर्णय के लिए सप्तम भाव व सप्तमेश की स्थिति के नवमांश का विचार भी अवश्य करें)। गृहस्थ सुख नहीं मिलता। अग्नि राशि भी बारहवें भाव में हो तो जातक कृपण, अभिमानी, पिता से द्वेष करने वाला तथा नेत्र रोगी होता है। ऐसी स्थिति में निद्रानाश/विघ्न सम्भव होता है। यात्राओं में हानि सम्भावित होती है।

ऐसे जातक को दस्तकारी या हाथ का काम करना अशुभ होता है तथा व्यापार करना शुभ रहता है।

यदि दशम नवम भाव सुदृढ़ न हो तथा दशमेश-नवमेश पाप प्रभाव में हों और द्वादश भाव पर गुरु की दृष्टि न हो तो बारहवें भाव का सूर्य जातक को पिता के सुख से वंचित कर सकता है। क्योंकि सूर्य पिता का कारक है तथा बारहवां भाव जातक के व्यय तथा हानि का भाव है। साथ ही सरकार की ओर से जुर्माना या दण्ड (आर्थिक) सम्भव होता है। क्योंकि सूर्य सरकार का भी प्रतिनिधित्व करता है और बारहवां भाव व्यय या हानि का।

विशेष—पाठकों के लाभार्थ पाराशरी मत और लाल किताब दोनों की दृष्टि से एकसाथ फल प्रस्तुत कर रहा हूं। साथ ही रोग ज्योतिष से सम्बन्धित प्रमुख फल भी दे रहा हूं। जहां अति आवश्यक है, वहां राशियों का विवेचन भी कर रहा हूं। □□

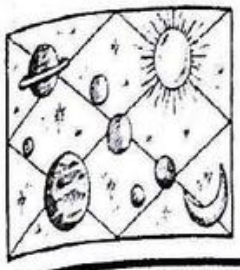

चन्द्रमा का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—चन्द्रमा लग्न में हो तो जातक का रंग गोरा तथा व्यक्तित्व आकर्षक एवं मुखाकृति सुन्दर होती है। परन्तु जातक प्रसन्नचित्त, शीतज्वर से पीड़ित तथा कफ, नज़ला, साईनस आदि का रोगी हो सकता है। जातक कोमलांगी व घुमक्कड़ होता है। परन्तु उसे जल से भय रहता है।

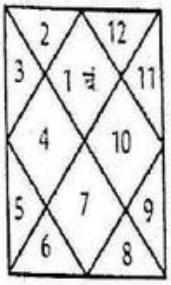

विशेष—(चन्द्रमा का विचार करते समय पुनः स्मरण दिला दें कि कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष आदि के जन्म का विचार अवश्य करें। पूर्ण चन्द्र यदि गोरा, सुन्दर व कोमलांगी बनाता है तो कृष्णपक्ष का चन्द्र मलिन व दुर्बल बनाता है।)

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को माता के जीवित रहते कभी धन-सम्पत्ति की कमी नहीं होती। उसे सदैव माता की आज्ञा का पालन व उसकी सेवा करनी चाहिए, इससे शुभ प्रभाव बढ़ते हैं। ऐसे जातक को मुफ्तखोरी तथा घटिया कार्यों से बचना चाहिए तथा घर में पानी से भरा घड़ा सदैव रखना चाहिए। ऐसे जातक का शिक्षा पर खर्च किया गया धन कभी व्यर्थ नहीं जाता। शिक्षा उसे अर्थोपार्जन में सहायक होती है।

यदि प्रथम भाव में चन्द्रमा कर्क या वृष राशि का हो तो जातक सुन्दर होने के साथ धनी होता है तथा जीवनसाथी का प्रिय एवं सुन्दर वस्तुओं को प्रसंद करने वाला होता है। (विशेषकर स्त्री जातक पति की प्राणवल्लभा होती है।) अन्य राशियों का चन्द्र मूर्ख, निर्धन व रोगी बनाता है। खांसी, श्वास जातक एवं वायुरोग देता है। शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो जातक बली, बुद्धिमान, निरोगी किन्तु वाचाल एवं कपटी होता है। शनि की दृष्टि हो तो रंग सांवला तथा दिमाग अस्थिर/वहमी हो जाता है। शास्त्रकारों के अनुसार—**विधुर्गोकुर्ली राजगः सनवातृः स्था धनाध्यक्ष लावशय मानन्दपूर्णम्। विधते धनं क्षीणदेहं दरिद्रं, जड़ श्रोत्रहीनं नरं शेष लग्ने॥** (वृष, मेष, कर्क लग्न हो तो चन्द्रमा जातक को धनवान, प्रसन्नचित्त, सुन्दर शरीर वाला बनाता है। अन्य राशियों में लग्नस्थ चन्द्र जातक को निर्धन, दुर्बल, मूर्ख तथा बहरा बनाता है।)

द्वितीय भाव—दूसरे भाव में चन्द्रमा हो तो जातक ठंडे व पेय पदार्थों का

शौकीन, कांतिपूर्ण चेहरे वाला, योग्य, बुद्धिमान व प्रसन्नचित्त होता है। उसकी वाणी मधुर होती है तथा वह प्रिय भाषी होता है। यदि शनि, राहू का सम्बन्ध भी दूसरे भाव से दृष्टि, युति, राशि आदि द्वारा हो रहा हो तो जातक शराब का शौकीन तथा मांस खाने वाला होता है एवं उसे नेत्र रोग सम्भव होता है।

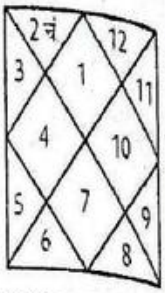

यदि चन्द्रमा उच्च का हो तो जातक स्त्रियों के माध्यम से धन लाभ/सहायतादाता है परन्तु बात करने में अटकता या हकलाता है। (वाणी दोष की सम्भावना बनती है। यदि उच्च या स्वराशि का चन्द्र द्वितीयस्थ है) चन्द्रमा पर पाप प्रभाव हो तो पाचनतंत्र गड़बड़ (भूख व पाचन की समस्या) तथा बुद्धि व शरीर दुर्बल होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक स्वयं अपनी दौलत कमाने वाला होता है। उसकी विद्या/पढ़ाई ही उसके भाग्य का आधार बनती है। चन्द्रमा से सम्बन्धित व्यापार उसे लाभप्रद होता है। ऐसे जातक को घर में मन्दिर नहीं बनाना चाहिए। न ही घर में घंटे/घड़ियाल रखने चाहिए। इनका जातक पर प्रभाव अशुभ होता है। (यदि पूर्ण चन्द्र बिना पाप प्रभाव के बलिष्ट होकर द्वितीय भाव में बैठे तो जातक इतना सुन्दर होता है कि अप्सरा भी उसे देखकर मोहित हो सकती है।)

तृतीय भाव—लग्नकुंडली के तीसरे भाव में चन्द्रमा हो तो जातक अपने भाई-बहनों का पोषण करने वाला, दबंग तथा विशेष ज्ञानी होता है। परन्तु स्वभाव से कृपण/मितव्ययी होता है और बार-बार व्यवसाय बदल सकता है। ऐसा जातक धुन का पक्का (कार्य/तप में लगा रहने वाला) होता है। दीर्घायु होता है उसे भातृसुख व स्त्री सुख प्राप्त होते हैं। परन्तु प्राय: वह स्त्रियों में अधिक दिलचस्पी नहीं लेता/ले पाता।

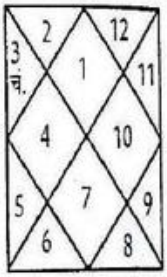

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को चोरी न होने पर भी धन-दौलत की हानि होती है तथा जीवन में किसी स्त्री की अचल सम्पत्ति मिलने की भी सम्भावना रहती है। ऐसे जातक के भाई-बहन जब तक उसके घर अपनी खुशी से आते-जाते या दूध आदि पीते रहते हैं तब तक जातक के पास धन की कमी नहीं होने पाती। परन्तु ऐसा जातक स्त्रियों के मामले में साधु होता है। स्त्रियों के निमंत्रण से भी विचलित नहीं होता। शास्त्रकार भी ऐसा ही मानते हैं—

विधिविक्रमे विक्रमेणैननि वित्तंतपस्वी भवेदभामिनी रञ्जिताऽपि।
क्रियाञ्चिन्तयेत्साहजै तस्यशमं प्रतापाज्वलो धर्मिणेवजैयन्त्यां॥

तृतीयस्थ चन्द्र से जातक अपने बलबूते पर धन कमाता है (SELFMADE तथा SELFDEPEND होता है)। चाहे उसको स्त्रियां रिझाएं तो भी वह जपतप में ही लगा रहता है। भाई-बहनों से अधिक सुख पाता है। प्रतापी, धर्मात्मा व यशस्वी होता है।

विशेष—मेरा अपना अनुभव है कि कुण्डली में शुक्र व मंगल की स्थिति विपरीत हो तो जातक तृतीय भाव में चन्द्र होते हुए भी साधु नहीं होता। तथापि अन्य रसिकों की अपेक्षा संयमित रहता है।

चतुर्थ भाव—चन्द्रमा चतुर्थ भाव में हो तो जातक खुशहाल, धनवान, वाहनसुखी व सब प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त करने वाला होता है (यह पूर्ण चन्द्र या शुक्ल पक्ष के चन्द्र के फल हैं)। उच्च का चन्द्र हो तो ससुराल से धन प्राप्ति एवं विवाहोपरांत भाग्योदय होता है। प्राय: देखा गया है कि ऐसे जातक की अपने पिता से अधिक पटती है अथवा माता के सुख में न्यूनता रहती है। चन्द्रमा पाप प्रभाव में हो तो माता का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता तथा जातक भयाक्रांत या अनजाने भय से भयभीत रहता है।

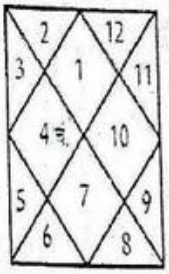

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक जितना अधिक खर्च करता है, उतना ही अधिक उसका धन बढ़ता है। ऐसे जातक को दूध बेचने का काम करने पर नुकसान होता है। चौथा चन्द्रमा जातक को शिक्षा पूर्ण करने में हर तरफ से सहायता दिलाता है और प्राप्त की गई शिक्षा जातक को जीवन में उपयोगी तथा अर्थ प्राप्त कराने वाली सिद्ध होती है (बशर्ते कि चन्द्रमा कृष्णपक्ष का न हो)।

पंचम भाव—पांचवें भाव का चन्द्रमा जातक को विद्वान, बुद्धिमान तथा बहुत सन्तानों वाला बनाता है। किन्तु जातक को डरपोक भी बना देता है। यदि चन्द्रमा बलवान स्थिति में हो तो जातक को जुए, सट्टे आदि से लाभ होता है। वायु तत्त्व की राशियों में चन्द्रमा पुत्राभाव देता है। तब जातक को कन्याएं अधिक होती हैं (प्राय: जुड़वां)। साथ में पापी ग्रह भी बैठ जाए तो 'बालारिष्ट योग' बनता है, जिससे जातक को बाल्यावस्था में मृत्यु/मृत्यु तुल्य कष्ट झेलना पड़ता है। शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो मृत्यु टल जाती है, मात्र कष्ट भोगना पड़ता है। अन्यथा मृत्यु तीव्रता से सम्भावित होती है)। चन्द्रमा पाप प्रभाव में हो तो जलोदर आदि का रोग देता है।

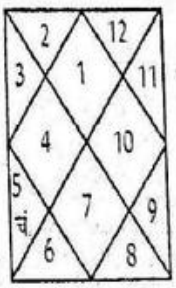

लाल किताब के अनुसार जिस व्यक्ति का चन्द्रमा पांचवें भाव में हो उसकी शिक्षा उसके जीवन में पूरी तरह काम नहीं आती। ऐसा जातक सन्मार्ग पर चले तो उसकी स्थिति व भाग्य उत्तम रहते हैं। उसे औरों के साथ विनम्रता, आदर व शिष्टता से पेश आना चाहिए। घटिया या कटु भाषा का प्रयोग औरों के लिए करेगा तो स्वयं उसके लिए मुसीबतें पैदा होंगी। ऐसे जातकों को घर में पेड़-पौधे नहीं रखने चाहिए तथा गोल मोती/मनकों वाली माला नहीं धारण करनी चाहिए। यह उसके

लिए शुभ नहीं होते (क्योंकि माता बुध की कारक मानी गई है और बुध चन्द्रमा से शत्रुता रखता है)।

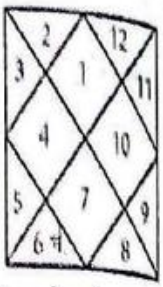

षष्ठ भाव—षष्ठ भाव का चन्द्रमा अशुभ होता है। ऐसा जातक उदर रोगी, निर्धन व खराब सेहत वाला होता है। प्राय: किसी न किसी रोग से ग्रस्त रहता है। शत्रुओं से पराजित होता है। प्राय: बचपन रोगों तथा कष्टों में ही बीतता है। (चन्द्रमा अकेला और बलिष्ट हो तो जवानी का समय ठीक गुजरता है।) शिक्षा का उपयोग बहुत कष्टों के बाद होकर पाना मुमकिन होता है। परन्तु जातक का स्नेह नानी/मौसी से विशेष रहता है।

लाल किताब के अनुसार छठा चन्द्रमा अनिष्टप्रद तथा देहसुख में बाधा उत्पन्न करने वाला होता है। ऐसे जातक को व्यवसाय में कठिनाइयां तथा शत्रुओं द्वारा व्यर्थ की परेशानियां उठानी पड़ती हैं। यदि कर्क राशि का चन्द्र छठे भाव में हो तो जातक का पाचनतंत्र खराब रहता है तथा पेट के रोग लगे रहते हैं (विशेषकर बचपन में)। पृथ्वी तत्त्व प्रधान राशि हो तो दूषित रक्त, देह में गर्मी, नजले-जुकाम से सांस में कठिनाई आदि रहते हैं तथा जातक को विशेष कष्टप्रद होता है। अग्निराशि हो तो जातक दृढ़निश्चयी होता है। यदि द्विस्वभाव राशि हो तो कफ, क्षय, फेफड़ों के रोग आदि की सम्भावना अधिक होती है। किन्तु रोगों का आना-जाना लगा रहता है। स्थिर राशि हो तो अर्श, भगंदर आदि रोग होते हैं, जो लम्बे चलते हैं। चर राशि में उदररोग। उच्चराशि में हो तो गले व श्वास के रोग तीव्रता से सम्भावित होते हैं।

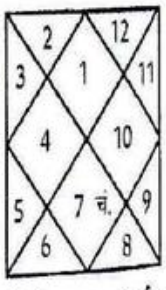

सप्तम भाव—सातवें भाव का चन्द्रमा जातक को आकर्षक व्यक्तित्व देता है। ऐसा जातक कामी, पत्नीभक्त तथा सुन्दर पत्नीवाला होता है। (स्त्री जातकों को सातवां चन्द्र पतिव्रता बनाता है। अथवा ऐसी स्त्री पति के लिए कुछ भी कर सकती है।) किन्तु दाम्पत्य का सुख जातक को पूर्णतया प्राप्त नहीं हो पाता। पापप्रभाव में या क्षीण (कृष्णपक्ष) चन्द्रमा हो तो जातक निर्धन भी होता है। किन्तु शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा हो तो जातक को धनवान बनाता है।

लाल किताब के अनुसार सातवें भाव का चन्द्र 'लक्ष्मी का अवतार' कहा गया है। चन्द्रमा शुभ स्थिति में हो तो जातक कवि या ज्योतिषी हो सकता है। (चाल चलन ठीक रहा तो सिद्ध पुरुष भी बन सकता है)। जातक की बुद्धि तीव्र और मन साफ होता है। पुरुष राशि का चन्द्र पत्नी के प्रति आसक्ति देता है। स्त्री राशि का चन्द्र व्यभिचार में आकर्षण देता है। उच्च का चन्द्र द्विभार्या योग बनाता है। ऐसा जातक पत्नी के जीवन में उन्नति करता है। विवाहोपरांत भाग्योदयी होता

है। किन्तु पत्नी की मृत्यु के बाद स्थिति विपरीत हो जाती है। शनि की गति भी हो रही हो तो जातक को पुनर्भू (सेकंड हैंड) पत्नी मिलती है तथा जातक को गुदा या प्रमेह रोग सम्भव होते हैं।

देखा गया है कि सातवें भाव में चन्द्रमा हो तो प्राय: जातक मुखाफिरी के व्यापार में रहता है। (ट्रेवल एजेन्ट आदि जिन्हें यात्राएं व्यापार के लिए अधिक करनी पड़ती हैं।) यह सम्भावना तब और प्रबल बनती है, जब सातवें भाव में आने वाली राशि भी चर (4, 7, 10) राशि हो।

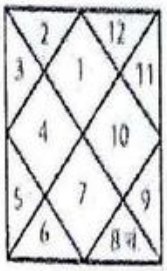

अष्टम भाव—आठवें भाव का चन्द्रमा भी कष्टकारी व अनिष्टप्रद माना गया है। यद्यपि जातक की बुद्धि तीव्र होती है। परन्तु स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। जातक सदा रोगी रहता है तथा उसकी आयु कम होती है। जलोदर द्वारा या जल में डूबकर मरने का भय होता है (विशेषकर जब इस भाव में जल तत्त्व की राशि हो)। बावजूद इलाज के बीमारियां साथ नहीं छोड़तीं (खासकर बचपन में) अष्टमेश भी निर्बल हो तो जातक की मृत्यु बचपन में ही हो जाती है। शास्त्रकारों ने तो यहां तक कहा है—

सभा विद्यते भेषजा तस्य गृहे पकेत्कर्हिविरकायमुद्गोपकानि।
महाव्यथवो भीतयोवारिभूता राशोक्लेशकृत्यं कटान्यष्टमाख्य:॥

अर्थात् (अष्टमस्थ चन्द्र हो तो जातक के घर में सदा वैद्यों की सभाएं लगी रहती हैं और मूंग की दाल का पानी ही पकता रहता है। जल से चिकित्सा होने वाले पाण्डु आदि रोग घर में रहते हैं। अनेक कष्ट, संकट तथा दुर्जनों से आपदाएं पड़ती हैं। आठवां चन्द्रमा सदैव कष्टदायक ही होता है)।

इसीलिए आठवां चन्द्र बालारिष्ट योग भी बनाता है। लाल किताब के अनुसार भी आठवें चन्द्र वाले जातक का रोग कभी पीछा नहीं छोड़ते। बचपन विशेष कष्ट में बीतता है। जातक की माता आदि भी दुख पाती है। ऐसे जातक को विरासत में मिली सम्पत्ति का उपयोग व खेती बाड़ी के काम अशुभ होते हैं। माता, मौसी, दादी, नानी सबके हाल खराब होते हैं। केवल मामा की स्थिति अच्छी हो सकती है। या ससुराल के हाल अच्छे होते हैं। आठवें चन्द्र का एक ही लाभ है कि कैसा भी अशुभ चन्द्रमा इस भाव में हो तो, जातक को नि:संतान मरने नहीं देता।

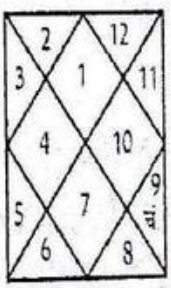

नवम भाव—लग्नकुंडली में नौवें भाव में चन्द्र हो तो जातक बहुत बुद्धिमान, प्रसन्न, सन्तानसुख पाने वाला तथा विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण रखने वाला होता है। (चन्द्रमा शुक्ल पक्षीय हो तो जातक का भाग्य भी उत्तम होता है। किन्तु मेष राशि का चन्द्र हो तो भाग्योन्नति में बाधा डालता है।)

तथापि जातक विश्वासपात्र नहीं माना जा सकता (विशेषकर SEX के मामले में)। ऐसा हमारे सुयोग्य आचार्य श्री मदनमोहन कौशिक का मानना है। स्त्री राशि का हो तो पुत्र देर से बड़ी आयु में ही प्राप्त होता है। (नवमेश दूषित व निर्बल हो तो पुत्राभाव भी सम्भव है।)

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक समाज में विशेष स्थान प्राप्त करता है। धन-दौलत, संतान आदि सब सुखों से भरा-पूरा होता है। जातक स्वयं विद्वान न भी हो तो भी उसकी शिक्षा का लाभ सभी को मिलता है तथा स्वयं वह भी लाभान्वित होता है। जातक प्राय: दुखियों की सहायता करने का स्वभाव भी रखता है।

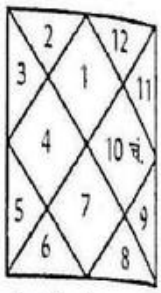

दशम भाव—हमारे सुयोग्य आचार्य कौशिक (मदन मोहन) जी के अनुसार दशम भाव का चन्द्र जातक को पवित्र विचारों वाला, साहसी, विशेष धनी तथा परमार्थ में धन लगाने वाला बनाता है। शास्त्रीय मत से दसवें चन्द्र का जातक धर्म-कर्म करने वाला, बन्धुओं द्वारा सुख पाने वाला, राजा द्वारा धन प्राप्त करने वाला, युवा स्त्रियों के साथ हास्यालाप करने वाला होता है। किन्तु उसे प्रथम पुत्र से अल्पसुख ही प्राप्त होता है (प्राय: प्रथम पुत्र शीघ्र मर जाता है अथवा उससे वियोग हो जाता है)।

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक का धर्मस्थलों (मन्दिर, गुरुद्वारे, मस्जिद, चर्च आदि) पर जाना उसको शुभ फल प्रदान करता है, परन्तु रात्रि के समय ऐसे जातक को दूध पीना अशुभ फल देता है। (पीना ही पड़े तो केसर आदि डालकर उसका रंग बदल लेना चाहिए।) दशमस्थ चन्द्र जातक की शिक्षा में अड़चनें भी पैदा करता है।

दशमस्थ चंद्र यदि चर राशि का हो तो जातक को व्यापार में अस्थिरता प्रदान करता है। यदि नौकरी हो तो विभाग बदलते रहना/स्थानांतरण कराता है। स्थिर राशि हो तो जातक का सम्पूर्ण जीवन पूर्वजों का ऋण चुकाने में ही बीत जाता है। द्विस्वभाव राशि में भाग्य की दृष्टि से ठीक नहीं होता (चन्द्रमा शुक्ल पक्ष का है या कृष्ण पक्ष का है—यह भी अवश्य विचारना चाहिए)।

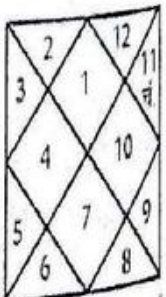

एकादश भाव—चन्द्रमा जब ग्यारहवें भाव में हो तो जातक अधिक सन्तानों वाला (प्राय: कन्याएं अधिक), धनी, दीर्घायु, पर्याप्त सेवकों से युक्त, साहसी, प्रसिद्ध तथा अच्छे मित्रों वाला होता है। इसी भाव में चन्द्रमा के साथ गुरु भी हो तो उन्नति व सफलतादायक 'गजकेसरी योग' बनता है—जिससे जातक के जीवन एवं व्यापार के साथ-साथ आर्थिक स्तर का भी उत्कर्ष होता है।

चन्द्रमा यदि अशुभ स्थिति में हो तो जातक की नरसंतान व जातक की माता साथ-साथ नहीं रहते। रहते हैं तो झगड़ते रहते हैं। चन्द्र शुभ हो तो जातक को धन, प्रतिष्ठा, अधिकार व आमदनी खूब होती है। देखने में आया है कि ऐसे जातक या तो बहुत शिक्षित होते हैं, या नहीं के बराबर (शुक्ल पक्ष व चन्द्र पक्ष के अलावा सही स्थिति को जानने के लिए पंचम भाव व पंचमेश की स्थिति भी बुध एवं गुरु के साथ विचार लेनी चाहिए)।

लाल किताब के अनुसार यदि ग्यारहवें घर में पुरुष राशि का चन्द्रमा हो तो जातक पुश्तैनी काम छोड़ कर नया काम करता है। स्त्री राशि का हो तो नए व पुश्तैनी दोनों कार्यों को करता व लाभ पाता है। उच्च का चन्द्रमा जातक को उच्चाधिकारी, विपुल धन वाला बनाता है परन्तु पुत्रों की अपेक्षा पुत्रियां अधिक देता है। शुभ प्रभाव का चन्द्र जातक को युवावस्था में ही यश दिलाता है। ऐसा जातक अद्भुत नेतृत्व क्षमता वाला तथा शत्रुओं के लिए साक्षात् काल होता है। परन्तु नीच राशि, शत्रुक्षेत्री या निर्बल चन्द्र हो तो जातक मूर्ख, अज्ञानी, रोगी तथा घर में ही रहना पसंद करने वाला होता है। सन्तान अधिक होती हैं।

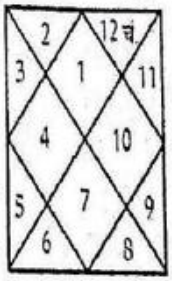

द्वादश भाव—बारहवें भाव में चन्द्रमा हो तो जातक कुटिल, ईर्ष्यालु, कमजोर दृष्टि वाला, आलसी, अप्रसन्नचित्त वाला होता है। ऐसे जातक को अपयश, अपमान या कलंक झेलना पड़ता है। भूतकाल को याद करके आहें भरना उसका स्वभाव बन जाता है। अपना थोड़ा भी दुख उसे बड़ा मालूम होता है। ऐसे जातक के जीवन में खुशी के तुरन्त बाद दुख की स्थितियां प्राय: बनती रहती हैं। चन्द्रमा अशुभ हो तो जातक पैतृक सम्पत्ति को उजाड़कर रख देता है।

लाल किताब के अनुसार बारहवां चन्द्र यदि निर्बल या शत्रुक्षेत्रीय हो तो जातक दुर्बल, कफ रोग से पीड़ित, शीघ्र क्रुद्ध हो जाने वाला, धनहीन, कलहपूर्ण दाम्पत्य वाला तथा संदेहास्पद चरित्र का होता है। कृष्णपक्ष का चन्द्र हो तो जातक कंजूस होता है। उसे राज्यपक्ष की ओर से दण्ड या जुर्माने का भय रहता है तथा कोई उसका यकीन नहीं करता। उच्च का चन्द्रमा हो तो जातक को उसके किसी सम्बन्धी की सम्पत्ति मरणोपरांत मिल जाती है। खेती से लाभ होता है, परन्तु पत्नी से सम्बन्ध अच्छे नहीं रहते। पुनर्विवाह की सम्भावना बनती है। कन्या राशि में चन्द्र हो तो जातक को पिता का थोड़ा कर्ज चुकाना पड़ता है। जलराशि का चन्द्र पुत्र अधिक देता है। जातक का संतान से अगाध प्रेम होता है। किन्तु रेस, सट्टे आदि में जातक की रुचि रहती है।

❑❑

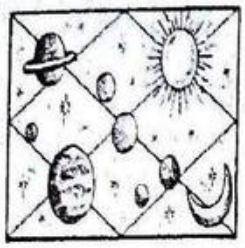

मंगल का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—मंगल यदि लग्न या प्रथम भाव में हो तो जातक निर्दयी, साहसी, शीघ्र क्रोधित हो जाने वाला, तुनकमिजाज, अप्रसन्न, निर्धन तथा महत्वाकांक्षी होता है। ऐसे जातक के शरीर पर (विशेषकर मस्तक या चेहरे पर वृत्त (CUT) का निशान रह जाता है। उसके साथ दुर्घटनाएं बार-बार घटती हैं तथा (यदि अन्य योगों से कट न रहा हो तो) जातक मांगलीक दोष से युक्त होता है। जीवनसाथी के साथ भी इसका गृहस्थ जीवन शांतिपूर्ण अथवा सफल नहीं कहा जा सकता। बाल्यकाल में उदर व दांतों के रोग सम्भव होते हैं।

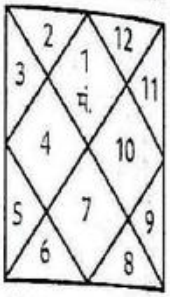

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक के भाई अवश्य होते हैं। वह वीर, हिम्मती, किन्तु क्रोधी होता है। जातक अपने भाइयों व ससुराल पक्ष के लिए शुभ होता है। मंगल अशुभ स्थिति में हो तो जातक व उसका परिवार अत्यंत गरीबी में दिन काटते हैं। ऐसा जातक पतित कार्यों से दूर रहे, यही उसके लिए शुभ होता है।

प्रथम भाव में मंगल यदि उच्च राशि या स्वराशि में हो तो शरीर पुष्ट व निरोग होता है। जातक को यश तथा सरकार द्वारा सत्कार मिलता है। शत्रु राशि में हो और पापदृष्ट हो या पापग्रह से युति हो तो नेत्र रोगी होता है। मिथुन या तुला राशि का मंगल हो तो जातक को मिलनसार बनाता है। सिंह राशि का हो तो देवयोग से धन व उन्नति प्राप्त कराता है। किन्तु वृष, कन्या या मकर राशि का मंगल हो तो जातक भोजन देने में भी कंजूस होता है (विशेषकर मकर में)। कर्क, वृश्चिक, कुम्भ या मीन राशि का मंगल लग्नस्थ हो तो जातक को 'पैसे का पीर' बनाता है।

प्राय: लग्नस्थ मंगल वाला जातक कई व्यवसायों में रुचि लेता है, पर ढंग से सफल एक में भी नहीं होता। यदि डॉक्टर बनने का योग हो तो ऐसा जातक सर्जन बनता है, फिजीशियन नहीं।

द्वितीय भाव—मंगल दूसरे भाव में हो तो जातक कठोर/कर्कश आवाज/वाणी वाला, निर्धन, मंदबुद्धि, उठाईगीर, चोरी की प्रवृत्ति वाला तथा नेत्र रोगी होता है। ऐसा जातक परिवार/कुटुम्ब में झगड़े का कारण बनता है (यदि शुभ योगों

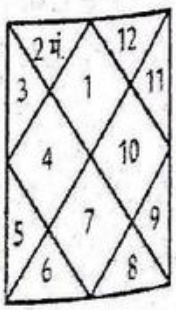

से धन प्राप्त हो भी जाए तो जातक कंजूस बनकर न खुद खर्च करता है न किसी और को करने देता है—ऐसा शास्त्रीय मत है)। ऐसे जातक को जमीन खरीदने-बेचने या कृषि से लाभ सम्भव होता है। दक्षिण भारतीय ज्योतिषी दूसरे भाव में मंगल वाले जातक को भी मांगलीक मानते हैं।

लाल किताब के अनुसार दूसरे भाव का मंगल जातक को धर्म-कर्म में विश्वास रखने वाला बनाता है। वह अपने भाइयों का पालन करता है। किन्तु अशुभ प्रभाव में वह 'आस्तीन का सांप' सिद्ध होता है। ऐसे जातक की मृत्यु अचानक लड़ाई-झगड़े में होनी सम्भव होती है। वह बैंक-बैलेंस होते हुए भी मैले, पुराने वस्त्र पहनने वाला, पराए अन्न से यापन करने वाला (चोर, उठाईगीर, दलाल, चन्दा खाने वाला, मांगकर खाने वाला आदि) कंजूस होता है। कर्कश ध्वनि वाला होता है। शय्या सुख उसे अल्प ही मिलता है, विशेषकर पृथ्वी राशि का मंगल हो तो किसी कारण से पति-पत्नी साथ नहीं रह पाते।

तृतीय भाव—तृतीय भाव में मंगल हो तो जातक प्रसिद्ध, क्रोधी, साहसी, पराक्रमी, धैर्यवान तथा कर्कश वाणी वाला होता है। वह यह कई कलाओं में पारंगत हो सकता है, परन्तु छोटे-बड़े भाइयों के लिए घातक/मारक होता है। संघर्ष क्षमता, आत्मबल तथा शक्ति से सम्पन्न होता है। योद्धा भी हो सकता है।

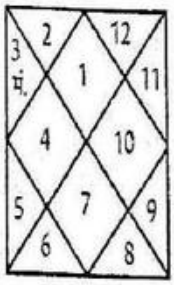

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक शूरवीर, आत्मबली, भुजबल से परिस्थितियों को अनुकूल बना लेने वाला, जीवन में अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करने वाला, बुद्धिमान किन्तु गुस्सैल होता है। भाइयों से उसके सम्बन्ध अच्छे नहीं रहते, कोर्ट-कचहरी की नौबत आ जाती है। स्त्री राशि में जातक धूर्त होता है। स्व या उच्च राशि में हो तो जीवन अस्थिर होता है। राहू के साथ अशुभ योग हो रहा हो तो जातक वैश्यागामी हो जाता है (मकर राशि भी तीसरे भाव में हो तब नहीं)। तृतीयस्थ मंगल से जातक को गवाही या महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों पर हस्ताक्षर के मामले में राजदण्ड का भय रहता है। ऐसे जातक को चालबाजी/धोखेबाजी नहीं करनी चाहिए तथा उसके साथ धोखेबाजी न हो इस बारे में सतर्क रहना चाहिए। वैसे ऐसा जातक यदि नम्र स्वभाव अपना ले तो उसके लिए शुभ होता है।

चतुर्थ भाव—मंगल यदि चौथे भाव में हो तो जातक वाहनसुखी, संतानवान, अप्रसन्नचित्त व जन्मस्थान से दूर रहने वाला होता है। चौथा मंगल जातक की माता की आयु क्षीण कराता है। परन्तु कृषि, खेती-बाड़ी या प्रॉपर्टी डीलिंग के काम में जातक को लाभ की सम्भावना बढ़ाता है। यदि अन्य योगों से कट न रहा हो तो चौथा मंगल भी जातक को 'मांगलीक दोष' देता है (मांगलीक दोष के विषय में आगे विस्तार से पढ़ेंगे)।

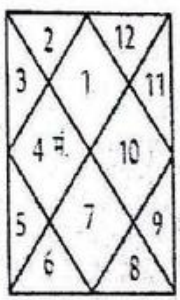

मंगल स्वग्रही या उच्च राशि में हो तो उच्च स्तरीय वाहन का सुख, सुखमय जीवन तथा संतान की ओर से दुख प्राप्त होता है। ऐसे जातक को द्विभार्या योग (दो पत्नी) होता है। मेष, सिंह, धनु (अग्नि राशियां) में मंगल हो तो घर में आग लगने का भय होता है। मेष, कर्क, सिंह, मीन को छोड़कर अन्य राशियों में चौथा मंगल हो तो जातक का अभ्युदय जन्मभूमि/जन्मस्थान से अलग/दूर स्थान पर होता है।

लाल किताब के अनुसार मंगल अशुभ प्रभाव में चौथे घर में हो तो जातक झगड़ालू, स्वार्थी, दुराग्रही, साहसी तथा माता-पिता के सुख से हीन या माता-पिता से वैमनस्य रखने वाला होता है। समाज में आदर नहीं पाता। सख्त व कटु भाषी, अकड़ू होता है। किन्तु शुभ प्रभाव में चौथा मंगल जातक को दूसरों की शरारतों का उचित उत्तर देने वाला, साफ व सच्चे दिल का, बड़े परिवार का पालन करने वाला माता के प्रति अपार श्रद्धा वाला बनाता है (माता का स्वभाव अड़ियल हो तो शुभ प्रभाव के बाद भी जातक का माता से मनोमालिन्य तो होता है परन्तु वैमनस्य नहीं)। ऐसे जातक को पैतृक सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

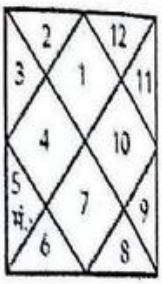

पंचम भाव—पांचवें घर में मंगल हो तो जातक तुनकमिजाज (SHORT-TEMPERED), धोखेबाज, बुरी आदतों वाला तथा आवेगी और रोगी (विशेषकर उदर सम्बन्धी) होता है। जातक की सन्तान के लिए पांचवां मंगल अशुभ रहता है (संतान कष्ट व अवरोधों से ही प्राप्त होती है)। मंगल बली हो तथा पंचमेश की स्थिति सुदृढ़ हो तो जातक की पाचनशक्ति तीव्र रहती है।

लाल किताब के अनुसार पांचवें मंगल वाले जातक की पत्नी गर्भस्राव रोग से पीड़ित रहती है। सन्तान के लिए पांचवां मंगल शुभ नहीं होता। मंगल निर्बल हो तो जातक के पिता के भाग्य की हानि होती है। पुत्रों से दुख, पाप कर्मों में रुचि तथा मांस-मदिरा का शौक रहता है। जातक साहसी, संघर्षपूर्ण जीवनवाला तथा पत्नी से वैचारिक मतभेदों के कारण कलह झेलने वाला होता है। मंगल उच्च या पुरुष राशि में हो तो संतान प्राप्ति में बाधा, पत्नी को योनि रोग या मासिक धर्म सम्बन्धी रोग, धन की प्राप्ति अल्प किन्तु ख्याति के फल मिलते हैं। जातक कामुक एवं विदेश में वास करने वाला होता है।

वैद्यों या डॉक्टरों को पांचवां मंगल शुभ माना गया है। शुभ ग्रहों से देखा जाता हुआ बली एवं शुभ मंगल जातक को धनवान बनाता है। जैसे-जैसे आयु बढ़ती है, जातक की अमीरी भी बढ़ती है। परन्तु ऐसा जातक यदि अपने पुश्तैनी मकान से लगातार बाहर रहे तो उसकी संतान के लिए शुभ नहीं होता। अशुभ मंगल घर में अग्निकांड करा सकता है अथवा करंट लगने या 'शॉर्टसर्किट' की दुर्घटनाएं घटा सकता है। ऐसे में जातक बेकार की यात्राएं बहुत करता है (स्त्री

जातकों में पांचवां मंगल यदि संतान दिलाता है तो वह सिजेरियन या ऑपरेशन से होती है)।

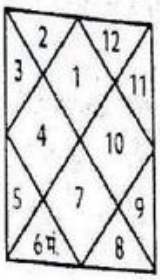

षष्ठ भाव—छठे भाव में बैठा मंगल जातक को साहसी, शत्रुजित, शक्तिशाली, धैर्यवान, किन्तु ऋणी, चर्मरोगी, रक्तविकारी व गुप्त शत्रुओं वाला बनाता है। ऐसा जातक देशाटन करने वाला व घुमक्कड़ होता है, परन्तु उसे विषघात का भय रहता है। जातक माता के पक्ष (ननिहाल/मामा/मौसी आदि) के लिए शुभ नहीं होता।

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को काफी मिन्नतें मांगने पर संतान प्राप्त होती है। छठा मंगल शुभ हो तो जातक को साधु स्वभाव का या संन्यासी भी बना देता है। अशुभ मंगल जातक को झगड़ालू और फसादी बनाता है। ऐसा जातक जब अपनी सन्तान का जन्मोत्सव या जन्मदिन मना रहा होता है तब दुखद घटना घटनी संभव होती है।

छठे भाव के मंगल से जातक के सामने शक्तिशाली शत्रु भी टिक नहीं पाता। उसकी जठराग्नि और कामवेग दोनों तीव्र होते हैं। चरराशि में मंगल हो तो यकृत रोग व बालों के झड़ने की समस्या देता है। स्थिर राशि में हृदय रोग तथा द्विस्वभाव राशि में क्षयरोग सम्भावित होता है। अग्नि राशि में हो तो शत्रु द्वारा शस्त्र, विष या अग्निघात का भय होता है। मिथुन या कन्या राशि में कुष्ठ रोग या चर्मरोग सम्भावित होता है। मंगल पर शुभ प्रभाव हो तो जातक कठिन संघर्षों से जूझकर कीर्ति प्राप्त करता है। ऐसा जातक यदि अधिकारी हो और रिश्वत ले तो पकड़ा नहीं जाता।

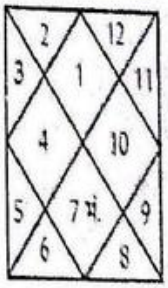

सप्तम भाव—सातवें भाव का मंगल जातक को मांगलीक दोष वाला बनाता है (यदि अन्य योगों से यह दोष कट न रहा हो तो)। ऐसा जातक अपने जीवन साथी से अप्रसन्न/असंतुष्ट, तुनकमिजाज, कठोर वाणी वाला, मक्कार, धूर्त, निर्धन व ईर्ष्यालु होता है तथा अपने जीवनसाथी की मृत्यु का कारण बनता है। जातक की पत्नी भी उग्र स्वभाव की तथा झगड़ालू होती है। दाम्पत्य कलहपूर्ण रहता है। प्रायः यह कलह अलग होने की नौबत पैदा कर देता है। कार्य-व्यवसाय में भी प्रतिपक्षी के साथ स्पर्धा बनी रहती है। यदि अग्निराशि भी हो तो जातक को प्रेस/छापाखाने का धंधा लाभकारी होता है। परन्तु अग्निकांड का भय भी रहता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक प्रायः बीच की स्थिति में नहीं रहता। या तो बहुत अमीर होता है, या फिर बहुत गरीब। किन्तु ऐसे जातक की प्रबल इच्छा जीवन में एक बार पूर्ण अवश्य होती है। यदि मंगल अशुभ हो तो जातक

मनहूस होता है। उसकी साली, बहन, बुआ आदि यदि उसके साथ रहें तो वे स्वयं भी बर्बाद हो जाती है।

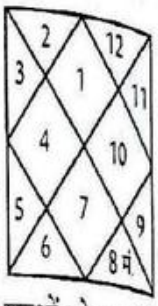

अष्टम भाव—आठवें भाव का मंगल भी जातक को मांगलीक दोषी बनाता है (यदि अन्य योगों से यह दोष कट न रहा हो तो)। ऐसा जातक पतित (भ्रष्ट), रोगी, चरित्रहीन, महासेवी/नशेडी, कठोरवाणी युक्त, नेत्ररोगी, चोर तथा निर्धन होता है। यदि मंगल शुभ प्रभाव में हो तो जातक अपनी बात का पक्का होता है। जो कहता है, वह करता है। परिश्रमी तथा शत्रुओं को दबा देने वाला, न्यायप्रिय होता है। परन्तु मंगल अशुभ हो तो जातक के छोटा भाई नहीं होता। होता भी है तो सबके दुख का कारण बनता है, अशुभ मंगल के साथ शनि, सूर्य व चन्द्र भी हों तो जातक अल्पायु होता है। किन्तु मंगल अकेला हो तो शीघ्र मरने नहीं देता।

लाल किताब के अनुसार आठवां मंगल जातक को दरिद्र, रोगी व देह सुख से न्यून बनाता है। विवाह के बाद परेशानियां और बढ़ जाती हैं। शुभ स्थान में बैठा ग्रह भी कुछ विशेष लाभ नहीं दे पाता मित्र भी शत्रुवत् हो जाते हैं। नीच राशि का मंगल हो तो रक्तपित्त सम्बन्धी रोग होते हैं। अग्नि तत्त्व राशि हो तो आग या गोली द्वारा जातक की मृत्यु होती है। अथवा बिजली के झटके से मृत्यु होती है। वायु तत्त्व राशि का मंगल मनोविकृति/मस्तिष्क विकृति (वायुरोग) द्वारा मृत्यु होने की सूचना देता है। मकर राशि का मंगल सन्तानाभाव देता है तथा जातक को पेटू व अजीर्ण का रोगी बनाता है। ऐसा जातक यदि सरकारी नौकरी में हो तो खूब रिश्वत लेता है। बवासीर का रोगी हो सकता है। कर्क, वृश्चिक तथा मीन (जल राशि) राशि में हो तो जातक को जल में डूबकर मरने का भय होता है। वृष, कन्या और मकर राशि में आठवां मंगल हो तो जातक के अशुभ प्रभाव स्वत: ही कम हो जाते हैं।

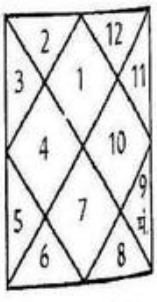

नवम भाव—नौवें भाव में मंगल हो तो जातक अभिमानी, ईर्ष्यालु, पापी तथा शीघ्र क्रोधित हो जाने वाला होता है। ऐसा जातक यद्यपि अच्छे पद पर पहुंचता है, परन्तु पिता के लिए अशुभ तथा नास्तिक होता है। मेरे सुयोग्य आचार्य श्री मदन मोहन कौशिक के अनुसार ऐसे जातक की अपने भाइयों से अनबन रहती है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक न्यायप्रिय तथा बड़े भाई की सेवा से सुख प्राप्त करने वाला होता है। यदि मंगल अशुभ प्रभाव में हो तो जातक नास्तिक व बदनाम होता है। ऐसे जातक के मां-बाप दुखी रहते हैं। यदि मकर या मीन राशि का मंगल हो तो विशेष अशुभ होता है। ऐसा जातक कुकर्मी, नीच, झूठा, डींग मारने वाला तथा गुरु पत्नी से भी व्यभिचार का इच्छुक होता है।

अग्नि या जल तत्त्व की राशियों में मंगल यद्यपि जातक को मिलनसार व उदार बना देता है, परन्तु स्वार्थी वह फिर भी रहता है। नौवें भाव का मंगल जातक को नई मान्यताएं स्थापित करने का प्रयास करने वाला बनाता है, ऐसा जातक पुरानी रूढ़ियों का पोषक नहीं होता। स्त्री राशि में मंगल जातक की बहनों के लिए तथा पुरुष राशि का मंगल जातक के भाइयों के लिए घातक/मारक होता है। वृश्चिक राशि का मंगल दुष्ट व लालची बनाता है। ऐसा जातक अपने एक पैसे के लिए दूसरे का लाखों का नुकसान करने से भी नहीं चूकता।

नौवां मंगल यदि कुंडली में शुक्र से बारहवें भाव में हो (शुक्र दसवें भाव में हो) तो द्विभार्या योग भी बनाता है।

दशम भाव—लग्न कुंडली के दसवें भाव में मंगल हो तो जातक धनवान, प्रसिद्ध, सम्मानित, वाहन-सुखी तथा व्यापारकुशल होता है। परन्तु संतान अल्प होती है। दसवें भाव की स्थिति सुदृढ़ न हो तो नि:संतान भी हो सकता है। माता के लिए ऐसा जातक कष्टकारी होता है। शास्त्रकारों के अनुसार ऐसा जातक सरकार द्वारा लाभ/धन पाता है, पर अभिमानी होता है।

लाल किताब के अनुसार यदि मंगल शुभ प्रभाव में हो तो जातक गरीब घर में पैदा होकर भी घर को धनी व अमीर बनाता है। वह नि:सन्तान कभी नहीं रहता, गृहस्थ सुख भी उत्तम प्राप्त करता है। अशुभ प्रभाव का मंगल जातक को घर का सामान बेचकर निर्धन हो जाने को विवश करता है। मंगल के साथ गुरु बैठा हो तो जातक को धन, पद तथा अधिकार प्राप्त होते हैं। पापग्रह के साथ हो तो विघ्न बाधाएं जातक का पीछा नहीं छोड़तीं।

स्त्रीराशि में मंगल हो तो जातक अपने भुजबल व संघर्ष द्वारा उन्नति करता है। पुरुष राशि में हो तो जातक को सहज ही उन्नति प्राप्त होती है। वृश्चिक राशि का मंगल डॉक्टरी तथा वकालत के पेशे में लाभप्रद होता है। किन्तु नौकरी करने वालों को अधिकारी से डांट पड़वाता रहता है। सामान्यत: दशमस्थ मंगल जातक को व्यापारकुशल, स्वयं व्यापारी या व्यापारिक संस्था में उच्च पद पर पहुंचने वाला बनाता है। लेकिन उसके एक पुत्र की मृत्यु होती है। स्वयं उसे भी अपने माता-पिता से अलग/दूर होना पड़ता है। (माता-पिता की मृत्यु द्वारा/दत्तक पुत्र बनकर अथवा अन्य कारणों से।)

एकादश भाव—यदि मंगल ग्यारहवें भाव में हो तो जातक कठोर वाणी वाला, दम्भी, तुनकमिजाज और धनी होता है (किन्तु प्राय: वह असामाजिक/अवैध ढंग से धन प्राप्त करने वाला होता है)। प्रदर्शन/दिखावा करने वाला होता है। (गरीब भी हो तो राजा की भांति पहनावे आदि से स्वयं को प्रदर्शित करेगा)।

अशुभ मंगल हो तो जातक ऋणी होता है। पैतृक सम्पत्ति बेचकर खा जाता है (वैसे तो पैतृक सम्पत्ति उसे कम ही मिलती है। मिलती है तो न के बराबर मिलती है)।

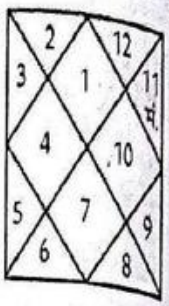

लाल किताब के अनुसार यदि ग्यारहवां मंगल पुरुष राशि में हो तो सन्तान का अभाव देता है। ऐसे जातक को संतान नहीं होती। होती भी है तो होकर मर जाती है। शुभ योगों के कारण न भी मरे तो बड़ी होकर झगड़े करती है। क्योंकि ऐसे जातक को सन्तान से सुख नहीं होता। प्राय: उसकी पत्नी गर्भस्राव के रोग से ग्रस्त रहती है। किन्तु स्त्री राशि का मंगल हो तो जातक को आज्ञाकारी पुत्र प्राप्त होते हैं। उनके द्वारा जातक को यश मिलता है। परन्तु ऐसा जातक सरकारी नौकरी में हो और रिश्वत लेते पकड़ा जाता है। द्रव्य प्राप्ति के लिए वह अनैतिक हथकंडे भी अपनाता है। ऐसा मंगल डॉक्टरी के पेशे में शुभ रहता है। तब जातक किसी रोग का विशेषज्ञ या सर्जन बनकर धन व मान प्राप्त करता है। अग्नि राशि में मंगल हो तो जातक की जुए, सट्टे, रेस, लॉटरी आदि में रुचि होती है और इनसे लाभ भी होता है।

द्वादश भाव—बारहवें भाव का मंगल जातक को मंगली दोष वाला बनाता है (यदि अन्य योगों से यह दोष कट न रहा हो तो)। ऐसा जातक नेत्रविकारी, चिड़चिड़ा/जल्दी गुस्सा हो जाने वाला, झगड़ालू, आवारागर्द, कुटिल तथा गुप्त कार्य करने वाला होता है। गुप्त शत्रु का भय रहता है। जीवनसाथी के लिए बारहवां मंगल घातक/मारक होता है। ऐसे जातक को राज्य दण्ड मिलना सम्भावित होता है। चोर, लुटेरों से धनहानि सम्भव होती है। वह बहुभोजी, कामुक तथा स्त्री सुख से न्यून होता है। विशेष स्थितियों (प्रभावों) में ऐसा जातक राजद्रोही, अपराधी, अनैतिक कार्य करने वाला तथा हिंसक होता है। मंगल बलवान हो तो युवावस्था में प्रसिद्धि दिलाता है।

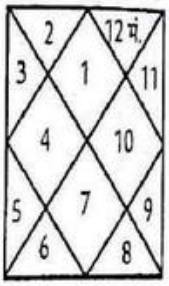

लाल किताब के अनुसार बारहवां मंगल यदि शुभ स्थिति में हो तो जातक गर्ममिजाज, स्वतंत्रता पसंद करने वाला/उच्छृंखल, गुरुजनों का आदर करने वाला तथा सुखद नींद लेने वाला होता है। मंगल अशुभ हो तो मूर्खतापूर्ण कार्यों में धननाश तथा भाई-बहनों से जातक के सम्बन्ध खराब कराता है। ऐसा जातक शत्रुओं द्वारा पराजित होता है। शत्रु उस पर हावी रहते हैं। मंगल यदि अत्यधिक पाप प्रभाव में हो तो भाई-बहनों के लिए अशुभ तथा जातक की संतान के लिए भी अशुभ होता है (वंश क्षय सम्भव होता है। यानी कोई नाम लेवा नहीं बचता)। ऐसे जातक को विदेश में वास करना पड़ सकता है। जातक को उपदंश, प्रमेह, रक्तविकार,

अपच आदि रोग होते हैं। जातक व्यभिचारी होता है। धन का संग्रह नहीं कर पाता। ऐसा जातक किसी को उधार दे तो उधार डूबता है।

शास्त्रकारों के अनुसार बारहवां मंगल जातक को दुर्व्यसनी, अतिलोभी, अधर्मी व पापी भी बनाता है। उसे सिंह, सर्प या दुर्जनों द्वारा भय रहता है।

विशेष—मंगल के साथ यदि शुक्र की युति भी बारहवें भाव में हो रही हो तो जातक कामोन्मादी होता है। ऐसा जातक सहवास के समय पाशविक आचरण करता है तथा जीवनसाथी को दांत व नाखूनों द्वारा काटता-झंझोड़ता है। अशुभ प्रभाव में हो तो जातक बलात्कारी होता है। वह रास्ते चलते किसी को भी पकड़कर बलात्कार कर सकता है।

□□

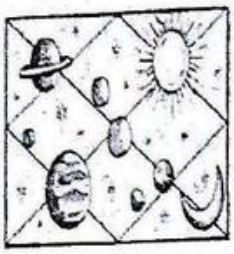

बुध का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—यदि लग्न/प्रथम भाव में बुध हो तो जातक दीर्घायु, विद्वान, गणितज्ञ, विनोदी, उदार, मिलनसार, धनी, कोमल-वाणीवाला, सुन्दर कांतिवाला, प्रशासनिक योग्यता/प्रबन्धन योग्यता से युक्त तथा विपरीत लिंगियों में चर्चित/प्रसिद्ध होता है। उसकी संतान भी प्राय: धर्मात्मा और ज्ञानी होती है। जातक राजा के तुल्य हैसियत वाला भी हो सकता है। बुध शुभ हो तो जातक की पत्नी भी कुलीन व अमीर घर से आती है। आजीविका व आय दोनों की दृष्टि से जातक की स्थिति और बेहतर हो जाती है। ऐसी स्थिति में सूर्य जिस भाव में बैठा हो, उस भाव से सम्बन्धित जातक का रिश्तेदार भी धनवान हो जाता है। (जैसे यदि सूर्य छठे घर में है तो मामा या मौसी, तीसरे घर में है तो भाई या बहन आदि) ऐसा लाल किताब का मत है। बुध अशुभ हो तो जातक बदनाम व शरारती हो सकता है।

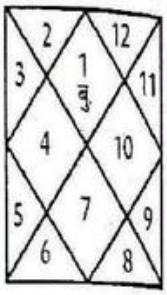

लाल किताब के अनुसार प्रथम भाव का बुध जातक को स्वर्णिम देह कांति प्रदान करता है तथा लेखक, ज्योतिषी या प्रेस रिपोर्टर बनाता है। बुध यदि वृष, कन्या, मकर राशि में हो तो वह जातक को व्यापारी/बड़ी व्यापारिक फर्म में नौकरी करने वाला बनाता है। कर्क, वृश्चिक या मीन राशि का बुध जातक को बैंकिंग के कार्य में ले जाता है। अथवा प्रूफरीडिंग या कम्पोजिंग के काम में ले जाता है। मेष या सिंह राशि का बुध जातक को नकल करने की प्रवृत्ति देता है। किन्तु मकर, कन्या तथा वृष राशि का बुध अनेक दुर्गुण भी देता है।

यदि शुक्र, मंगल तथा सप्तमेश की स्थिति सुदृढ़ न हो तो लग्नस्थ बुध जातक की SEX POWER में कमी भी पैदा कर सकता है।

द्वितीय भाव—लग्नकुंडली के दूसरे भाव में बुध हो तो जातक आकर्षक व्यक्तित्व वाला, प्रसन्नचित्त, चतुर, साहसी, धनसंचयी, शुभकर्मा, श्रेष्ठ वक्ता, सफल वकील या सफल दूत होता है। वह विनम्र वाणी वाला होता है। उत्तेजित या क्रुद्ध स्वर में कभी बात नहीं करता (यदि इस भाव में मंगल

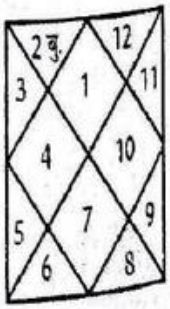

या सूर्य की युति, दृष्टि, राशि आदि हो तो बात अलग है)। यदि बुध यहां बली व अकेला हो तो व्यक्ति योगी या राजा होता है। ऐसा जातक ब्रह्मज्ञानी हो सकता है। यदि बुध अशुभ हो तो जातक को पुत्र प्राप्ति कठिन/असम्भव हो जाती है। पुत्र हो भी तो जातक उससे दुखी रहता है। ऐसे जातक को जुआ, लॉटरी, सट्टा या डुप्लीकेट माल का व्यापार नुकसानदायक होता है। अत: उसे इनसे बचना चाहिए।

लाल किताब के अनुसार शुभ बुध धन व बुद्धि दोनों प्रचुरता से देता है। द्वितीयस्थ बुध जातक को वाचाल या बातूनी, बाहुबल से धनोपार्जन करने वाला बनाता है। ऐसे जातक को आकस्मिक धन प्राप्ति के अवसर प्राप्त होते हैं। लिपिक या कमीशन एजेन्ट के रूप में ऐसा जातक अधिक सफल होता है। नीच राशि में बुध पूर्ण विद्या नहीं होने देता। जातक अक्खड़ स्वभाव का होता है तथा उसे चर्म रोग सम्भावित होते हैं। बुध यदि वक्री हो तो दरिद्र योग बनाता है। गुरु की दृष्टि या युति दूसरे भाव के बुध के साथ हो तो जातक अच्छा गणितज्ञ होता है। शास्त्रों के अनुसार—

धने बुद्धिमान बोधने बाहुतेजा: सभा संगतो भासते व्यास राव।
पृथूदारता कल्पवृक्षस्य तद्वद्बुधैर्भाष्यते भौमत: पट पटीयम्॥

अर्थात् द्वितीयस्थ बुध वाला जातक बुद्धिमान, पुरुषार्थी, पण्डितों/विद्वानों के समाज/सभा में आदर पाने वाला तथा सर्वभोगों को भोगने वाला (सौभाग्य व ऐश्वर्य सम्पन्न) होता है।

तृतीय भाव—लग्न कुंडली के तीसरे भाव में बुध हो तो जातक अपने कार्य में चतुर, परिश्रमी, लेखक, सम्पादक, हस्तरेखाविद्, कवि, सन्तानवान, अल्प भाई-बहनों वाला, आरामतलब, डरपोक, अस्थिर स्वभाव का, कुशल व्यापारी, छोटी यात्राओं का शौकीन तथा अच्छे पड़ोसवाला होता है। परन्तु वह स्वयं अच्छा पड़ोसी नहीं होता। आयु भी ठीक ही होती है।

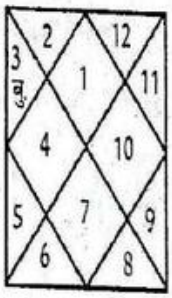

लाल किताब के अनुसार तृतीयस्थ बुध वाला जातक अपने लिए लाभकारी तथा औरों के लिए नुकसानदेय होता है। बुध अशुभ हो तो ताऊ, दादा, चाचा आदि निकट सम्बन्धियों पर भी अशुभ प्रभाव डालता है। ऐसा जातक यदि बोलते समय हकलाता/तुतलाता हो तो बुध का अशुभ प्रभाव काफी हद तक कम हो जाता है (लेखक, कवि, ज्योतिषी, वक्ता आदि बनने के लिए तृतीय भाव तथा बुध की सबलता आवश्यक मानी गई है)।

पुरुष राशि का बुध पूर्ण शिक्षा, सुन्दर लेख व गजब की स्मरण शक्ति प्रदान करता है। नीच राशि का बुध जातक को कायर तथा अस्थिर बुद्धि वाला बनाता है (यदि ऐसे बुध पर शनि की दृष्टि हो तब नहीं)। नीच का बुध यदि मंगल से शुभ

योग बनाए तो जातक भूगर्भशास्त्री होता है, किन्तु प्रवास में अधिक रहता है। जबकि शनि से शुभ योग करता हो तो जातक अंतिम अवस्था में सब कुछ त्यागकर मोक्ष मार्ग का अवलम्बन कर वैरागी हो जाता है। चिकित्सकों, लेखकों व प्रकाशकों को तीसरा बुध विशेष लाभकारी होता है।

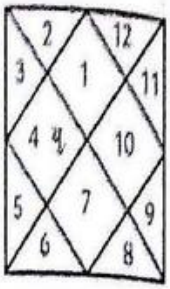

चतुर्थ भाव—चौथे भाव का बुध जातक को विद्वान, भाग्यवादी, वाहनसुखी, दानी, नीतिज्ञ, उदार व लेखक बनाता है। जातक संगीतप्रेमी किन्तु स्थूल शरीर व आलसी होता है। उसका मित्र वर्ग उत्तम होता है तथा वह सब प्रकार के सुख प्राप्त करता है। जातक उच्च पद प्राप्त करता है।

लाल किताब के अनुसार चौथे भाव में बुध 'राजयोग' बनाता है। जातक स्वयं के लिए शुभ किन्तु माता के लिए अशुभ होता है। यदि बुध इस भाव में अकेला हो तो हर प्रकार से जातक व औरों के लिए शुभ होता है। सरकार द्वारा लाभ भी सम्भव हो जाता है। उच्च/स्वराशि का बुध जातक को अन्तर्ज्ञानी, विद्वान, धनी, तीव्र स्मरण शक्ति वाला एवं वाहनसुखी बनाता है। पुरुष राशि का बुध उच्च शिक्षा, राजनीतिज्ञता, लेखन, भाषणकला में निपुणता प्रदान करता है। किन्तु अग्निराशि का बुध जातक को दुष्ट, महाक्रोधी, अभिमानी, कंजूस तथा अहसानफरामोश बनाता है। यदि चौथे बुध के साथ सूर्य पांचवें हो तो धनहानि होती है। परन्तु सूर्य तीसरे हो तो पुत्र लाभ होता है।

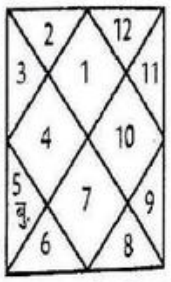

पंचम भाव—बुध पंचमस्थ हो तो जातक सुखी, परिश्रमी, सम्मानित, विद्वान, कवि तथा वाद्ययंत्र प्रेमी हो जाता है। ऐसा जातक सदा प्रसन्न रहता है। उसकी आवाज मासूम बालक के समान होती है। लाल किताब के मत से ऐसे जातक के मुंह से निकले शब्द ब्रह्मवाक्य तथा शुभ होते हैं। यदि पंचमस्थ बुध अशुभ हो तो जातक के पिता पर बुरा असर डाल सकता है, किन्तु जातक की सन्तान पर नहीं।

लाल किताब के अनुसार पांचवां बुध यदि शुभ हो तो जातक को सौभाग्य, सुन्दर व गुणवती पत्नी, आनन्दमय जीवन, प्रसन्नचित्तता, विनोदी स्वभाव तथा सन्तान का पूर्ण सुख प्रदान करता है किन्तु कन्याएं अधिक देता है। ऐसा जातक गुरु और बुजुर्गों का आदर करने वाला होता है। जलतत्त्व राशि में पंचमस्थ बुध पागल/मंदबुद्धि संतान देता है। पृथ्वी तत्त्व राशि का बुध पदार्थ विज्ञान या हस्तरेखा विशेषज्ञ बनाता है। यदि शनि से बुध का शुभ योग हो तो सट्टे, लॉटरी आदि में जातक को लाभ होता है। चन्द्रमा के साथ बुध का शुभ योग हो तो जातक धनाढ्य बनता है, किन्तु वह व्यभिचारी भी हो जाता है।

षष्ठ भाव—छठे भाव में बुध हो तो जातक झगड़ालू, आलसी, रोगी, अभिमानी, निर्बल/स्त्रैण स्वभाव का, कब्ज पीड़ित तथा अल्प पौरुष वाला होता है तथापि जातक के अवैध सम्बन्ध सम्भावित होते हैं। शास्त्रकारों के अनुसार—

वरांधांजनानां निरोधोरिपूर्णं प्रबोधी यतीनांचा रोधर्जनलानाम्।
बुधं सगर्वव्यावहारो निधानां बलादर्प कृत्सभयंच्छत्र् भावे॥

अर्थात् छठा बुध जातक को कलहप्रिय/कलहकारी, अधिक शत्रुओं वाला, संन्यासियों से ज्ञान प्राप्त करने वाला, धन को शुभ कामों में लगाने वाला तथा अपने बूते पर धन संग्रह करने वाला बनाता है। ऐसे जातक का व्यापार अच्छा होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक मनमौजी, अपनों से विरोध करने वाला, कब्ज, संग्रहणी, बवासीर, वातशूल आदि का रोगी, दुर्बल छाती वाला तथा श्वास या क्षय का रोगी होता है। ऐसा जातक लेखक/प्रकाशक या रसायन शास्त्र का ज्ञाता होता है किन्तु स्वतंत्र व्यापार करे तो उसे हानि होती है। माता से उसे लाभ मिले न मिले किन्तु चन्द्रमा की कारक वस्तुओं से उसे लाभ मिलता है। ऐसे जातक को बुद्धि के अधिकतम प्रयोग वाला कारोबार करना चाहिए। दस्तकारी/हाथ का काम उसे अधिक लाभ नहीं देता। मंगल से षष्ठस्थ बुध का अशुभ योग जातक को पागलपन देता है। यदि लग्नेश होकर बुध षष्ठस्थ हो तो जातक अपना शत्रु स्वयं होता है। उसके अपने ही फैसले उसे नुकसान पहुंचाने वाले सिद्ध होते हैं।

सप्तम भाव—जन्मकुंडली में बुध सातवें भाव में हो तो जातक सुन्दर, विद्वान, चतुर व्यापारी, धनी, लेखक, सम्पादक, सुखी, धर्मभीरू, दीर्घायु किन्तु अल्प पौरुष वाला होता है (यदि सप्तमेश की स्थिति सुदृढ़ न हो तो) जातक को शीघ्र स्खलन की शिकायत हो सकती है।

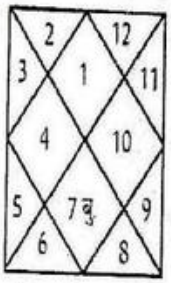

लाल किताब के अनुसार सातवां बुध विवाह में झगड़े, शीघ्र स्खलन किन्तु धनसंचय करने वाली सहयोगिनी पत्नी देता है। यद्यपि पत्नी कर्कश बोलने वाली तथा प्राय: पुरुषोचित आकृति वाली होती है। ऐसा जातक यदि लेखक हो तो जीवन अधिक संकटों में गुजरता है, किन्तु दुनिया के लिए ऐसा आदमी बहुत काम का होता है। स्त्री जातकों में सातवां बुध स्वयं उनके लिए खराब नहीं होता। भले ही बुद्धि तीव्र न हो परन्तु उनकी शान तथा सुख अच्छे रहते हैं। मेरे सुयोग्य आचार्य कौशिकजी के अनुसार स्त्री जातक की कुंडली में सातवां बुध यदि पाप प्रभाव में हो तथा सप्तमेश बली न हो तो तलाक भी करवा सकता है।

अष्टम भाव—बुध यदि जन्मकुंडली में आठवें भाव में हो तो जातक दीर्घायु,

अभिमानी, समाज व सरकार से सम्मान पाने वाला, वक्ता, विरासत के धन को पाने वाला या पैतृक सम्पत्ति से धनी किन्तु मानसिक रूप से दुखी होता है। क्योंकि उसे रोग, परेशानियां, गुप्त नुकसान, धन की बर्बादी आदि झेलते रहना पड़ता है। यदि इसके साथ इस भाव में पुरुष ग्रहों की युति हो या बारहवें भाव में मंगल हो तो बाद में कही गई परेशानियों से काफी हद तक बचाव हो जाता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक अतिथि सेवक, राज्य कृपा व ख्याति प्राप्त करने वाला, राज्य में उच्च पदाधिकारी, गुप्तविद्या/अध्यात्म में दखल रखने वाला होता है। परन्तु साझे में व्यापार करे तो उसके साथ धोखा हो सकता है। उच्च का बुध हो या शुभ प्रभाव में हो तो अकस्मात धन लाभ के संयोग प्राप्त होते हैं। किन्तु पाप प्रभाव का बुध अति सम्भोग के कारण/वीर्यांल्पता व शक्तिहीनता के कारण जातक की मृत्यु भी कर सकता है। स्त्री राशि का बुध हो तो जातक दिमागी खराबी के कारण मरता है (विशेषकर तब जब बुध पर पापदृष्टि भी हो)।

शास्त्रकारों के अनुसार आठवें बुध के जातक छिद्रान्वेषी, कुलघाती, कफ वायु रोगों से पीड़ित भी होते हैं। परन्तु देश-विदेश में विख्यात भी होते हैं।

नवम भाव—नवमस्थ बुध जातक को लेखक, कवि, गायक, ज्योतिषाचार्य, विद्वान, भाग्यवादी, यशस्वी तथा व्यवसाय में रुचि लेने वाला बनाता है। जातक सद्चरित्र होता है। किन्तु संदेही स्वभाव का भी होता है। यश, मान, कीर्ति, धन, स्त्री, पुत्र, विद्वानों का संग उसे मिलता है, परन्तु भाग्य की स्थिति डांवाडोल होती है। जातक कुल रीतियों का पोषक होता है। प्राय: देखा गया है कि कुंडली में चन्द्र, गुरु व केतु की स्थिति शुभ हो तो नवमस्थ बुध पूर्ण शुभ प्रभाव देता है। अन्यथा जातक शक्की, वहमी या मनहूस भी हो सकता है।

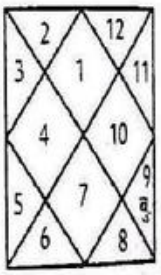

लाल किताब के अनुसार बुध पाप प्रभाव में (राशि/दृष्टि/युति द्वारा) हो तो जातक के पिता के लिए कष्टकारी होता है। पिता की मृत्यु भी सम्भव होती है। भाग्य साथ नहीं देता और जातक ब्राह्मण तथा गुरु व देवता से द्वेष रखता है। वायु तत्त्व राशि का बुध विवाहोपरांत भाग्योदय करता है। नौकरी या व्यवसाय में प्रगति देता है। जल तत्त्व राशि में जातक को सरकारी नौकरी में क्लर्क बनाता है। पृथ्वी तत्त्व राशि में प्राइवेट नौकरी कराता है। अग्नि तत्त्व राशियों में बुध, बैंककर्मी, C.A., शिक्षक या ज्योतिषी बनाता है अथवा सम्पादन, लेखन या प्रकाशन कार्य से जोड़ता है।

दशम भाव—दसवें भाव में बुध हो तो जातक वाकपटु, चतुर, भाग्यवादी,

लोकप्रिय, सम्मानित, पढ़ने का शौकीन, विद्वान, न्यायप्रिय, जमींदार व माता-पिता का आज्ञाकारी बनाता है। ऐसा जातक प्रसन्नचित्त रहता है। पैतृक सम्पत्ति प्राप्त करता है। नौकरी करे तो नम्र स्वभाव का कुशल प्रशासक होता है। निम्न स्तर से संघर्ष करके उच्च पद पर आता है। सत्यवादी या छल-कपट से दूर रहने वाला होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक यदि शराब तथा मांस का सेवन करे तो उसे शनि से सम्बन्धित वस्तुओं (जैसे मकान आदि) के सम्बन्ध में अशुभ फल प्राप्त होते हैं। अग्नितत्त्व राशि में बुध हो तो जातक एकाउन्टेंट/C.A., गणितज्ञ या गणित का अध्यापक या गणक (कैशियर) आदि होता है। पृथ्वी तत्त्व राशियों में जातक सेल्समैन, सेल्स एजेन्ट, कमीशन एजेन्ट, व्यापारी आदि होता है। जलराशि में जातक लेखक, प्रकाशक या पत्रकार होता है।

एकादश भाव—ग्यारहवें भाव में बुध हो तो जातक दीर्घायु, धनाढ्य, दानी, ईमानदार, चरित्रवान, योगी, नेतृत्व क्षमता से युक्त, सुन्दर तथा सन्तानवान होता है। परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढालने में वह सक्षम होता है। प्राय: ऐसा जातक धनी परिवार में ही जन्मता है। यदि बुध अशुभ न हो तो 34 वर्ष की आयु के बाद जातक हर प्रकार से सुखी, धनी व सुविधाएं भोगने वाला बन जाता है। बुध अशुभ हो तो मूर्खतापूर्ण निर्णयों/मूर्खतापूर्ण कार्यों में धन बर्बाद भी कर देता है।

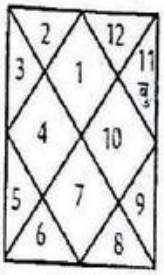

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक चतुर, चालाक, परिस्थितियों को भांप लेने में सक्षम तथा धनी होता है। यदि वह नौकरी करे तो योग्यतानुसार सफलता नहीं मिलती। पृथ्वी राशि का बुध हो तो शिल्पकला, चित्रकारी या स्वतंत्र कार्य (FREELANCING) में अच्छा लाभ मिलता है। वायु तत्त्व राशि का बुध गणितज्ञ व शिक्षक बनाता है। जल तत्त्व राशि में स्वतंत्र व्यापार की प्रवृत्ति देता है। जातक को स्वतंत्र व्यापार में लाभ भी होता है। लेखन/प्रकाशन/सम्पादन कार्यों में भी सफल होने की सम्भावनाएं रहती हैं।

शास्त्रकारों ने ग्यारहवें बुध को प्रशंसनीय माना है—

बिना लाभ भावस्थित भेषजातं न लभेन लावण्यं मातृष्यमसित।
कुत: कन्ययोर्विवाहदानं च देयं कथं भू सुरास्त्यक्त तृष्णा भवन्ति॥

अर्थात् ग्यारहवें भाव में बुध न हो तो धन कहां से आए? सुन्दरता कैसे हो? मनुष्य ऋण रहित कैसे रहे? कन्या के विवाह योग्य धन कहां से आए? ब्राह्मणों

को दान देने के लिए धन कहां से आए? यानी इन सब कार्यों में जातक को ग्यारहवां बुध समर्थ बनाता है (जातक धनाढ्य, सुन्दर, ऋणरहित, अच्छा दहेज देकर धूमधाम से विवाह करने वाला तथा दानी होता है)।

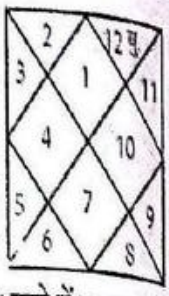

द्वादश भाव—यदि लग्नकुंडली में बुध बारहवें भाव में स्थित हो तो जातक आलसी, मितभाषी किन्तु शास्त्रज्ञ, विद्वान, वेदांती, लेखक तथा दानी होता है। ऐसा जातक प्राय: बाल्यावस्था में कष्ट भोगता है, कई रोगों से पीड़ित रहता है। जीवन के आरम्भिक वर्षों में जीविका के लिए जातक को कड़ी मेहनत करने पर भी योग्यतानुसार प्रतिफल नहीं मिलता। साझे में व्यापार करे तो धोखा होता है। गुप्त शत्रु अधिक होते हैं। तथापि अध्यात्म आदि में विशेष रुचि लेता है।

लाल किताब के अनुसार ग्यारहवें बुध का जातक या तो बहुत नेक, लम्बा और अच्छा जीवन जीता है। या ऐसी बुरी हालत में कि देखने वाले भी रो पड़ें। दरअसल, बुध यदि बारहवें भाव में पुरुष राशि में होता है तो शुभ फल मिलते हैं। किन्तु स्त्री राशि का बुध अशुभ फल देता है। यदि दूसरे भाव में शनि हो या बुध से शनि की युति हो रही हो तो भी बुध के अशुभ प्रभाव कम हो जाते हैं लेकिन जातक मंदबुद्धि का हो सकता है। बुध जब शुभ प्रभाव में हो तो जातक अध्यात्म, दर्शन आदि में विशेष रुचि लेता है तथा धर्म-कर्म में भी बढ़-चढ़कर भाग लेता है। यदि शुक्र की स्थिति तथा सप्तमेश व द्वादशेश की स्थिति सुदृढ़ न हो अथवा बारहवें भाव में बुध के साथ शुक्र की युति हो जाए तो जातक की SEX POWER में कमी हो सकती है। अथवा शीघ्रपतन आदि रोग हो सकते हैं। यदि बारहवें भाव में बुध के साथ शनि हो तो जातक नपुंसकत्व का शिकार हो सकता है अथवा नीच मैथुन में प्रवृत्त हो सकता है। बुध जन्मकुंडली में अकेला बहुत कम होता है। प्राय: सूर्य के साथ होता है। यह वक्री, मार्गी, उदय, अस्त भी बहुत ज्यादा होता है। अत: इसका स्वतंत्र विवेचन कठिन होता है। पाठकों को बुध का फलादेश करते समय स्थितियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

विशेष—लग्नेश के साथ बुध (लग्न को छोड़कर) किसी भी भाव में बैठे—जातक को नपुंसकत्व की ओर ले जाता है।

□□

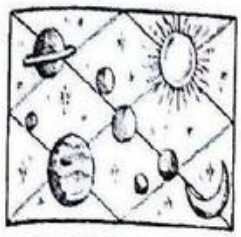

गुरु का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—प्रथम भाव या लग्न में गुरु हो तो जातक सर्वगुण सम्पन्न, सुन्दर, निरोग, दीर्घायु, कर्मठ, विद्वान, जनसेवक, वचनों को पूर्ण करने वाला, प्रतिष्ठित, स्पष्टवक्ता, अपने आत्मसम्मान के प्रति जागरूक, आकर्षक, सुखी, विनम्र, धनी, गुणी, धार्मिक, सरकार द्वारा सम्मानित तथा अधिक सन्तानवाला (यदि सिंह लग्न न हो तो) होता है। ऐसा जातक या तो बिल्कुल फकीरी/अलमस्त स्वभाव का होता है या पूरी तरह नवाब। विशेषकर तब जब गुरु अशुभ प्रभाव में हो तो जातक निर्धन होते हुए भी श्रेष्ठ फकीर होता है। यदि बुध भी सबल स्थिति में हो तो जातक कई प्रकार की विद्याओं का जानकार होता है।

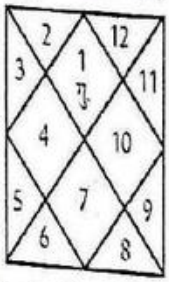

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक का भाग्य उसके अपने दिमाग तथा सरकारी पदों पर बैठे व्यक्तियों की मित्रता से बढ़ता है। मकान, जायदाद तथा समर्थ दृष्टि का सुख उसको मिलता है। परन्तु यदि ऐसा जातक दूसरों से मांगे या उनके आगे हाथ फैलाए तो उसके भाग्य की हानि होती है।

गुरु यदि स्वराशि में लग्नस्थ हो तो जातक व्याकरण शास्त्र का ज्ञाता, बहुत से पुत्रों वाला, सुखी, सौभाग्यशाली, ज्ञानी, दीर्घायु व समस्त सुविधाएं भोगने वाला होता है। जलराशि का गुरु घुड़दौड़ का शौकीन तथा उदार बनाता है। ऐसा जातक धन को तुच्छ/तृणवत समझता है। उच्च का गुरु (कर्क राशि) लग्न में हो तो जातक को सर्व शुभफलों को भोगते हुए भी संकटों का सामना बार-बार करना पड़ता है, जिसके कारण उसके श्रेष्ठ भाग्य पर भी प्रश्नचिह्न लगता अनुभव होता है। (कुछ विद्वानों के अनुसार उच्च का लग्नस्थ गुरु हर छठे तथा बारहवें वर्ष में विपत्तिदायक होता है।) वैसे कर्क, वृश्चिक व मीन (जलराशि) का गुरु डॉक्टरों को बहुत शुभ रहता है। मिथुन, तुला, वृश्चिक तथा कुम्भ राशियों में गुरु हो तो जातक निश्चित, व सबसे मित्रता रखने वाला होता है।

शास्त्रकारों के अनुसार लग्नस्थ गुरु जातक को मरने के बाद उत्तम गति प्राप्त करवाता है। जैसा कि कहा है—

गुरुत्वं गुणैलग्नगे देवपूज्ये सुवेषी सुखी दिव्य देहाल्प वीर्य:।
गतिर्मोक्षिनी पारलौकी विचिन्त्य वसूनी व्ययं सबलेन व्रजन्ति॥

अर्थात् लग्नस्थ गुरु जातक को अच्छे वस्त्रों तथा शोभायुक्त, स्वच्छ शारीरिक कान्ति वाला, सुखी, अल्पबली, पण्डित, चतुर तथा समाज में प्रशंसा व मान पाने वाला बनाता है। ऐसा जातक शरीर त्यागकर अन्त में उत्तम गति प्राप्त करता है तथा धनादि सुखों का जीवन में भोग करता है।

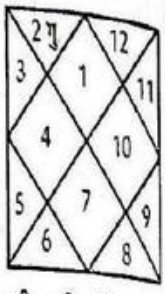

द्वितीय भाव—गुरु यदि जन्मकुंडली के दूसरे भाव में हो तो जातक को सुन्दर देह, ऊंची किन्तु गम्भीर मधुर आवाज, संतान, लोकप्रियता, दीर्घायु तथा सौभाग्य प्रदान करता है। ऐसा जातक शुभकर्मा, शत्रुजित तथा अचल सम्पत्ति से विशेषरूप से सम्पन्न होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक श्रेष्ठ विद्या का स्वामी, पूरी दुनिया का धर्मगुरु, धर्मोपदेशक, गृहस्थ होते हुए भी ज्ञानी व गुरु तथा पिता के धन की वृद्धि करनेवाला होता है। ऐसे जातक के पास खूब धन आता है और वह खूब धन लुटाता भी है। ऐसे जातक को मिट्टी, कृषि तथा स्त्रियों के प्रयोग में आने वाली वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है। परन्तु सोने का व्यापार नुकसानदायक होता है।

गुरु यदि शुभ प्रभाव में हो तो जातक बुद्धिमान, कुशलवक्ता होता है। राज्य सेवा तथा धार्मिक स्थानों से सम्बन्धित कार्यों में अधिक सफल होता है। जातक गुरु से प्रभावित हो तो यूं भी प्राय: शिक्षक, पुजारी, धर्मोपदेशक, प्रधानाध्यापक, मठाधीश या ज्योतिषी होता है। स्वराशि या उच्च का गुरु जातक को वकालत के पेशे में विशेष धन प्राप्त कराता है।

अग्नितत्त्व राशियों में हो तो परिवार में बड़ों से बैर कराता है। मंगल के साथ अशुभ योग करता है तथा मिथुन, तुला या कुम्भ राशि में हो तो मुख के रोग देता है। स्त्री राशियों में सन्तानाभाव देता है। (गुरु सिंह राशि का हो तो प्राय: सन्तान कष्ट से मिलती है।) गुरु अशुभ हो तो जातक को मानहानि, परेशानियां, धनहानि व सरकार से कष्ट होता है। पाप प्रभाव अधिक हो तो शिक्षा पूर्ण नहीं होती। जातक आचारहीन तथा पुत्रहीन होता है। वह परस्त्रीगामी तथा मदिरासेवी भी होता है।

गुरु यदि शुक्र की राशियों (वृष, तुला) में हो तो प्राय: पुरुष जातकों को परस्त्रीगामी तथा स्त्री जातकों को परपुरुषगामी बनाता है (विशेषकर तब जब चन्द्रमा भी पाप प्रभाव में हो)।

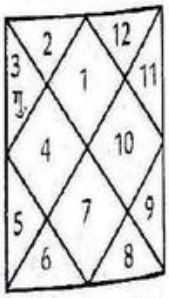

तृतीय भाव—गुरु यदि लग्नकुंडली के तीसरे भाव में हो तो जातक विचार कर बोलने वाला, वाणी पर नियंत्रण व संयम रखने वाला, शास्त्रज्ञ, ज्ञानी, लेखक, ज्योतिषी अथवा योगी होता है। वह प्रसिद्ध, लोकप्रिय, सम्मानित एवं यात्राओं का विशेष शौकीन होता है। ऐसे जातक के भाई अधिक होते

हैं अथवा केवल भाई ही होते हैं। वह प्रबल कामुक तथा जन्मस्थान से दूर रहने वाला होता है। तीसरे गुरु का जातक मितव्ययी होता है। वह अपने सुख आराम पर धन व्यय नहीं करता किन्तु परिवार/आश्रितों के लिए व्यय करता है। ऐसे जातक का जोड़ा गया धन बाद में उसके पत्नी या बच्चे भोगते हैं। वह स्वयं अपने जीवन में उसे नहीं भोगता। यदि बृहस्पति इस भाव में अशुभ हो तो जातक कायर, मनहूस या दुर्भाग्यशाली (मंदभागी) हो सकता है। ऐसा जातक बीच के सम्बन्ध नहीं रखता। या तो बहुत घनिष्ठ होता है या एकदम विरुद्ध। यदि अशुभ गुरु अशुभ भावों का स्वामी भी हो तो जातक दुष्ट, कंजूस, अहसानफरामोश तथा खूब मेहनत करने पर भी धन संग्रह न कर पाने वाला होता है। शुभ गुरु हो तो जातक ज्योतिषविद्, योगी, अध्यात्म विद्या का जानकार, अतिज्ञानवान, विद्वान, तीव्र बुद्धिवाला, सुयोग्य, धनवान एवं अच्छे स्वास्थ्य व समृद्धि वाला होता है। सरकार से लाभ/नौकरी उसे प्राप्त होती है तथा आदर व यश भी मिलता है।

अग्निराशियों में भी गुरु लाभप्रद रहता है। खासकर मेष व सिंह राशि में तो जातक कम शिक्षित/अशिक्षित होते हुए भी समाज में पूर्ण शिक्षित समझा जाता है। जलराशियों में गुरु हो तो समुद्री यात्राओं से लाभ कराता है। वायुराशियों में मानसिक स्तर अच्छा तथा ज्ञानोपार्जन की लालसा देता है। पृथ्वीराशियों का गुरु जुआ, सट्टा, रेस या व्यापार से लाभ दिलाता है। स्त्री राशि में अशुभ फल प्राय: होते हैं। नौकरी में अभ्युदय नहीं होता, स्वतंत्र व्यवसाय की इच्छा रहती है। ऐसा जातक शिक्षित होता है, पर गुमनाम रहता है। भाइयों से बंटवारे पर कलह होती है। पुरुष राशियों में बड़ी बहन नहीं होती (स्त्री राशियों में बड़ा भाई नहीं होता)। तीसरे घर का गुरु क्योंकि भाग्य स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है। अत: भाग्य में आकस्मिक परिवर्तन करता है। (शुभ प्रभाव से एकाएक धनी तथा अशुभ प्रभाव से एकाएक निर्धन बना सकता है तथा सातवें भाव पर पूर्ण दृष्टि रहने के कारण कैसी भी स्थिति हो, प्राय: पत्नी से जातक को अलग नहीं होने देता। ग्यारहवें भाव पर पूर्ण दृष्टि होने से लाभ व आय में वृद्धि कारक होता है।) यह लाल किताब का मत है।

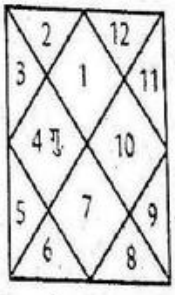

चतुर्थ भाव—चौथे भाव में गुरु हो तो जातक शौकीनमिजाज, आरामतलब, सुन्दर शरीरवाला, उच्च शिक्षा पाने वाला, कम संतान वाला, सरकार से सम्मान प्राप्त करने वाला, माता से विशेष प्यार करने वाला, व्यवहारकुशल, ज्योतिष में रुचि लेने वाला तथा परिश्रमी होता है। ऐसा व्यक्ति शाही स्वभाव का व अपने इलाके में प्रसिद्ध होता है। लालच से दूर, चरित्र उत्तम तथा श्रेष्ठ पत्नी वाला होता है। यदि गुरु अशुभ हो तो जातक इश्कबाजी में पड़ जाता है। परन्तु इससे न सिर्फ जातक का बल्कि उसके परिवार का भी नुकसान होता है।

लाल किताब के अनुसार चौथा गुरु जातक को बुद्धिमान, मेधावी तथा साफ दिल बनाता है। यदि अग्निराशि में हो तो इच्छा होते हुए भी जातक स्थायी सम्पत्ति नहीं जुटा पाता। पृथ्वी राशि में गुरु संतान व स्थायी संपत्ति दोनों प्रदान करता है। वायु राशि में जातक प्रपंची, ढोंगी व कपटी हो जाता है। जलराशि में जातक के दत्तक पुत्र बन जाने की सम्भावना रहती है। ऐसा न हो तो स्थिति माता-पिता के लिए अप्रियकर होती है।

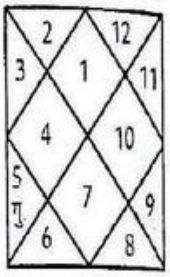

पंचम भाव—पंचमस्थ गुरु यदि लग्नकुंडली में हो तो जातक लोकप्रिय, ज्योतिषी, अधिक संतान वाला, सद्मार्गी, शास्त्रज्ञ, कुटुम्ब/परिवार का मुखिया, सम्मानित, मानवता के गुणों से युक्त होता है। ऐसे जातक को सट्टे में लाभ होता है। गुरु अशुभ हो तो पूर्ण ज्ञानी होते हुए भी जातक महाक्रोधी होकर अपना नुकसान करने वाला होता है। ऐसे जातक को धर्म के नाम पर कभी चंदा आदि न तो मांगना चाहिए, न ही किसी से लेना चाहिए।

लाल किताब के अनुसार पांचवां गुरु जातक को सर्वहितैषी, शास्त्रज्ञ, श्रेष्ठ पुत्र व उत्तम मित्रों से युक्त, वेदों में रुचि रखने वाला तथा पत्नी से प्रेम करने वाला बनाता है। ऐसे जातक की पत्नी रूपवती होती है। ऐसा जातक न तो स्वयं गलत काम करता है, न किसी को करने देता है। उसको तंत्रमंत्र की सिद्धि सम्भावित होती है। गुरु के साथ यदि चन्द्र व सूर्य का शुभ योग हो या दोनों गुरु से नौवें, पांचवें स्थान पर हों तो आकस्मिक धन लाभ/जुए, सट्टे, लॉटरी में लाभ का प्रबल योग बन जाता है। पांचवें भाव का गुरु जातक को अपना कमिटमेंट पूरा करने वाला तथा किसी को धोखे में न रखने वाला बनाता है।

वायु राशि में गुरु हो तो पूर्ण शिक्षा प्रदान कर जातक को शिक्षक बनाता व शिक्षण में ख्याति दिलाता है, परन्तु सन्तान कम होती है। पृथ्वी राशि (तथा धनु राशि में भी) में प्राय: जातक की शिक्षा अधूरी रह जाती है। ऐसा जातक व्यापार करता है, कन्याएं अधिक व पुत्र कम होते हैं। सिंह राशि में गुरु पंचमस्थ हो तो संतान होती नहीं या अत्यंत कठिनाई से विलम्ब में होती है। जलराशि या स्त्रीराशि का गुरु धन व पुत्र दोनों के लिए शुभ नहीं होता, विशेषकर जलतत्त्व राशि में तो संतान का अभाव ही रहता है। लेकिन यश प्राप्त हो जाता है।

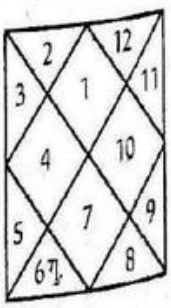

षष्ठ भाव—छठे भाव का गुरु जातक को मधुरभाषी, प्रसिद्ध, विद्वान, अल्पसंतति वाला तथा अल्प शत्रुवाला बनाता है। ऐसा जातक प्राय: दुर्बल, क्षमाशील होता है। यदि बीमार पड़े तो जल्दी ठीक हो जाता है। स्वभाव का अच्छा होता है। गुरु इस भाव में शुभ हो तो जातक को बिना मांगे सब-कुछ

मिलता है। अशुभ हो तो धन दौलत की कमी रहती है तथा जातक मुफ्त का माल लेने की नियत वाला हो जाता है। ऐसे जातक को बुजुर्गों के नाम पर दान करना शुभदायक होता है।

लाल किताब के अनुसार गुरु यहां अशुभ प्रभाव में मंदबुद्धि, यकृत रोगी, (मधुमेह का रोग भी सम्भव) मीठे का शौकीन तथा प्राय: ऋणी बनाता है। अक्सर मरते समय तक वह ऋणी बना रहता है। मामा पक्ष के लिए भी प्रभाव अशुभ रहता है। मेष या कर्क राशि में हो तो पैतृक सम्पत्ति जातक को नहीं मिलती। कन्या राशि में हो तो उन्नति में बाधाएं आती हैं। पुरुष राशि में हो तो सदाचार हीनता उत्पन्न होती है। जुए, सट्टे, वैश्यागमन में धन का अपव्यय होता है तथा दाम्पत्य जीवन नरक तुल्य हो जाता है। छठा गुरु प्राय: मुकदमेबाजी की नौबत नहीं आने देता। मुकदमा चले भी तो जातक समझौते की ओर प्रवृत्त होता है।

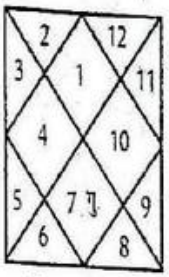

सप्तम भाव—गुरु सप्तमस्थ हो तो जातक भाग्यवान, सुखी, विवाहित जीवन वाला, विनम्र, वक्ता, विद्वान, किन्तु सन्तोषी होता है। ऐसा जातक अल्प काम शक्ति वाला होता है। (लाल किताब ऐसे जातक को 'पूर्व जन्म का साधु' मानती है।) वह कई प्रकार के कार्यों का जानकार तथा ज्योतिष विद्या में रुचि रखने वाला होता है, लेकिन अपने पुत्र से प्राय: दुखी रहता है। यदि ऐसे जातक का सूर्य लग्न में हो तो जातक में धार्मिक वृत्ति बढ़ जाती है और वह SEX में अधिक रुचि नहीं लेता। ऐसे जातक को घर में मंदिर, मूर्तियां, घंटे/घड़ियाल आदि नहीं रखने चाहिए। ऐसा लाल किताब का मत है।

अग्नि राशियों या मिथुन राशि का गुरु सप्तमस्थ हो तो शिक्षा के लिए शुभ होता है। जातक उच्च शिक्षा प्राप्त करता है। प्राय: न्यायाधीश, वकील या शिक्षा विभाग में अच्छे पद पर होता है। जलराशियों व कन्या राशि में सांसारिक सुखों में न्यूनता देता है। पति-पत्नी के सम्बन्ध मधुर नहीं रहते। गुरु अशुभ हो तो तलाक की नौबत आ सकती है या पत्नी किसी अन्य के साथ भाग जाती है। शनि से प्रभावित गुरु जातक में विवाहेच्छा उत्पन्न ही नहीं होने देता पर राहू साथ हो तो यह 'विवाह प्रतिबन्धक योग' समाप्त हो जाता है। ऐसे में विवाह तो होता है, तलाक भी नहीं होता परन्तु पति-पत्नी शीघ्र ही अलग-अलग (एक ही छत के नीचे भी सम्भव है) रहने लगते हैं। सातवें भाव में गुरु हो तो जातक अपने कमिटमेंट को पूरा करने वाला तथा पत्नी आदि को धोखे में न रखने वाला होता है।

लाल किताब के अनुसार गुरु यदि तुला राशि में हो या नीच का (मकर राशि में) हो तो 'द्विभार्या योग' बनाता है। पुरुष राशि में गुरु सप्तमस्थ हो तो जातक पत्नी को मात्र भोग की वस्तु मानता है। स्त्री राशि में व्यापार के प्रति झुकाव रहता है।

बीवी-बच्चों से प्रेम रहता है। बीवी भी पतिपरायणा, सेवा करने वाली तथा मंत्री की भांति परामर्श देने वाली होती है। किन्तु जातक मध्यायु में ही प्राय: विधुर हो जाता है अथवा विधुर का जीवन जीने को विवश हो जाता है।

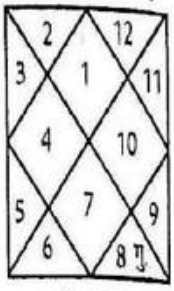

अष्टम भाव—आठवें भाव में गुरु हो तो जातक को दीर्घायु, मधुरभाषी, लेखक, किन्तु गुप्तांग रोगी बनाता है। जातक का धन नाश होता है अथवा अल्पधन ही रहता है। प्राय: ससुराल पक्ष से अच्छे सम्बन्ध रहते हैं। यदि गुरु अशुभ प्रभाव में हो तो आय ठीक होते हुए भी जातक कर्ज में डूबा रहता है। उसकी स्थिति लाल किताब के शब्दों में 'श्मशान के साधु' जैसी हो जाती है (विशेषकर तब जब कुंडली में मंगल भी अशुभ हो)। किन्तु शुभ प्रभाव हो तो जातक का भाग्य देव की शक्ति तथा स्वयं की आत्मिक शक्ति से बढ़ता है। धनवान न भी हो तो उसे दुनिया के सब सुख-साधन भोगने को मिलते हैं। ऐसे जातक को ईश्वरीय सहायता प्राप्त होती रहती है। ऐसा जातक शरीर पर सोना धारण करे तो शुभता बढ़ती है।

लाल किताब के अनुसार गुरु अष्टमस्थ हो तो पिता-पुत्र साथ नहीं रह पाते। गुरु बलवान हो तो विवाह से लाभ तथा विवाहोपरांत भाग्योदय होता है। यदि गुरु अष्टमेश भी हो या शनि से शुभयोग बनाता हो तो जातक को अचल सम्पत्ति वसीयत में मिलती है। दीर्घायु प्राप्त होती है। ऐसा जातक शांत अवस्था में मृत्यु पाता है (बेहोशी/कॉमा/नींद में) मिथुन राशि में गुरु हो तो जातक को विभिन्न रोग (कर्णरोग विशेष) देता है। ऐसे जातक की मृत्यु वाहन से गिरकर सम्भावित होती है, परन्तु किसी विधवा के मरने पर उसकी सम्पत्ति जातक को मिलती है। वृश्चिक या कुम्भ राशि का गुरु ससुराल से लाभ नहीं होने देता। ऐसे जातक की स्थिति विवाह के बाद और भी बिगड़ती है। पैतृक सम्पत्ति प्राय: नहीं मिलती। यदि मिलती है तो शीघ्र नष्ट हो जाती है।

आठवां गुरु यदि पाप प्रभाव में हो तो जातक एकदम दरिद्र जीवन जीता है। सम्भव है कि जातक का वंशक्षय (कोई नाम लेवा न बचना) भी हो जाए।

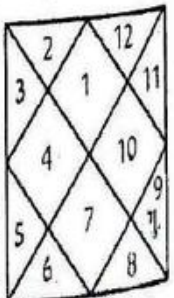

नवम भाव—नौवें भाव में गुरु हो तो जातक प्रसिद्ध, योगी, संन्यास की ओर जाने वाला, वेदान्ती, धर्मभीरू, शास्त्रज्ञ, प्रतिभावान, विद्वान, ज्ञानी, अध्यात्म आदि गुप्त विद्याओं में रुचि रखने वाला, कुशाग्र बुद्धि, प्रखर मेधा, भाग्यवान तथा प्राय: अधिक सन्तान वाला होता है। ऐसा जातक सरकार से सम्मानित होता है तथा अपने कमिटमेंट को पूरा करने वाला एवं न्यायप्रिय होता है। वह पत्नी व अन्य जनों को धोखे में नहीं रखता, प्रबल सिद्धांतवादी, कुलीन होता

है। ऐसे जातक की जैसे-जैसे आयु बढ़ती है, वैसे-वैसे उसका ज्ञान भी बढ़ता है। फिर भी ज्ञान प्राप्ति के लिए वह सतत् प्रयासरत रहता है। धन-दौलत, आय तथा माता-पिता का सुख पूर्ण होता है (यदि कोई अन्य अशुभ योग न बनता हो तो)। किन्तु गुरु इस भाव में अशुभ स्थिति में हो तो जातक निर्धन, मंदभागी तथा नास्तिक/कर्मकांड विरोधी हो सकता है। किन्तु शुभ स्थिति में नवम भाव का गुरु सर्वश्रेष्ठ होता है।

लाल किताब में नौवें गुरु को विशेष शुभ माना है। स्वराशि या उच्च राशि का गुरु राज्य की ओर से विशेष लाभ दिलाता है। ऐसा जातक राज्याधिकारी या सत्ता सम्पन्न मंत्रिपद प्राप्त करता है। ऐसा गुरु प्रकार से 'राजयोग' बनाता है। ऐसा जातक धर्मात्मा, शांत, विनम्र, सदाचारी, उच्च विचार वाला होता है तथा प्रभु की कृपा उस पर सदा बनी रहती है। वह तंत्रमंत्र आदि विद्याओं में सिद्धि प्राप्त कर सकता है। यदि अग्नितत्त्व राशि में गुरु हो जातक को उच्च शिक्षा तथा शिक्षा विभाग में उच्च पद प्राप्त होता है। पृथ्वी तत्त्व राशि में विज्ञान की उच्च शिक्षा प्राप्त होती है पर जातक स्वार्थी हो जाता है। वायु तत्त्व राशि में गुरु हो तो लेखन, मुद्रण, प्रकाशन से लाभ तथा जलतत्त्व में हो तो कानूनविद्, न्यायाधीश, वकील आदि बनना सम्भव होता है। क्योंकि तब जातक अत्यधिक न्यायप्रिय एवं प्रबल तर्कक्षमता वाला हो जाता है। छोटे भाई-बहनों के लिए नौवां गुरु अशुभ होता है। वे या तो होते नहीं या उनसे मनोमालिन्य रहता है, साथ रहने पर प्रगति नहीं होती। सन्तान की ओर से भी चिन्ता रहती है।

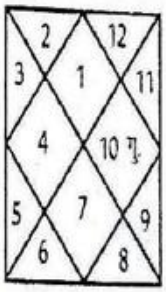

दशम भाव—दसवें भाव का गुरु जातक को शुभ कर्म करने वाला तथा धर्मात्मा बनाता है। जातक प्रसिद्ध व सम्मानित होता है। धनाढ्य, सत्यवादी तथा न्यायप्रिय भी होता है। ऐसा जातक सफल ज्योतिषी हो सकता है या अति उच्च पद पर आसीन होता है (सर्वोच्च न्यायाधीश/मंत्री/प्रधानमंत्री/राष्ट्रपति आदि)। ऐसे जातक को प्राय: अपने पिता का सहयोग नहीं मिलता, यद्यपि यह भी एक प्रकार का 'राजयोग' होता है। बृहस्पति यहां अशुभ स्थिति में हो तो जातक को चालाकी भरे कार्य करने से लाभ होता है। धर्म-कर्म में विश्वास या नेकी के काम करने से वह दरिद्र व दुखी बनता है—ऐसा लाल किताब का मत है। परन्तु शुभ हो या अशुभ (अशुभ में धनाभाव होता है)—जातक बुद्धिमान अवश्य होता है।

लाल किताब के अनुसार दसवां गुरु जातक को धर्मात्मा, शुभकर्मा, पूजनीय व अति सम्मानित बनाता है। शुभ प्रभाव का बली गुरु इस भाव में हो तो जातक के भाग्य की काफी वृद्धि होती है। बड़ा अधिकार व बड़ा पद प्राप्त होता है, तीर्थ यात्रा के अवसर बार-बार मिलते हैं। जातक माता-पिता (माता का विशेष)का भक्त

होता है। किन्तु पुत्रों से सुख प्राप्त नहीं होता। यदि दशमस्थ गुरु पंचमेश होकर बैठा हो तब पुत्र वृद्धि, दीर्घायु पुत्र तथा जातक को स्वयं भी दीर्घायु प्राप्त होती है और जातक को शिक्षा उसके कार्य क्षेत्र में परम सहयोगिनी सिद्ध होती है। पुरुष राशि का गुरु अल्प संतति देता है। स्त्री राशि का गुरु संतानाधिक्य देता है।

यदि दशमस्थ 'गुरु' केन्द्राधिपति दोष से ग्रस्त हो (उसकी दोनों राशियां केन्द्र में ही पड़ती हों। यानी वह दोनों केन्द्रों का अधिपति हो ऐसा केवल मिथुन या कन्या लग्न होने पर ही होता है) तो गुरु की दशा/अन्तर्दशा में जातक को लम्बे चलने वाले रोग होते हैं। गुरु यदि नीच राशि में हो तो भी धन का लाभ तो कराता ही है। किन्तु शुक्र (वृष व तुला) या शनि (मकर व कुम्भ) का लग्न हो तो दसवां गुरु उत्तम फल नहीं दे पाता।

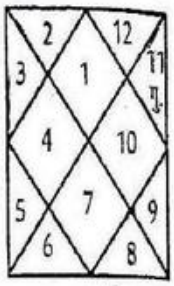

एकादश भाव—यदि लग्न कुंडली में गुरु ग्यारहवें भाव में हो तो जातक सुन्दर, स्वस्थ, धनी, सन्तुष्ट, सफल व्यापारी, विद्वान, दानी व सम्मानित होता है। किन्तु उसके सन्तान कम होती हैं। यदि गुरु इस भाव में सिंह राशि में हो तो पुत्र सुख जातक को नहीं मिलता। या तो पुत्र होता नहीं, होता है तो जीवित नहीं रहता (तुला लग्न हो तो गुरु वैसे ही पापी व अकारक हो जाता है)। जातक को संतान, शिक्षा व सम्पत्ति तीनों एक साथ नहीं मिलते, कोई एक प्राप्त होता है तो दूसरे का अभाव हो जाता है।

विशेष—वैसे ग्यारहवां घर क्योंकि लाभ का होता है, अत: इस भाव में समस्त ग्रह लाभकारी ही माने जाते हैं। यह एक सामान्य नियम है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक स्वयं को अकेला भी महसूस करता है। यदि संयुक्त परिवार में प्रेमपूर्वक रहा जाए तो गुरु का प्रभाव शुभ रहता है अन्यथा अशुभ हो जाता है। इस भाव का गुरु अशुभ हो तो जातक की बहन, बुआ या बेटी दु:खी ही रहती है (यह अशुभ गुरु का प्रधान लक्षण लाल किताब ने माना है)। उसे कफन भी नसीब नहीं होता। यदि गुरु इस भाव में अत्यधिक अशुभ हो तब।

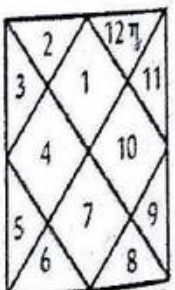

द्वादश भाव—गुरु यदि बारहवें भाव में हो तो जातक उदार व दूसरों की सहायता करने वाला होते हुए भी लालची नहीं होता। वह सुखी किन्तु आलसी होता है। प्राय: वह अपना बुरा करने वाले का भी भला सोचता है। क्षमा द्वारा शत्रुओं को जीतता है। यदि बृहस्पति शुभ हो तो जातक धन को तिनके की तरह समझने वाला, श्रेष्ठ ज्ञानी, संसार से वैराग्य रखने वाला या योगी होता है। साधुओं की सेवा करने वाला होता है। गुरु पीड़ित या अशुभ हो तो जातक विवेकशून्य, आलसी, परजीवी तथा लालची होता है। विशेषकर तब जब गुरु नीच का हो, वृश्चिक या कन्या राशि का हो तो अशुभ फल बढ़ जाते हैं। केन्द्राधिपति

दोष या युतिदोष में हो तो जातक को पीड़ा देता है।

लाल किताब के अनुसार बारहवें गुरु वाला जातक शत्रुओं से घिरा रहकर भी अपराजित रहता है। जातक की अध्यात्म विद्या में विशेष रुचि होती है। बुद्धि, बल, चतुराई तथा विनम्रता के बल पर शत्रु से भी लाभ प्राप्त करता है। धर्म गुरुओं, वेदपाठियों तथा लोकोपकारों के लिए बारहवां गुरु शुभ रहता है।

शास्त्रकारों ने बारहवें गुरु को अच्छा नहीं माना है। उनके अनुसार ऐसे जातक को अपयश तथा धन हानि होती है। प्राय: वह ठग बुद्धिवाला होता है और भाग्य उसका साथ नहीं देता। जैसा कि कहा है—

यश: कीदृशं सद्व्यय साभिमाने मति: कीदृशी वचं नायेत्परेषाम्।
विधि: कीदृशोर्यस्यत्राशो हियेन त्रयस्तेनवे पुण्यंजेयस्य जीव:॥

अर्थात् गुरु बारहवें भाव में हो तो धनादि अच्छी प्रकार व्यय करने पर यश कैसे हो? (अर्थात् अपयश प्राप्त होता है भली प्रकार धन व्यय करने पर भी)। उसकी बुद्धि औरों को ठगने वाली तथा ऐसा काम करने वाली हो जिससे व्यर्थ धन की हानि हो जाए। इस लोक व परलोक में कहीं काम न आए। यश, मति और विधि तीनों ही उसके विरुद्ध रहते हैं।

विशेष—गुरु क्योंकि बुद्धि व ज्ञान के साथ भाग्य व धर्म का भी कारक है। जबकि बारहवां भाव व्यय/हानि का घर है। अत: गुरु का बारहवें घर में होना उपयुक्त मामलों में कमी दर्शाता है। किन्तु कालपुरुष के हिसाब से बारहवें घर में मीन राशि पड़ती है। मीन राशि का स्वामी गुरु होता है। स्वामी अपने भाव में हो तो भाव का बल बढ़ाता है। दूसरे गुरु जहां बैठता है, वहां के प्रभाव को कम करता है। जहां देखता है, वहां के प्रभाव बढ़ाता है। बारहवां गुरु 4, 6, 8 भावों को पूर्ण दृष्टि से देखता है। अत: सुख, शत्रु एवं आयु/गुप्त रहस्यों के सम्बन्ध में जातक को लाभान्वित कराता है। इस विवेचन के आधार पर तथा विद्वानों के प्रैक्टिकल अनुभव के आधार पर शास्त्रकार का उपरोक्त मत सत्य तो सिद्ध होता है। परन्तु गुरु के अशुभ, दूषित या पाप प्रभाव में होने पर ही। अन्यथा फलों में विपरीतता आती है। गुरु शुभ स्थिति में हो तो ऊपर कहे प्रभाव जातक में देखने में नहीं आते। इसलिए पाठक शास्त्र के मत को पढ़कर भ्रमित न हों।

अतिविशेष—बारहवें भाव में गुरु हो तो जातक कामशीतल या SEX में कम रुचि लेने वाला हो सकता है। अन्यथा कम से कम उसके शयन कक्ष में देवालय अवश्य रहता है या शयनकक्ष में भगवान के चित्रादि अवश्य टंगे रहते हैं, क्योंकि गुरु महात्मा है। शुक्र विरोधी है (शुक्र काम/SEX का कारक है) तथा बारहवां घर शयन सुख/प्राण सम्बन्धों का भी कारक है। ऐसा भी प्राय: प्रैक्टिकल अनुभव में आया है।

□□

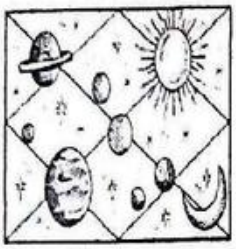

शुक्र का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—शुक्र यदि लग्नकुंडली के प्रथम भाव/लग्न में बैठा हो तो जातक सुदर्शन, सुदेही, सुखी, दीर्घायु, आकर्षक, प्रसिद्ध, सम्मानित, शिष्ट/सुशील, मधुरभाषी, कामुक तथा विपरीत लिंगियों में विशेष रुचि रखने वाला होता है। ऐसा जातक प्राय: उच्च सरकारी पद पर जाता है एवं जन्मस्थान से दूर रहने का भी इच्छुक होता है। वह रूपवान, विलासी, श्रृंगार व सौंदर्य/फैशन में रुचि रखने वाला होता है। गायन, वादन या चित्रकला का शौक रखने वाला तथा स्त्रियों को वश में करने की कला का भी ज्ञाता होता है। ऐसा जातक बिना भली प्रकार से सजे-संवरे घर से बाहर नहीं निकलता।

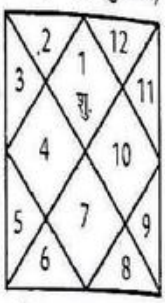

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक प्रेम में धर्म को न मानने वाला होता है। उसे सरकार की ओर से कोई झंझट नहीं होते। वह सुन्दर, सुरुचि सम्पन्न तथा कामप्रिय होता है और धर्महीन आचरण वाला हो सकता है। ऐसा जातक 'मूडी' होता है तथा मनमौजी व इकतरफा तबियत वाला होता है। वह किसी से या तो एकदम घनिष्ठ होता है या एकदम विरुद्ध। बीच के सम्बन्ध वह नहीं रखता। ऐसा जातक युवावस्था में इश्कबाजी में पड़ता है। वह स्वयं अपने लिए व अपने सम्बन्धियों के लिए खराब होता है।

यदि मेष, सिंह या धनु लग्न का जातक हो तो प्रथमस्थ शुक्र के कारण विवाह में विलम्ब होता है किन्तु पत्नी अच्छी मिलती है और दाम्पत्य सुखपूर्ण रहता है (धनु राशि का शुक्र विशेषकर विवाह में विलम्ब कराता है। ऐसे जातक कभी-कभी प्रौढ़ावस्था में विवाह करते भी देखे गए हैं)। वृष राशि का शुक्र हो तो पत्नी उत्तम मिलती है, किन्तु जातक रसिया होता है। कन्या राशि का शुक्र हो तो जातक अपनी ही पत्नी से संतुष्ट रहने वाला होता है। मकर राशि में शुक्र हो तो जातक एक नम्बर का नखरेबाज होता है। ऐसा जातक बहुत-सी लड़कियों को नापसंद करके अन्त में सामान्य रंग-रूप की लड़की से ही विवाह करता है। तुला, कुम्भ एवं मिथुन राशि का शुक्र जातक को शौकीन मिजाज और पथभ्रष्ट बनाता है। मीन राशि का शुक्र हो तो जातक अस्थिर विचारों वाला होता है। कर्क या वृश्चिक राशि में शुक्र अच्छा पत्नी सुख देता है, किन्तु ऐसा जातक बच्चों के प्रति बहुत मोह

रखने वाला होता है। शास्त्रकारों के अनुसार—

सर्धांगचीनमगं समीचीन संग समीचीन बहुङ्गना भोगयुक्त:।
समीचीन कर्मा समीनशर्मा समीचीन शुक्रो सदा लग्नवर्ती॥

अर्थात् यदि लग्न में शुक्र हो तथा षड्वल युक्त हो तो जातक का प्रत्येक अंग सुन्दर होता है। वह सत्संगी, सुमुख, सुदेह तथा सुन्दरियों का भोग करने वाला होता है। यज्ञ-दानादि शुभ कर्म भी करता है। सुख भी अच्छा भोगता है। विषयभोग भी उत्तम प्राप्त होते हैं। विख्यात शास्त्राभ्यासी होता है। प्रिय वाणी बोलता है। समस्त कलाओं का ज्ञाता व नम्र होता है।

स्त्री जातकों में लग्नस्थ शुक्र जातक को सुन्दर, गोरी, कामवती, कलावती, श्रृंगारप्रिय, सुगठित शरीर वाली, आकर्षक, विपरीत लिंगियों में आकर्षण रखने वाली तथा पति की प्यारी बनाता है। शुक्र स्वक्षेत्रीय हो तो स्त्री सौभाग्यवती, सुशीला एवं खुशमिजाज होती है। परन्तु कुछ नखरे या अदाओं वाली होती है।

द्वितीय भाव—यदि शुक्र लग्नकुंडली के दूसरे भाव में बैठा हो तो जातक धनाढ्य, वैभवसम्पन्न, प्रेमी, कुलीन, भाग्यवान, अच्छे परिवारवाला, विद्वान, मधुरभाषी, रत्नादि का व्यापारी या रत्नों में रुचि लेने वाला, खाने-पीने का शौकीन किन्तु क्वालिटी कांशियस, राजसी रहन-सहन वाला, जेवर तथा वस्त्रों का शौकीन, बनाव-श्रृंगार में रुचि रखने वाला तथा विलासिता एवं मौजमस्ती में धन का व्यय करने वाला होता है। फिर भी जातक की सम्पत्ति कम नहीं होती। इस भाव का शुक्र जातक की अपनी आर्थिक स्थिति तथा ससुराल की स्थिति दोनों के लिए शुभ होता है। अत: प्राय: ऐसे जातकों की ससुराल भी काफी समृद्ध होती है तथा ससुराल से जातक के सम्बन्ध भी मधुर व घनिष्ठ रहते हैं (जातक प्राय: क्लीन शेव्ड होता है)।

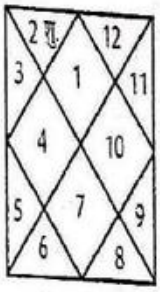

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक में सांसारिक तथा ईश्वरीय दोनों प्रेम करने की क्षमता होती है। ऐसे जातक का घर कभी बच्चों से खाली नहीं रहता। प्राय: 60 वर्ष तक आमदनी का साधन बना रहता है। चन्द्रमा की शुभ दृष्टि भी हो तो मित्रों के सहयोग से व्यापार में धनसंचय व यश प्राप्ति होती है। परन्तु शुक्र अशुभ प्रभाव में हो तो जातक को पुत्र प्राप्ति में शंका रहती है।

अग्निराशियों में शुक्र ऊंची महत्वाकांक्षा वाला व अधीर बनाता है। ऐसे जातक को व्यापार की अपेक्षा नौकरी शुभ रहती है। पूर्वार्जित धन-सम्पदा मिलती है लेकिन खर्चीला होने से जातक उसे जल्दी ही खर्च कर देता है। बिना कुछ करे शीघ्र अमीर बनने के चक्कर में लॉटरी, जुआ, सट्टे आदि में भी पूर्वार्जित को नष्ट करते हुए ऐसे जातक देखे गए हैं।

पृथ्वीराशियों में जातक को पूर्वार्जित धन नहीं मिलता। जातक नौकरी पसंद करता है। स्त्रियों के माध्यम से धन का संचय होता है, परन्तु पत्नी रुग्ण रहती है और धन उसके इलाज में खर्च होता रहता है। पैसों की स्थिति सुदृढ़ नहीं होने पाती यद्यपि पैसों का बहुत अभाव भी नहीं हो पाता।

जलतत्त्व राशियों में शुक्र हो तो जातक व्यापार में उन्नति करता है, परन्तु सन्तान की चिन्ता से दुखी रहता है (या तो संतान का अभाव होता है या वह अयोग्य होती है)। वायु राशियों में जातक लेखक, पत्रकार आदि हो सकता है पर दाम्पत्य सुख नहीं होता। यदि शुक्र पाप प्रभाव में हो या शनि से युति करे तो जातक दरिद्र तथा शराबी होता है। भले ही शुक्र धन का नैसर्गिक कारक हो।

द्वितीयस्थ शुक्र जातक को गायक/गायन में रुचि लेने वाला भी बनाता है। विशेषकर महिला जातकों में कंठ सुरीला हो जाता है तथा गायन की सम्भावनाएं विशेष बनती हैं। होंठ भी काफी आकर्षक होते हैं तथा नेत्र भी। द्वितीयस्थ शुक्र के जातक को शास्त्रकार सज्जनों की संगति प्राप्त करने वाला तथा निरोग रहने वाला भी बताते हैं।

तृतीय भाव—शुक्र यदि लग्नकुंडली के तीसरे भाव में हो तो जातक शास्त्रज्ञ, लेखक, सम्मानित, योगी, लोकप्रिय, कामुक, यात्राप्रेमी तथा अधिक प्रवास में रहने वाला होता है या उसे जन्म स्थान से दूर रहना पड़ता है। ऐसे जातक की बहनें अधिक होती हैं। वह खुशमिजाज तथा अच्छे पड़ोस व मित्रों वाला होता है। जातक की रुचि कलाकार या गायक बनने की होती है।

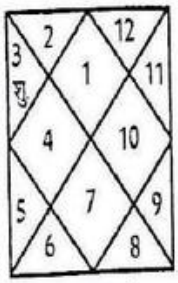

मन्त्रेश्वर के अनुसार तीसरा शुक्र जातक को स्त्री सुख से हीन, दुराचारी, बदनाम बनाता है। (किन्तु ऐसा शुक्र के अशुभ होने पर ही देखने में आता है।) लाल किताब के अनुसार तीसरे शुक्र वाले जातक के अवैध सम्बन्ध सम्भव होते हैं तथा स्त्रियों के माध्यम से उसे लाभ मिलने की भी सम्भावनाएं होती हैं। उसकी अपनी पत्नी दूसरों के प्रति गरम मिजाज वाली होती है। शुभ शुक्र हो तो जातक अपनी पत्नी को ही प्रेम व मान देने वाला तथा उसी में संतुष्ट रहने वाला होता है। (इससे जातक के भाग्य में वृद्धि होती है)। अशुभ प्रभाव में शुक्र हो तो जातक वैवाहिक सुख से हीन होता है, विवाह में बाधाएं आती हैं, पत्नी पूर्व विवाहिता या पुनर्भू (सेकंड हैंड) होती है अथवा उससे मनमुटाव रहता है। ऐसे जातक को प्रौढ़ स्त्रियां अधिक पसंद आती हैं तथा पत्नी की चिंता बनी रहती है।

पुरुष राशि का शुक्र जातक को अतिकामुक बनाता है। ऐसा जातक दिन या रात का अंतर SEX के समय नहीं करता। मंगल के साथ शुक्र का अशुभ योग

तीसरे भाव में हो जाए तो जातक बलात्कारी तथा जंगली ढंग से सहवास करने वाला होता है। ऐसा जातक अनैतिक ढंग से वीर्यनाश करने वाला भी होता है, किन्तु उसकी पत्नी योग्य, सुन्दर, अभिमानिनी होती है। स्त्री राशि का शुक्र हो तो जातक की पत्नी साधारण नयन-नक्श की एवं व्यवहारकुशलता से शून्य होती है पर जातक उसी में संतुष्ट रहता है।

तृतीयस्थ शुक्र रोग ज्योतिष की दृष्टि से जातक में बधिरता उत्पन्न करता है। (यदि पाप प्रभाव में हो तथा तृतीयेश भी निर्बल हो तो बहरा भी हो सकता है) अन्यथा मध्यायु के बाद जातक ऊंचा सुनने लगता है। चन्द्रमा से अशुभ योग हो तो कान बहने का रोग हो जाता है, जिसकी परिणिती बहरेपन पर हो सकती है।

चतुर्थ भाव—लग्नकुंडली में शुक्र चतुर्थ भाव में हो तो जातक सुन्दर, शक्तिसम्पन्न, दानी, चतुर, भाग्यवान, दीर्घायु, आरामतलब/विलासी, दूसरों की मदद करने वाला, सन्तान से सुख पाने वाला तथा वाहनों के सुख व सुविधाओं वाला होता है। उसे वैभव तथा वाहन सुख विशेष मिलता है। पैतृक सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। माता-पिता का सुख दीर्घकाल तक मिलता है। जीवन का उत्तरार्ध विशेष रूप से सुखमय होता है।

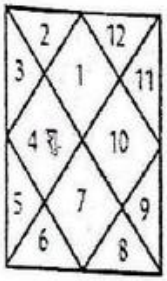

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को जमीनी यात्राएं बहुत करनी पड़ती हैं, जो उसके लिए शुभ होती हैं। यदि जातक की पत्नी दुश्चरित्रा हो (जिसकी सम्भावनाएं होती हैं) तो परिणाम में जातक की संतान को कष्ट भोगना पड़ता है। शुक्र का ऐसा अशुभ प्रभाव समाप्त करने के लिए जातक को अपनी पत्नी से दो बार विवाह कर लेना चाहिए। ऐसा जातक प्रायः विवाहोपरांत भाग्योदयी होता है तथा प्रथम संतान पुत्र प्राप्त करता है। जातक की मैत्री भी बड़े लोगों से रहती है। जातक पत्नी के वशीभूत रहता है। माता-पिता में से किसी एक से वैमनस्य रह सकता है अथवा कि ी एक की शीघ्र मृत्यु सम्भावित होती है। धन की चिन्ता बनी रहती है। मंगल से अशुभ योग हो तो उत्तरार्ध के जीवन में जातक का अत्यधिक धन व्यय होता है।

पुरुष राशि में चौथा शुक्र जातक को अय्याश, खर्चीला व पैतृक धन को नष्ट कर देने वाला बनाता है। ऐसा जातक स्व उपार्जित धन से सुख भोगता है तथा स्त्रियों से उसे पूर्ण सहयोग मिलता है। परन्तु माता जीवन भर रुग्ण रहती है। स्त्री राशियों में शुक्र हो तो जातक को सुन्दर पत्नी नहीं मिलती, पिता का सुख भी थोड़ा मिलता है। ऐसा जातक कपटी, स्वार्थी, नौकरी के साथ अन्य कार्यों से भी धनोपार्जन करने वाला होता है। अन्ततः वह नौकरी छोड़कर प्रायः व्यवसायी बन जाता है।

पृथ्वी तत्त्व राशि में या उच्च का शुक्र पुनर्विवाह कराता है। जलराशियों में जातक का घर बसने नहीं देता। ऐसा देखा गया है।

स्त्री जातकों में यदि चतुर्थ शुक्र चन्द्रमा से युति करे और पापदृष्ट हो (लग्न भी मेष या वृश्चिक हो) तो जातक व्यभिचारिणी हो जाती है। पापग्रहों की दृष्टि जितनी अधिक होगी उतना ही ऐसी जातक के व्यभिचारिणी होने की सम्भावना बलवान होगी।

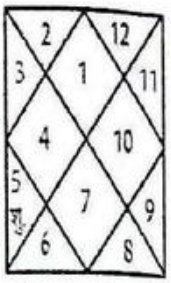

पंचम भाव—पांचवें भाव में शुक्र हो तो जातक सुखी, न्यायप्रिय, वक्ता, बहुत विद्वान व प्रसिद्ध (अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का) कवि तथा प्रेमी हृदय (रोमांटिक) होता है। ऐसे जातक सन्तान से सुख पाता है। कलाकार भी हो सकता है। ऐसा जातक की सन्तानों में कन्याएं अधिक होती हैं। मित्र वर्ग बढ़ा-चढ़ा होता है। जातक भोगी-विलासी, मौजमस्ती पर अधिक खर्च करने वाला, हंसमुख, विनोदी तथा धुन का पक्का होता है। शुक्र बलवान स्थिति में हो तो जुआ, लॉटरी, सट्टे आदि से आकस्मिक लाभ प्राप्त कराता है। या पैसे पड़े हुए मिलते रहते हैं। (आकस्मिक लाभ)। बुध से शुक्र की युति हो तथा चतुर्थेश पंचमेश का राशि परिवर्तन हो तो क्लब, सिनेमा, खेल आदि में जातक की अधिक रुचि होती है। पंचम भाव तथा पंचमेश बलवान हो तो इन कार्यों में ख्याति भी मिलती है।

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक की सन्तानें ज्यादा होती हैं (लड़कियां अधिक) तथा घर बच्चों से भरा रहता है। रोटी-रोजी की कमी नहीं रहती। जातक कवि या कलाकार होता है। यदि वह सात्विक विचारों के साथ जीवन जीता है तो उसका भाग्य, यश व सुख सब बढ़ते जाते हैं। परन्तु चरित्रहीन हो तो उसका भाग्य कटी पतंग की तरह पेड़ पर अटके जैसा होता है। अत: पांचवें शुक्र वाले जातक को चाहिए कि वह अपनी आशिक मिजाजी पर नियंत्रण रखे और सूफी विचारों का बने।

अग्निराशियों में शुक्र पंचमस्थ हो तो जातक शिक्षा पूर्ण न होने पर भी विद्वान कहलाता है। अदाकारी तथा कलाकारी से धनोपार्जन करता है, पर धन संचय नहीं कर पाता, एक पत्नीव्रती नहीं होता। कामुक होता है। सन्तान हो या न हो इसकी चिन्ता नहीं करता। पृथ्वी तत्त्व राशियों में शुक्र जातक को विद्वान तथा विज्ञान या टेक्नोलॉजी की उच्च शिक्षा पाने वाला बनाता है। ऐसे जातक को पुत्रसुख या तो मिलता नहीं अथवा देर से मिलता है। जलराशियों में शुक्र हो तो जातक कच्ची उम्र में ही स्त्री सुख पाने वाला अथवा व्यभिचारी बन जाता है। शास्त्रकार के मत से—

सुपुत्रेपि कि यस्य शुक्रो न पुत्रे प्रयासेन कि यत्न संपादितार्थ।
प्युदक विनामन्त्र मिष्टासनाभ्याम धातन कियेत्कवित्वे न शक्ये॥

अर्थात् पंचमस्थ शुक्र हो तो जातक को पुत्र हो भी जाए तो भी उसे पुत्र जन्म का फल प्राप्त नहीं होता (पुत्र सुख नहीं होता)। धनसंग्रह के प्रयास न करे तो भी ऐश्वर्यवान होता है। मन को संतुष्ट करने वाले भोज्य पदार्थ मिलते रहते हैं। मन्त्र, जप, इष्टदेवाराधन तथा कविता करने में समर्थ होता है। कवि, धनवान तथा उत्तम भोगों को भोगने वाला होता है। शुक्र आविष्कार का भी कारक होता है।

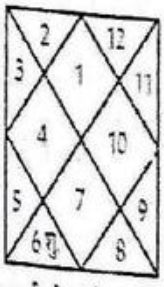

षष्ठ भाव—यदि शुक्र लग्नकुंडली के छठे भाव में हो तो जातक के अनेक मित्र होते हैं। जातक भाग्यवादी परंतु अनैतिक कार्य करने वाला, संगीतप्रेमी होता है। किन्तु उसे मूत्र, वीर्य या गुप्तांग सम्बन्धी रोग हो सकते हैं। उसके पौरुष पर भी प्रश्नचिह्न होता है (यदि शुक्र अशुभ स्थिति में हो तो जातक नपुंसक या स्त्री को संतुष्ट करने व सन्तानोत्पति में असमर्थ होता है)। मेरे सुयोग्य आचार्य श्री मदनमोहन कौशिक के अनुसार ऐसे जातक के शुत्र नहीं होते।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक उल्टे-पुल्टे कार्य करता है परन्तु ईश्वर उसके कार्यों को सीधा कर देता है। ऐसे जातक को अपना विवाह उससे कराना चाहिए जो अपने मां-बाप की इकलौती संतान न हो अन्यथा शुक्र यहां अशुभ प्रभाव देता है। जिससे स्त्री सुख में कमी व सन्तान उत्पत्ति में समस्याएं आती हैं। ऐसे जातक के शत्रु कभी समाप्त नहीं होते, सदा दुख देते रहते हैं। मानसिक शांति को भंग करते रहते हैं। षष्ठस्थ शुक्र से जातक की कामेच्छा तीव्र होती है, किन्तु अतिमैथुन से स्वास्थ्य खराब होता है। मूत्रविकार, उपदंश, प्रमेह, वीर्यात्पता तथा गुप्त रोग या जननेन्द्रिय रोग तीव्रता से सम्भव होते हैं।

जलराशि में शुक्र हो तो जातक को व्यभिचारी बना देता है। पृथ्वी राशि में जातक ऋणग्रस्त रहता है। पत्नी अच्छी मिलती है। झगड़ालू होती है किन्तु प्रेम जताकर मना लेती है। पुरुष राशि का शुक्र सुन्दर पत्नी दिलाता है किन्तु वह कर्कशा होती है। स्त्री राशि का शुक्र कोमलांगिनी पत्नी दिलाता है परन्तु वह पुरुष जैसे विचारों वाली होती है। ऐसे जातक के मामा-मौसी की स्थिति अच्छी नहीं रहती। पूंजी अधिक लगाए तो व्यवसाय में जातक को हानि होती है। कम पूंजी लगाए तो लाभ होता है। अत: ऐसे जातक को लघु उद्योग ठीक रहते हैं।

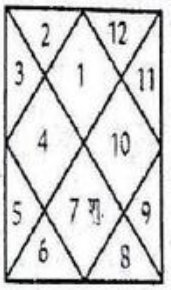

सप्तम भाव—लग्नकुंडली के सातवें भाव में शुक्र हो तो जातक लोकप्रिय, उदार, धनी, कामुक, विवाहोपरांत उन्नति करने वाला, सुखी विवाहित जीवन वाला होता है। परन्तु चरित्र उत्तम नहीं होता। अवैध सम्बन्ध सम्भव होते हैं। जातक का जीवन प्राय: सफर में गुजरता है। रोजी-रोटी के लिए परदेस में जीवन काटना पड़ सकता है।

लाल किताब के अनुसार यहां शुभ शुक्र हो तो विवाह तथा गृहस्थी अच्छे रहते हैं। अशुभ शुक्र हो तो जातक स्त्रियों पर (वैश्याबाजी या उन्हें घुमाने-फिराने आदि) अधिक धन का व्यय करने वाला होता है। कुछ विद्वानों के अनुसार सातवें घर में शुक्र जिस ग्रह के साथ बैठता है, तदनुसार फल देता है तथा यदि शुक्र इस भाव में अकेला बैठा तो कभी अशुभ नहीं होता। परन्तु मैं इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं हूं। मेरी यह मान्यता है कि शुक्र इस भाव में कितने ही शुभ फल क्यों न दे। जातक को स्त्री लोलुप व दुर्बल चरित्र का अवश्य बना देगा। क्योंकि शुक्र सातवें भाव का कारक है तथा फलादेश का महत्त्वपूर्ण सूत्र—**कारको भाव: नाशाय** के अनुसार कारक यदि अपने ही भाव में बैठे तो भाव के फलों को नष्ट कर देता है। अत: जातक की इस चरित्रहीनता का प्रभाव उसके गृहस्थ जीवन पर भी कम-ज्यादा जरूर पड़ता है।

उच्च का शुक्र सातवें भाव में हो तो जातक को धनाढ्य खानदान की पत्नी दिलाता है। मेष, मिथुन व तुला राशि में शुक्र हो तो पत्नी सुन्दर होती है और व्यवहारकुशल भी होती है परन्तु पुरुषोचित गुणों से युक्त होती है। ऐसे जातक के सन्तान कम होती है तथा अतिकामुकता के कारण जातक का स्वास्थ्य क्षीण हो जाता है। सिंह व कुम्भ राशि का शुक्र हो तो मध्यम कद व स्थूल देह की पत्नी जातक को मिलती है। मगर वह खुशमिजाज व अक्लमंद होती है। धनु राशि का शुक्र हो तो जातक की पत्नी लम्बी, सुन्दर व धीर होती है पर बनाव-श्रृंगार में ही लगी रहती है। जलराशि का शुक्र हो तो जातक की पत्नी स्वार्थी, कलहप्रिय, कुटुम्ब से अलग रहने की इच्छुक, खर्चीली तथ सत्ता अपने हाथ में रखने वाली होती है।

जो भी स्थिति हो सातवां शुक्र जातक को कामुक व कमजोर चरित्र का बनाता है। शुक्र अशुभ प्रभाव में हो तो 'विवाह प्रतिबन्धक योग' बनता है। विवाह हो जाए तो पत्नी से अलगाव, पत्नी को कम आयु में मृत्यु, पुनर्विवाह जैसे परिणाम होते हैं। मंगल व शनि की राशियों(मेष, वृश्चिक, मकर, कुम्भ) में शुक्र हो तो प्राय: विलम्ब से विवाह होता है। कभी-कभी विजातीय विवाह होते भी देखा जाता है। सप्तमस्थ शुक्र से भाग्य पत्नी के आने पर ही उदित होता है। किन्तु कोर्ट-कचहरी में जातक को विजय मिलती है तथा यदि साझे का व्यापार करे तो सफल होता है। संतान से प्रेम अधिक व स्वतंत्र व्यवसाय की प्रवृत्ति रहती है। शास्त्रकारों के मत से—

कलत्रे कलयात्सुखं नो कलात्रत्कलत्रं तु शुक्रे भवेद्रत्नगर्भम्।
विलासाखिको गण्यतेचप्रवासी प्रयासाल्पक: केन मुह्यतितम्॥

अर्थात् शुक्र सप्तमस्थ हो तो जातक को स्त्रीसुख तो प्राप्त होता है परन्तु कुक्षि/कटि स्थान में पीड़ा रहती है। उसकी पत्नी सद्पुत्र उत्पन्न करने वाली होती है। जातक अतिकामी व नित्य प्रवासी होता है। आलसी/विशेष श्रम न करने वाला होता है। उसकी पत्नी अपनी चतुरता से सबको मोहित करने वाली होती है। परन्तु जातक स्त्री लोलुप होता है।

अष्टम भाव—शुक्र यदि लग्नकुंडली के आठवें भाव में हो तो जातक रोगी, क्रोधी, दुखी, परलिंगी से अवैध सम्बन्ध बनाने वाला तथा विदेश यात्रा करने वाला होता है। ऐसे जातक को अकस्मात् धन प्राप्ति का योग भी होता है। सट्टा, लॉटरी, विरासत आदि से उसे लाभ हो सकता है। विशेषकर किसी विधवा स्त्री की सम्पत्ति उसकी मृत्यु के बाद जातक को मिलती है। जातक को नशे की लत सम्भव होती है। वह दीर्घायु तथा अर्थ व स्त्री सुख पाने वाला, विद्वान होता है। उसकी पत्नी सुन्दर, विश्वासपात्र व प्रिय बोलने वाली होती है।

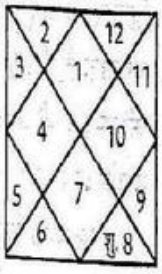

लाल किताब के अनुसार ऐसे व्यक्ति को ज्ञान तो बहुत होता है परन्तु उसकी समाज में कद्र नहीं होती। ऐसे जातक को धर्मस्थानों पर सिर झुकाने से लाभ मिलता है। परन्तु दूसरों से दान आदि लेना अशुभ रहता है। ऐसे जातक की पत्नी अनुशासन पसंद या सख्त स्वभाव की होती है। परन्तु प्राय: सुन्दर व अच्छी आवाज वाली होती है।

वृष, धनु या कर्क राशि का शुक्र हो तो जातक का दाम्पत्य जीवन अच्छा नहीं रहता। पत्नी व संतान से वैमनस्य रहता है। जातक अतिकामी तथा व्यभिचारी प्रवृत्ति का होता है। मधुमेह, शुक्रमेह, उपदंश आदि गुप्त रोग होना सम्भावित होता है। मिथुन या वृश्चिक राशि में शुक्र स्त्री सुख में न्यूनता लाता है तथा व्यवसाय सुचारू नहीं रखता। आर्थिक स्थिति साधारण रहती है। मकर व सिंह राशि का शुक्र सन्तान व स्त्री का सुख अल्प करता है। परस्त्री से सम्बन्ध बनवाता है, जिससे जातक को अर्थ लाभ होता है। कन्या व मेष राशि में विवाहोपरांत जातक अवनति को प्राप्त होता है, व्यवसाय में हानि, नौकरी में पदावनति होती है। जातक पर सदा ऋण रहता है। अन्य राशियों में और तो सब ठीक होता है पर परित्यक्ता या विधवा से अवैध सम्बन्ध रहते हैं। शुक्र पाप प्रभाव में या दूषित हो तो अनैतिक संसर्ग निश्चित होते हैं।

नवम भाव—लग्नकुंडली के नौवें भाव में शुक्र हो तो जातक धार्मिक, चतुर, बुद्धिमान, अच्छा वैवाहिक जीवन, दयालु, तीर्थयात्राएं करने वाला तथा सरकार से सम्मान पाने वाला होता है। धार्मिक तथा तपस्वी भी होता है। पैसे की

स्थिति अच्छी होती है। परन्तु परिश्रम अधिक करना पड़ता है। सन्तान का सुख भी उल्लेखनीय नहीं होता।

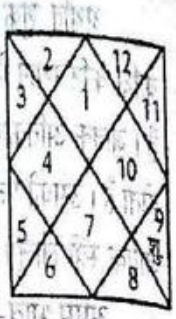

'लाल किताब' ने नौवें शुक्र को 'मिट्टी की काली आंधी' कहा है। यानी सामान्यत: नौवां शुक्र शुभ नहीं माना है। लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक बुद्धिमान होता है। पैसे वाला भी होता है, किन्तु खुद परिश्रम करने पर ही उसको भोजन नसीब होता है। सन्तान की स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं होती। किन्तु ऐसा जातक यदि तीर्थयात्राएं करे तो उसके शुभ परिणाम प्राप्त होते हैं।

नवमस्थ शुक्र माता-पिता को चिरायु तथा जातक को गायन-वादन, कला-सिनेमा आदि का प्रेमी बनाता है। ऐसा जातक जन्मजात कुशल अभिनेता होता है तथा सम्मान पाता है। पुरुष राशि का शुक्र हो तो जातक के बहनें कम, छोटे भाई अधिक होते हैं। स्त्रीराशि का हो तो भाई कम बहनें अधिक होती हैं। प्राय: विवाहोपरांत भाग्योदय होता है। स्त्रियों के माध्यम से धन मिलता है। जब तक पत्नी जीवित रहे, व्यवसाय में उन्नति होती है। पत्नी के मरने के बाद स्थिति बिगड़ जाती है। कन्या व कुम्भ राशि में शुक्र हो तो जातक का भाग्योदय सन्तान के द्वारा होता है। यदि प्रथम कन्या हो जाए तो स्थिति सुदृढ़ हो जाती है। यदि पहले पुत्र हो जाए तो प्रारंभ में स्थिति सुधरकर फिर बिगड़ जाती है।

जलराशि का शुक्र हो तो जातक खोजी विचारधारा का होता है। अग्नि एवं वायु राशियों में हो तो पत्नी लावण्यमयी व यौवन सम्पन्न नहीं होती है। शुक्र पाप प्रभाव में हो तो विजातीय विवाह को प्रेरित करता है तथा पत्नी की आयु जातक से प्राय: अधिक होती है। माता-पिता से भी जातक का विरोध रहता है। उच्च का शुक्र हो तो जातक मामी, मौसी तथा मित्र की पत्नी से अवैध सम्बन्ध बनाने वाला होता है।

दशम भाव—दसवें भाव में शुक्र हो तो जातक न्यायप्रिय, दयालु, भाग्यवान, धनाढ्य, शुभकर्मा, ज्योतिष में रुचि लेने वाला, प्रतापी किन्तु धन को विशेष महत्व देने वाला तथा विपरीतलिंगी के साथ अनेनी अय्याशी (काल्पनिक रति) करने वाला होता है। ऐसे जातक के युवावस्था में अवैध सम्बन्ध सम्भावित होते हैं। भाइयों से उसके सम्बन्ध प्राय: मधुर नहीं रहते। यदि शुक्र दूषित हो तो जातक वैश्यागामी होता है।

लाल किताब के अनुसार दसवां शुक्र यदि स्त्री राशि में हो तो जातक मृदुभाषी, लोकप्रिय, मिलनसार व विवाहोपरांत भाग्योदयी होता है। ऐसे जातक की पत्नी भी जातक की धनवृद्धि में सहायक होती है। प्राय: जातक नौकरी नहीं करता

क्योंकि स्वतन्त्र कार्य की इच्छा उसे जन्मजात होती है। यदि नौकरी करता है तो ऊबकर शीघ्र त्यागपत्र दे देता है और अपना व्यवसाय करता है। सन्तान कम होती हैं। बुरी आदतें सम्भावित होती हैं।

पुरुष राशि में शुक्र हो तो (या उच्च का हो तब भी) जातक को विवाहेच्छा नहीं होती। विवाह कर लेता है तो पत्नी के साथ अधिक समय नहीं रहता। पत्नी के साथ सौमनस्य भी नहीं रहता। कामकाज में ही लगा रहता है अत: पत्नी असंतुष्ट ही रहती है, जिससे कलह उत्पन्न होती है।

शुक्र यदि राहू व शनि के प्रभाव में हो तो 'द्विभार्या योग' बनता है। संतान की चिंता बनी रहती है। यदि स्त्री-पुत्र का सुख मिल जाए तो व्यवसाय ठीक नहीं चलता, व्यावसायिक सफलता संदिग्ध हो जाती है। पिता का सुख भी अल्प हो जाता है। शास्त्रकारों ने दशमस्थ शुक्र को बहुत सन्तान प्रदान करने वाला भी माना है तथा जातक का आडम्बरप्रिय होना कहा है।

एकादश भाव—लग्नकुंडली के ग्यारहवें भाव में शुक्र हो तो जातक वाहनसुखी, धनपति, रत्नादि का व्यापारी (या शुक्र से सम्बन्धी व्यवसाय वाला), सन्तान से सुखी, कामुक किन्तु परमार्थी होता है। यदि शुभ प्रभाव में हो तो मित्रवर्ग उत्तम एवं धनोपार्जन में सहायक होता है। ऐसे जातक को स्त्रियों के माध्यम से भी लाभ होता है। किन्तु शुक्र पाप प्रभाव में हो तो अशुभ फल प्राप्त होते हैं।

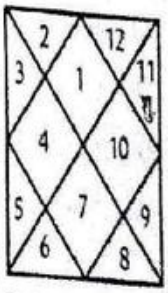

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक गुप्त कार्य करने वाला, क्षण में रंग बदलने वाला होता है। यदि कुंडली में बुध व चन्द्रमा स्थिर राशि में हों तो ग्यारहवां शुक्र विशेष धनदायक होता है। शुक्र अशुभ हो तो गुप्तरोग, चर्मरोग या शुक्राणु सम्बन्धी रोग देता है। ऐसा जातक ऊपर से भोला परन्तु भीतर से तेज व शातिर होता है। पत्नी को यदि घर का खजांची बनाए तो अशुभ रहता है।

पुरुष राशि में ग्यारहवां शुक्र कन्याएं अधिक देता है। स्त्री राशि में पुत्र अधिक देता है। किन्तु अग्निराशि में पुत्र अभाव या पुत्र सुख अल्प कर देता है। जलराशि का शुक्र सन्तान के लिए अशुभ होता है। ग्यारहवां शुक्र किसी भी राशि का हो जातक के चरित्र को संदिग्ध बनाता है। ऐसा जातक प्राय: स्वार्थी, कंजूस, मित्रों की अवहेलना करने वाला होता है तथा उसके विषय में अफवाहें अधिक उड़ती हैं।

शास्त्रकारों ने ग्यारहवें शुक्र की कुछ और विशेषताएं भी गिनाई हैं। ऐसे जातक को सौंदर्य, ऐश्वर्य, भोग व सामर्थ्य गुण व कीर्ति सहित प्राप्त होते हैं और

शुभ प्रभाव का शुक्र हो तो जातक राजा के समान वैभव ऐश्वर्य का भोग करता है।

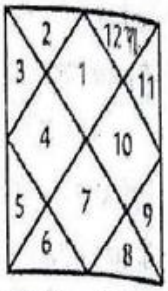

द्वादश भाव—जन्मकुंडली में शुक्र यदि बारहवें भाव में हो तो जातक न्यायप्रिय, बहुभोजी/पेटू, खर्चीला, पापी, वीर्यरोगी तथा परलिंगियों से सम्बन्ध बनाने वाला व आलसी होता है। किन्तु पत्नी प्राय: पतिव्रता एवं मुसीबतों में साथ देने वाली होती है (यह लाल किताब का मत है)। शुक्र अशुभ हो तो भी जातक की पत्नी रोगिणी भले ही रहे, पति की परेशानियों को स्वयं झेलनी वाली होती है। पत्नी का भाग्य पति के लिए सहायक रहता है। वैसे बारहवां शुक्र सामान्यत: पाराशरी ज्योतिष व लाल किताब दोनों ने अशुभ माना है।

लाल किताब के अनुसार बारहवां शुक्र व्यभिचार की प्रवृत्ति देता है। ऐसा जातक गुप्त रूप से जननेन्द्रिय सुख प्राप्त करता है (शुक्र शुभ हो तो गोपनीयता बनी रहती है। नहीं तो सबको ज्ञात हो जाता है)। वह परस्त्रीगामी व शुक्र सम्बन्धी रोगों से त्रस्त हो सकता है। राहू जैसे पापग्रहों से अशुभ संबंध बनाए या दृष्टि आदि से पीड़ित हो तो बारहवां शुक्र स्त्रियों की शत्रुता के कारण धनहानि कराता है। पत्नी की मृत्यु/तलाक/वियोग की सम्भावना तीव्र होती है। अग्निराशि का शुक्र जातक को झगड़ालू, क्लेशकारिणी व गुस्सैल या कर्कशा पत्नी दिलाता है।

वायु राशि का शुक्र हो तो पत्नी आकर्षक होती है। चित्रकला, कविता, लेखन आदि में रुचि होती है, नौकरी करते हुए भी व्यवसाय करने की इच्छा बनी रहती है। ऋण बना रहता है। द्विभार्या योग की सम्भावना भी बनती है। ऐसे जातक को पशुपालन द्वारा लाभ सम्भावित होता है। यदि मंगल के साथ शुक्र की युति हो जाए तो जातक SEX के विषय में सैडिस्ट (परपीड़क) बन जाता है। किन्तु शनि व बुद्ध की युति हो तो काम शीतलता या अर्धनपुंसकता (शीघ्रपतन या अर्ध उत्तेजना आदि) का भी शिकार हो सकता है। स्त्री जातकों में बारहवां शुक्र यदि पापदृष्ट हो तथा चन्द्रमा की युति हो तो जातक व्यभिचारिणी होती है।

□□

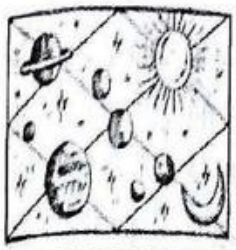

शनि का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—लग्न या प्रथम भाव में शनि का होना सामान्यत: शुभ नहीं माना गया है। क्योंकि यहां बैठकर यह तीसरे, सातवें और दसवें तीनों महत्त्वपूर्ण भावों को खराब करता है। स्वयं लग्नेश न हो तो लग्न को भी दूषित प्रभाव से युक्त करता है। क्योंकि यह पापग्रह है।

लग्नस्थ शनि प्राय: जातक के शरीर को रूखा, कद को मंझोला तथा रंग को काला/सांवला बनाता है (शुक्र/चन्द्र/बुध/गुरु का भी लग्न पर दृष्टि/युति/राशि से प्रभाव हो तो रंग गेहुंआ या साफ हो सकता है)। ऐसे जातक का सिर/गर्दन आगे की ओर झुका रहता है। मानो कंधों पर कुछ वजन उठा रखा हो। कुल मिलाकर उसके चेहरे को देखकर प्रसन्नता नहीं होती। ऐसा प्रैक्टिकल अनुभव से देखने में आया है।

पाराशर ज्योतिष के प्रवर्तक मेरे सुयोग्य आचार्य श्री कौशिकजी के अनुसार मकर, कुम्भ या तुला लग्न में शनि बैठता है तो जातक हर प्रकार से धनवान होता है। धनु या मीन लग्न में हो तो जातक को अत्यंत धनवान बनाता है। किन्तु शेष सभी लग्नों/राशियों में जातक निर्धन होता है। उसके विवाह में विलम्ब होता है। गृहस्थ सुखमय नहीं रहता, वियोग/तलाक सम्भव होता है। भाइयों से पटती नहीं। व्यवसाय/आजीविका में दिक्कतें आती हैं। पिता का सुख भी अल्प ही रहता है। या उनकी शीघ्र मृत्यु हो जाती है।

लाल किताब के अनुसार शनि लग्नस्थ हो तो या तो जातक के बचपन, जवानी व बुढ़ापे के लिए शुभ होता है (यदि लग्नेश भी शनि हो) अथवा तीन गुना अशुभ रहता है। अशुभ प्रभाव में पुत्र जन्म के बाद जातक के बुरे दिनों का आरम्भ हो सकता है। दयालु स्वभाव का हो तो धन की दृष्टि से स्थिति ठीक रहती है अन्यथा रोटी के भी लाले पड़ सकते हैं। आजीविका भी संदिग्ध हो जाती है।

शनि शुभ हो तो जातक लोककल्याण में तत्पर, वस्तुओं का भोग करने पर भी निर्लिप्त व त्यागी, विद्वान तथा अध्यात्म ज्ञान प्राप्ति का इच्छुक होता है। जीवन के पूर्वार्ध में भारी कष्ट उठाकर आत्मविश्वास, धैर्य, संघर्ष व परिश्रम के बल पर

उत्तरार्ध में सफलता प्राप्त करता है। सिंह या धनु राशि में लग्नस्थ शनि जातक को मलिनवेषी व गंदा रहने वाला बनाता है।

मंगल से प्रभावित शनि अपघात, कारावास, रिश्वत के आरोप व आकस्मिक मृत्यु का भय देता है। कुम्भ या मिथुन राशि में वातजन्य रोग प्रदान करता है। वृष, कन्या, मकर व कुम्भ राशियों में दाम्पत्य सुख को नष्ट कर दुखी बनाता है। ऐसे जातक की दृष्टि व जीभ काली होती है। वह जिसे प्रशंसा भरी दृष्टि से देखे उसे 'नजर' लग जाती है। जिसकी प्रशंसा करे वह शीघ्र नष्ट हो जाता है। ऐसा जातक अपने छोटे लाभ के लिए भी दूसरे का बड़ा नुकसान कर देता है। ईर्ष्या का भाव उसमें विशेष रूप से बढ़ा हुआ होता है।

शनि लग्नेश हो (विशेषकर मकर लग्न में) या शनि 'योगकारक' हो (विशेषकर वृष लग्न में) अथवा दशम व एकादश स्थान का स्वामी हो (मेष लग्न) तथा बलवान स्थिति में लग्न, द्वितीय भाव, चतुर्थ, दशम या एकादश भाव में बैठा हो तो जातक को तेल, शराब, सीमेंट, लोहा, चमड़ा, कबाड़/पुरानी चीजों या काली वस्तुओं (कम्बल, कोयला आदि) के व्यापार में अत्यंत शुभ फल देता है। विशेषकर ग्यारहवें भाव का शुभ शनि जातक को अच्छा उद्योगपति बनाता है।

द्वितीय भाव—शनि यदि दूसरे भाव में लग्नकुंडली में हो तो जातक कटुभाषी/गालियां देने वाला, परिवार/कुटुम्ब से कलह करने वाला तथा मुखरोग से पीड़ित होता है (सूर्य की या द्वितीयेश की स्थिति खराब हो तथा शनि पाप प्रभाव में हो तो दाएं नेत्र का रोग भी सम्भव होता है)। ऐसा जातक दरिद्र, एकांतप्रिय व पापी होता है। स्वास्थ्य ठीक रहता है। वह दीखने में बुद्धू, पर वैसे समझदार व न्यायप्रिय होता है।

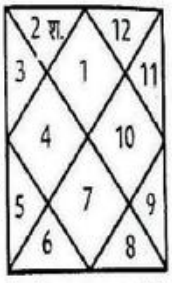

शुभ अवस्था में या उच्च का शनि हो तो जातक को अचल सम्पत्ति, न्यायप्रियता, सत्यवादिता, धार्मिक वृत्ति प्रदान करता है। किन्तु जातक को प्रवास में अधिक रहना पड़ता है। शनि अशुभ हो तो सगाई या विवाह के बाद जातक की ससुराल के लिए हानिकारक हो जाता है। जातक को गुदा से सम्बन्धी रोग या विश्वासघात का भय रहता है। जातक को आकस्मिक धनहानि होती है। लाल किताब के अनुसार घर में पानी का कुंभ स्थापित करना ऐसे जातक को शुभ रहता है।

द्वितीय भाव का शनि बलवान स्थिति में जुआ, सट्टा, लॉटरी, शेयर आदि के माध्यम से आकस्मिक धन लाभ कराता है। धनसंग्रह भी कराता है। प्राचीन एवं दुर्लभ वस्तुओं की खरीद-फरोख्त भी लाभकारी होती है। फिजूलखर्ची नहीं होती। जातक को पैतृक सम्पत्ति मिलती है तथा अर्थव्यवस्था के मामलों में जातक दूरदर्शी होता है।

लाल किताब के अनुसार वायुतत्त्व राशियों में शनि जातक को सूदखोर तथा दूसरों का धन हथियाने में कुशल बनाता है। विवाह देर से होता है। अग्नितत्त्व राशियों में धन, मान तो मिलता है, परन्तु दाम्पत्य अच्छा नहीं होता, कलह भी रहती है। जलतत्त्व राशियों में फल अग्नि राशियों के समान ही होता है परन्तु अपेक्षाकृत राहत मिल जाती है। पृथ्वीतत्त्व राशियों में शनि जातक को SELFMADE बनाता है। जातक की युवावस्था संघर्षपूर्ण होती है। वह हठी तथा दुराग्रही होता है। किसी के प्रति प्यार नहीं होता, स्वयं अपने प्रति भी वह लापरवाह व ठीक से ध्यान न रखने वाला होता है।

तृतीय भाव—लग्नकुंडली के तीसरे भाव में शनि बैठा हो तो जातक शत्रुजित, जल्दी काम करने वाला, स्वस्थ, योगी, विद्वान, दीर्घायु, ज्योतिषज्ञ तथा संन्यास की तरफ जाने वाला होता है। छोटे भाई के लिए तीसरा शनि घातक/मारक होता है। पुरुष राशि में शनि हो तो भाई की मृत्यु तक सम्भव होती है। अथवा भाई होता ही नहीं। स्त्रीराशि में शनि हो तो भाई मरता तो नहीं है, परन्तु जातक का उसके साथ सौमनस्य नहीं रहता। बंटवारे की नौबत आ जाती है, इकट्ठे नहीं रह पाते। हठपूर्वक इकट्ठे रहें भी तो दोनों को भी भाग्योदय नहीं होता व क्लेश रहता है। स्त्री राशि का शनि जातक को विलम्ब से सन्तान प्राप्त करता है। जबकि पुरुष राशि में संतान जल्दी मिलती है।

लाल किताब के अनुसार तीसरा शनि अशुभ हो तो दोगुना अशुभ प्रभाव देता है। अन्यथा शुभ रहता है। ऐसा जातक आंखों का प्रसिद्ध डॉक्टर हो सकता है। मकान खरीदने-बेचने का कार्य या मकान बनाने आदि का कार्य उसे लाभ देते हैं। यदि वह शराब तथा मांस का सेवन न करे तो आयु भी लम्बी हो जाती है। ऐसे जातक को घर में कुत्ता पालना (काला हो तो अच्छा) शुभ प्रभाव देता है। शनि जब बलवान और शुभ हो तो तीसरे भाव में बैठकर जातक को गम्भीर, शांत, स्थिरचित्त, विवेकी, न्यायप्रिय, चतुर, धर्मपरायण तथा गुप्त विद्याओं में रुचि लेने वाला बनाता है। शनि उच्च का हो तो विवाहोपरांत जातक को आर्थिक संकट में डालता है। परिश्रम करने पर भी लाभ नहीं होता। कुशलता व उत्साह होते हुए भी सफलता संदिग्ध होती है। स्वराशि का शनि जातक को दरिद्र बनाता है। जलराशि में हो तो शिक्षा की दृष्टि से ठीक किन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से खराब होता है। जातक को प्रवास भी अधिक करना पड़ता है।

विशेष—आयु की दृष्टि से तीसरा शनि अच्छा होता है। यदि केतु बारहवें भाव में अकेला बैठे और शनि तीसरे स्थान में अच्छी स्थिति में हो तो जातक को संन्यासी होकर मोक्ष पाने की सम्भावनाएं बलवती बनती हैं।

चतुर्थ भाव—शनि लग्न कुंडली के चौथे भाव में हो तो जातक माता के लिए अशुभ, शुष्क व रूखे/सांवले शरीर का, धोखेबाज, बदनाम, उदास रहने वाला, क्रोधी तथा खराब पारिवारिक जीवन वाला होता है (लग्न में चन्द्र या बुध शुभ स्थिति में हो या गुरु हो तो क्रोधी न होकर सौम्य होता है, तब धोखेबाज व शुष्क रूखे शरीर वाला भी नहीं होता)। ऐसे जातक की बाल्यावस्था कष्ट में बीतती है। मां-बाप के सुख, पत्नी के सुख में कमी रहती है। पत्नी से वियोग सम्भव होता है। किन्तु शनि से सम्बन्धित कारोबार लाभकारी होता है। शनि पाप प्रभाव में हो तथा चौथे घर में चन्द्रमा की युति हो तो जातक की माता उसकी बाल्यावस्था में ही मर जाती है।

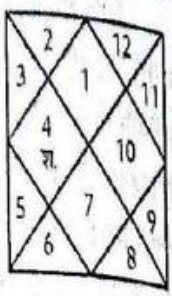

लाल किताब में चौथे शनि को 'पानी का सांप' कहा गया है। यदि ऐसे जातक का स्वास्थ्य ठीक न रहता हो तो शनि ग्रह की सम्बन्धित तरल वस्तुएं—शराब, तेल आदि का प्रयोग उसे लाभकारी होता है। स्वराशि या उच्च का शनि हो तो पूर्वजों की भारी सम्पत्ति जातक को मिलती है। जमीन-जायदाद या खदानों के काम में विशेष रूप से लाभ प्राप्त होता है। धन के प्रति मोह अधिक रहता है। यदि शनि यहां निर्बल हो तो माता-पिता का सुख अल्प, स्थावर सम्पत्ति का नाश, घर का सुख नहीं तथा जीवन का अन्तिम समय बहुत बुरा-आदि दुष्प्रभाव जातक भोगता है। क्रोध बहुत आता है, चिन्ता रहती है। पुरुष राशि का शनि हो तो पिता की मृत्यु पहले होती है। कन्या या स्वराशि का शनि हो तो व्यापार में जातक सफल होता है। नौकरी में नहीं। किन्तु माता-पिता का भले ही इकलौता हो, पैतृक सम्पत्ति उसे नहीं मिलती। शेष राशियों में दासवृत्ति/नौकरी से ही जातक की उन्नति होती है, व्यापार में नहीं।

चौथा शनि शुभ हो या अशुभ जीवन के अन्तकाल में जातक को एकांतप्रिय तथा साधुवृत्ति का बना देता है। प्राय: जजों/न्यायाधीशों के लिए चौथा शनि शुभ फल देने वाला होता है।

पंचम भाव—पांचवें भाव में शनि हो तो जातक वात रोगी, आवारागर्द, आलसी किन्तु विद्वान होता है। सन्तान से सुखी होता है। शरीर प्राय: दुर्बल, शुष्क व रोगी होता है। ऐसे जातक को स्वयं बनाए या खरीदे मकान अशुभ फल देते हैं। किन्तु सन्तान द्वारा बनाए या खरीदे मकान शुभ रहते हैं। ऐसा लाल किताब का मत है। शनि अशुभ हो तो जातक को संतान, धन व स्वास्थ्य की दृष्टि से बुरा फल देता है। 'बृहद्यमान जातक' के अनुसार कामशक्ति से भी हीन बनाता है।

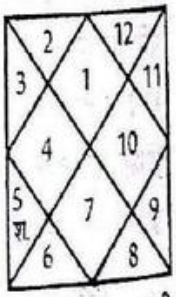

स्त्री जातकों में पांचवां शनि मासिक धर्म में गड़बड़ी, प्रदर, मृतवत्सा (जिसके बच्चे मर जाते हों/मरे हुए पैदा होते हों) सन्तान देर में होना या सन्तानों के बीच अन्तर बहुत अधिक होना आदि दुष्प्रभाव दिखाता है।

लाल किताब के अनुसार शनि यदि शुभ व बली हो तो जातक को भूमि, खदान, मकान आदि से सम्बन्धित कामों में लाभ देता है। पद प्राप्ति कराता है। किन्तु पाप प्रभाव में हो तो पुत्राभाव, जुआ, लॉटरी, रेस आदि में व्यर्थ ही धन नाश कराता है। जलराशि का शनि हो तो जातक को कन्याएं अधिक व जल्दी-जल्दी होती हैं। जातक का पद छोटा होता है पर जातक उसी का प्रभाव डालने का प्रयास करता है। अग्निराशि में शनि हो तो भाग्योदय में सहायक होता है। जातक SELFMADE परन्तु विलक्षण स्वभाव का होता है। अपने विचार सबसे छिपाना, सब पर संदेह करना मुंह पर तारीफ, पीठ पीछे बुराई करना व चापलूसी करना उसकी आदत होती है। ऐसे जातक के संतान बहुत होती हैं, परन्तु उनमें जीवित कम ही रहती हैं। जातक की शिक्षा की दृष्टि से भी अग्निराशि का शनि शुभ नहीं होता।

वायुराशि में शनि जातक को उच्च शिक्षा दिलाकर कानूनविद्, वकील, जज आदि बनाता है। परन्तु जातक माता-पिता से अलग हो जाता है या दत्तक पुत्र बनकर उसे अलग होना पड़ता है। पूर्वार्जित सम्पत्ति जातक को मिलती है परंतु उसके जीवन काल में ही नष्ट भी हो जाती है। पंचमस्थ शनि प्राय: आपदा देकर शांति प्रदान करता है। हृदय रोग या जल में डूबकर मृत्यु की सम्भावना बनाता है।

षष्ठ भाव—लग्नकुंडली के छठे भाव में शनि हो तो जातक शत्रुओं पर भारी पड़ने वाला होता है। वह मौज-मस्ती वाला या लापरवाह किस्म का होता है। अनैतिक आचरण करने वाला या योगी होना—दोनों ही सम्भव होता है (शनि के बलाबल एवं शुभाशुभ का विचार कर निर्णय कर लेना चाहिए) किन्तु कण्ठरोग या श्वास रोग (दमा आदि) संभव होते हैं। शनि अशुभ प्रभाव में हो तो लम्बी चलने वाली बीमारियां देता है। चरराशि में व गुरु से दृष्ट होने पर रोग आता-जाता रहता है। द्विस्वभाव राशि में कठिनाई से ठीक होता है। किन्तु स्थिर राशि में शनि अशुभ हो तथा गुरु आदि की शुभ दृष्टि न हो तो रोग ठीक नहीं होता, सदा लगा रहता है। अशुभ शनि यदि छठे घर में वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशि का हो तो दिल, गला व सांस के रोग देता है। मेष, कर्क, तुला या मकर राशि में पित्त-विकार, जिगर के रोग तथा सन्धिवात के रोग देता है। मिथुन, कन्या, धनु तथा मीन राशियों में दमा, कफ रोग, पैरों के विकार या अपंगता आदि देता है। शनि की मंगल से छठे भाव में युति हो और लग्नेश आठवें भाव में सूर्य व राहू से दृष्ट

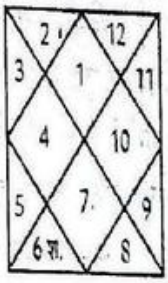

हो तो जातक की क्षयरोग के कारण मृत्यु हो जाती है (आठवां भाव मृत्यु का कारण बताता है)।

शनि चंद्र के साथ छठे या आठवें भाव में पाप मध्य या पाप दृष्ट हो तथा अष्टमेश भी स्वग्रही होकर पापग्रहों के मध्य या उनकी दृष्टियों में हो तो जातक की मृत्यु समूह में होती है।

लाल किताब के अनुसार छठा शनि कार्यों में बाधा डालता तथा चिन्ताओं व झंझटों से ग्रस्त रखता है। बिना किसी की सहायता के जातक कठिन संघर्ष करता है। यदि जातक नौकरी करे तो अच्छी नौकरी न मिले, मिले तो लाभ न हो अथवा समय से पूर्व अवकाश लेना पड़ता है। मीन राशि में शनि हो तो जातक के शत्रु बहुत होते हैं, परन्तु बिना प्रयास के नष्ट भी हो जाते हैं। जातक के सामने टिकते नहीं। ऐसे जातक को सम्पत्ति, यश व अधिकर एकसाथ नहीं मिलते—किसी एक की ही प्राप्ति हो पाती है। शनि छठे और शुक्र बारहवें हो तो जातक को गृहस्थ सुख मिलता है तथा पत्नी भी सुखी होती है। ऐसे जातक का पुत्र अच्छा न भी हो तो भी जातक के काम आता है।

छठे भाव में शनि हो तो शनि से सम्बन्धित वस्तुएं लोहा/मशीनरी, तेल, चमड़ा, शराब, सीमेंट, कबाड़ आदि घर में कम से कम लाना चाहिए (विशेषकर चमड़ा और मशीनरी)—अन्यथा शनि का प्रभाव अशुभ होने लगता है। ऐसा लाल किताब के जानकारों का मत है। सांप को दूध पिलाना जातक की संतान के लिए शुभ माना गया है (लाल किताब के टोटके के अनुसार)।

विशेष—प्रैक्टिकल अनुभव में छठे शनि वाले जातक प्राय: भैंस पालकर उसका दूध बेचते भी देखे गए हैं (पाठकों की जानकारी के लिए बता दें कि भैंस/भैंसा भी शनि के कारकों में से एक होता है)। कुल मिलाकर छठा शनि ठीक नहीं होता। अशुभ होने पर तो और भी बुरा हो जाता है।

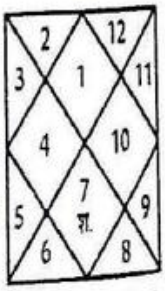

सप्तम शनि—लग्नकुंडली के सप्तम भाव में शनि विद्यमान हो तो जातक क्रोधी, निर्धन (औसत), आवारागर्द, नीचकर्मा, आलसी, कामुक तथा काम टालने की प्रवृत्ति वाला होता है। ऐसे जातक का विवाह विलम्ब से होता है (अविवाहित रहना भी सम्भव है) वैवाहिक जीवन सफल नहीं रहता, अलगाव की पूर्ण सम्भावना होती है। अपने से अधिक आयु वाले परलिंगी से अवैध सम्बन्ध भी सम्भव होते हैं।

सातवें भाव का शनि दिक्‌बली होता है। अत: जन्म के समय गरीब हो तो भी जातक आयु बढ़ने के साथ-साथ धनवान होता जा सकता है (यदि शनि सप्तमेश भी हो तो अपने अशुभ फलों को सातवें घर के लिए कम कर लेता है)। ऐसे जातक

के पास अच्छी कमाई का जरिया बनता है, परन्तु जायदाद के सुख से जातक वंचित रहता है। प्राय: उसके पास अपने नाम से जायदाद/मकान नहीं होते। 'लाल किताब' के अनुसार ऐसा जातक अगर पराई औरतों के चक्कर में पड़े तो उसकी संतान के लिए अशुभ रहता है। अत: उसे सावधान रहना चाहिए क्योंकि सातवां शनि ऐसे कामों के लिए प्रेरित करता रहता है।

'लाल किताब' के अनुसार सप्तम भाव में शनि हो तो विवाह देर से होता है या अपने से बड़ी उम्र की पत्नी मिलती है। अथवा विजातीय (अपने से नीची जाति की अधिकतर) होती है। स्त्री जातकों में सातवां शनि बूढ़े पति या विधुर से विवाह कराता है। पति यद्यपि प्रेम करता है परन्तु वैधव्य भोगना पड़ता है। जलराशि या अग्निराशि में शनि हो तो जीवनसाथी सुहृद होता है। पति-पत्नी में वैमनस्य व वाक्‌युद्ध तो होता है किन्तु मेल हो जाता है। जलराशि का शनि हो तो गृहस्थ सुख अच्छा देता है, परन्तु अर्थाभाव भी देता है। खर्चे मुश्किल से पूरे होते हैं। स्वराशि, वृष या कन्या का शनि द्विभार्या योग बनाता है। जातक का तलाक होकर पुनर्विवाह होता है। सामान्य नियमानुसार गुरु की दृष्टि सप्तम भाव पर हो तो तलाक की नौबत नहीं आती।

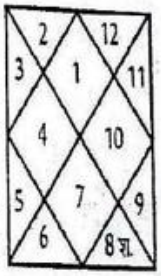

अष्टम भाव—शनि जन्मकुंडली में आठवें भाव में हो तो जातक दीर्घायु, अस्थिर बुद्धि/मूडी, बातूनी, कायर, धोखेबाज/झूठ बोलने वाला, गुप्तांग रोगी या गुदा रोगी, विद्वान होता है। ऐसे जातक को कुष्ठ रोग सम्भव होता है (यदि बुध, मंगल व चंद्र सबल हों तो नहीं)। शनि बलवान हो तो जातक लम्बी आयु भोग कर स्वाभाविक मौत मरता है। किन्तु बारहवां भाव खाली हो तो जीवन में आदि से अंत तक जातक को सुख प्राप्त नहीं होता।

लाल किताब के अनुसार आठवें शनि का प्रभाव अनिश्चित प्रकार का होता है। कब जीवन में शुभ असर देने लगे, कब अशुभ—पता नहीं चलता। शनि जब शुभ होता है तो जातक औरों के कल्याण में अपना कल्याण समझता है। यदि जातक शराब से दूर रहे तो आठवां शनि भी अशुभ प्रभाव नहीं दे पाता। शनि स्वग्रही या उच्च राशि का हो तो जातक को अपनी मृत्यु का पूर्वाभास हो जाता है और अन्तिम समय में वह स्वस्थचित्त रहता है। उसे दहेज भी अच्छा मिलता है। शनि यदि पाप प्रभाव में हो तो सरकार की ओर से दण्ड (विशेषकर जेल) का भय रहता है। ऐसे जातक के माता-पिता बचपन में ही मर जाते हैं या पिता को भारी हानि उठानी पड़ती है।

कर्क राशि का शनि सम्पत्ति व अधिकार दोनों ही प्राप्त कराता है। धनुराशि का शनि विवाह के बाद अशुभ फल देने वाला होता है। तब जातक धनोपार्जन

सुचारू रूप से नहीं कर पाता और खर्चे बढ़ जाते हैं। वृष, कन्या, तुला, कुभ, मीन राशियों में शनि नौकरी के लिए शुभ होता है। शेष राशियों में व्यवसाय के लिए शुभ होता है पर सम्पत्ति व सन्तान दोनों साथ-साथ नहीं मिलते। शनि क्षीण हो तथा उच्च के मंगल से दृष्ट हो तो कैंसर, भगंदर, पथरी जैसे रोग तथा ऑपरेशन के कारण मौत होती है।

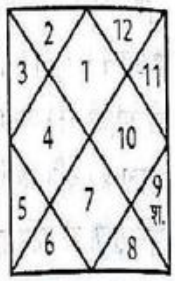

नवम भाव—लग्नकुंडली में शनि नौवें भाव में हो तो जातक धार्मिक, तन्त्र मंत्र आदि विषयों में रुचि लेने वाला, भाग्यवान, विद्याव्यसनी, विचारक, न्यायप्रिय, शांत चित्त, घूमने का शौकीन, अधिक बोलने वाला और प्राय: रोगी होता है। भाई-बहनों के लिए नौवां शनि मारक/घातक होता है। जातक के पिता के लिए भी शुभ नहीं होता।

लाल किताब में नौवें शनि को 'भाग्य विधाता' कहा गया है। ऐसे जातक के मरने से पूर्व तीन मकान (कम से कम) अवश्य हो जाते हैं (तीसरे मकान के बनने का समय उसके लिए अशुभ रहता है)। ऐसा जातक मकान बनाने/बनवाने में निपुण, दूसरों की पीड़ा समझने वाला तथा सुखी होता है। यदि जातक परोपकारी रहे तो शनि नौवें भाव में आजीवन शुभ फल एवं सुख प्रदान करता है। जातक की रुचि गुप्त विद्याओं, वेद पाठन/वेदांत में होती है। जातक विद्वान, शांत, विचारक व न्यायविद् होता है। धार्मिक संस्था का प्रवर्तक या विद्यालय का कुलपति होता है। पूर्वजों की सम्पत्ति उत्तराधिकार में मिलती है, जिसे जातक और बढ़ाता है। इस भाव का शनि अग्नि व जल राशियों में प्राय: शुभ रहता है।

जलराशियों में शनि जातक के भाइयों के लिए भी शुभ होता है (अन्य राशियों में अशुभ)। वायु तथा पृथ्वी राशियों में शनि प्राय: अशुभ रहता है। तब पूर्वार्जित सम्पत्ति मिलकर भी नष्ट हो जाती है, जीवन के उत्तरार्ध में आर्थिक अभाव व मन में अस्थिरता रहती है। मान हानि होती है। पिता दीर्घजीवी नहीं होते। यदि जीवित रहें तो पिता-पुत्र में अनबन रहे (दोनों साथ रहें तो प्रगति न कर सकें)। भाई-बहनों से भी अनबन हो। बंटवारे पर झगड़ा कोर्ट-कचहरी की नौबत रहे। प्रवास अधिक करना पड़े।

शनि अशुभ प्रभाव में हो तो विदेशवास में जातक को कष्ट होता है (सौतेली मां) विमाता, चित्तभ्रम, पागलपन, आवारागर्दी आदि दुष्फल होते हैं।

दशम भाव—शनि जब कुंडली के दसवें भाव में हो तो जातक न्यायप्रिय, परिश्रमी, संघर्षशील, धनी, सरकार से सम्मानित, नेता या धर्मनेता, उदर रोगी तथा माता-पिता से दूर रहने वाला/अलग हो जाने वाला होता है। (ऐसा जातक यद्यपि कर्मठ होता है, किन्तु देखा जाता है कि तरंग आने पर वह गधे की तरह काम में

जुटता है। तरंग न आने पर मगरमच्छ की तरह पड़ा भी रहता है।) ऐसे जातक की माता प्राय: कष्ट या दुख में रहती है तथा दाम्पत्य सफल नहीं रहता अथवा पत्नी से कलह या अनबन रहती है।

लाल किताब के अनुसार यदि दसवें शनि के साथ गुरु दूसरे भाव में भी हो तो जातक राजा की भांति जीवन जीने वाला तथा धनाढ्य होता है। शनि शुभ हो तो जातक जितना मान औरों को देता है, उतना ही उसे मिलता है। परन्तु यदि वह शराब पीए तो दसवां शनि अशुभ हो जाता है।

दसवें शनि के कारण प्राय: जातक को प्रारम्भ में आजीविका के लिए कठोर श्रम करना पड़ता है परन्तु बाद में लक्ष्य प्राप्त हो जाता है। ऐसे जातक को माता-पिता से अलग/दूर होना पड़ता है। साथ रहने पर वैमनस्य तो रहता ही है, पिता-पुत्र दोनों की प्रगति बाधित होती है (जातक को पैतृक सम्पत्ति प्राप्त नहीं होती, पिता को व्यावसायिक सफलता नहीं मिलती)। कारोबार बन्द हो जाता है या कर्जा लेकर चुकाना भारी हो जाता है। अग्निराशि में शनि गूढ़ शास्त्रों को पढ़ने की रुचि देता है। ऐसा जातक प्राय: अध्यापनवृत्ति से जीविका चलाता है।

अन्य राशियों का दसवां शनि जातक को पुजारी, धर्म प्रचारक, धार्मिक नेता, प्रवचनकर्त्ता, संन्यासी या ज्योतिषी बनाता है। ऐसा जातक औरों को उपदेश देता है किन्तु स्वयं उनका पालन नहीं करता। अशुभ प्रभाव का शनि पूर्व जन्मों के कर्मों के कारण कष्टकारी होता है। चन्द्र व शुक्र का अशुभ प्रभाव शनि पर हो तो जातक वृद्धावस्था में भी काम विकार से पीड़ित होता है।

एकादश भाव—यदि लग्नकुंडली के ग्यारहवें भाव में शनि बैठा हो तो जातक दीर्घायु, क्रोधी, सुखी, योगी, कर्मठ, व्यापार में सफल, विद्वान, शक्तिसम्पन्न किन्तु सन्तानहीन होता है। ऐसा मेरे सुयोग्य आचार्य श्री मदनमोहन कौशिक का मत है। गुरु श्री सुरेश दत्त शर्मा के अनुसार ग्यारहवां शनि जातक को बड़ा इंडस्ट्रियलिस्ट बनाता है। पाराशरी ज्योतिष की दृष्टि से भी शनि जिस भाव में बैठता है, उसकी वृद्धि करता है। ग्यारहवां भाव आय और लाभ का है। अत: ऐसे जातक को धनाढ्य तथा मोटी आमदनी वाला होना ही चाहिए। 'लाल किताब' के अनुसार भी ग्यारहवां शनि जातक को 'स्वयं अपना विधाता' बनाता है। यहां शुभ शनि हो तो जातक मिट्टी को भी हाथ लगाता है तो सोना हो जाती है। किन्तु अशुभ शनि हो तो ऐन विपरीत फल होता है। यानी सोना भी छू दे तो मिट्टी हो जाए।

ग्यारहवां शनि हो तो शुभ प्रभाव बढ़ाने के लिए घर में जलकुम्भ स्थापित

करना चाहिए। ग्यारहवां शनि क्योंकि सातवीं दृष्टि से पांचवें घर को देखता है, अत: जातक की सन्तान व शिक्षा के लिए अच्छा नहीं होता। प्राय: पत्नी के बांझपन/गर्भपात के कारण सन्तान का अभाव रहता है और जातक की शिक्षा में व्यवधान सम्भव होता है।

ग्यारहवां शनि यदि पीड़ित हो तो लाल किताब के अनुसार संतान कष्टदायक, मित्र से धोखा (क्योंकि दसवीं दृष्टि आठवें घर पर और तीसरी दृष्टि लग्न पर डालेगा) जातक को होता है। ऐसा जातक किसी को कर्ज दे तो पैसा वापस नहीं मिलता। सूर्य व चन्द्र से अशुभ योग हो तो जातक दरिद्र होता है। किन्तु शनि स्वराशि या उच्च का हो तथा शुभ सम्बन्ध बनाए तो जातक को उत्तरार्ध में अच्छी सम्पत्ति व धन लाभ दिलाता है। मिथुन राशि में शनि ग्यारहवां हो तो जातक को पुत्र की प्राप्ति नहीं हो पाती। अन्य राशियों में सन्तान तो होती है, किन्तु वैमनस्य होने से पिता-पुत्र साथ नहीं रह पाते। चर राशि में शनि हो तो मित्रों से हानि व धोखा मिलता है। द्विस्वभाव राशि में शनि जातक की सब आशाओं को निराशा में बदल देता है। स्थिर राशि में संघर्षपूर्ण जीवन देता है। वैसे ग्यारहवां शनि हो तो जातक की अपनी बनाई जायदाद कम ही होती है। प्राय: पिता की जायदाद ही मिलती है।

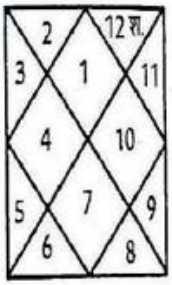

द्वादश भाव—शनि यदि लग्न कुंडली में द्वादश भाव में हो तो जातक लंठ बुद्धि, आलसी, रोगी, कटुभाषी, फिजूलखर्ची, बुरे आचरण वाला तथा माता के पक्ष (ननिहाल) के लिए खराब होता है। ऐसे जातक को पागलपन तथा जेलयात्रा का भी भय रहता है। नेत्र रोग संभव होता है। अगर जातक के सिर के बाल उड़ने लगें तो वह और भी सुखी तथा धनवान होता है। किन्तु झूठ बोले या स्त्रियों से नाजायज सम्बन्ध बनाए तो यहां का शनि अशुभ प्रभाव देने लगता है। ऐसा कुछ लाल किताब के जानकारों का मत है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक प्राय: एकांतप्रिय या संन्यासी प्रवृत्ति का होता है। बहुत बार उसे अपने कार्यों से ही हानि उठानी पड़ती है। अज्ञातवास/कारावास/विष से देह हानि तथा असत्य अभियोग का दण्ड मिलने की सम्भावना पूर्ण रूप से रहती है। शनि पापाक्रांत या हीनबल हो तो उपरोक्त सम्भावनाएं और भी तीव्र हो जाती हैं। किन्तु बलवान व शुभ शनि हो तो जातक कारागृह का अधिकारी, धर्मार्थ संस्था का कार्यकर्त्ता, चिकित्सालय/भिक्षागृह का प्रबन्धक बनकर लाभ प्राप्त करता है। गुप्त रीति से धनसंचय करता है। बुध के साथ शनि का अशुभ योग हो तो चित्त भ्रम/पागलपन सम्भव होता है। मंगल से अशुभ योग करे तो अपघात या आत्मघात सम्भावित होता है। बारहवां शनि जातक को प्राय: अडियल रवैये का भी बनाता है।

□□

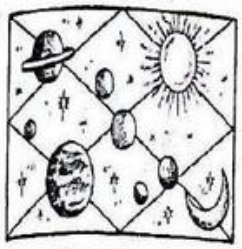

राहू का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—लग्नकुंडली के प्रथम भाव में राहू हो तो जातक स्वार्थी, शक्की, वहमी, कामुक, नीचकर्मा, कम संतान वाला, दुर्बल स्वास्थ्य वाला, शिरोरोग से पीड़ित, विद्रोही स्वभाव का लेकिन पढ़ाकू होता है। प्राय: ऐसा जातक, धनी व तरक्की करने वाला होता है (किन्तु कुंडली के जिस भाव में सूर्य बैठा हो, उस भाव से सम्बन्धित फलों का ह्रास होता है)। ऐसे जातक का सम्पूर्ण जीवन अंधकारपूर्ण नहीं होता। कोई पक्ष यदि खराब होता है तो कोई पक्ष काफी अच्छा भी हो जाता है। फिर भी ऐसे जातक को संघर्ष करना पड़ता है। जिससे वह अभिमानी हो जाता है। वैवाहिक जीवन के कलेश एवं वियोग सम्भावित होता है।

लाल किताब के अनुसार लग्न में राहू हो तो जातक दीन घर में जन्म लेकर भी संघर्ष करके ऊंचा स्थान पाता है। शिक्षा में व्यवधान या लापरवाही सम्भव है। पर जातक अभिमानी, शक्तिशाली, कीर्ति प्राप्त करने वाला व समाज की परवाह न करने वाला होता है। यदि पुरुष राशि (सिंह को छोड़कर) का राहू हो तो 'द्विभार्या योग' बनाता है। किन्तु स्त्री राशि (वृश्चिक को छोड़कर) में एक ही विवाह रहता है। मेष राशि में उदार, सिंह राशि में दयावान, धनु राशि में औरों से अलग रहने वाला, मकर व मीन में दूसरों के फटे में टांग अड़ाने वाला तथा मिथुन, तुला और कुम्भ राशियों में राहू हो तो जातक मीन-मेख निकालने वाला, छिद्रान्वेषी होता है।

उच्च का राहू (वृष/मिथुन) जातक को साहसी बनाता है व शत्रुओं का मान-मर्दन करने वाला होता है। ऐसे जातक की नाक चौड़ी होती है (वृष में विशेष रूप से)। शुक्र व चन्द्र भी राहू के साथ लग्न में हों तो जातक प्रेम विवाह करता है। लग्नस्थ राहू गुप्तांग सम्बन्धी कोई विकार भी दे सकता है।

स्त्री जातकों में लग्नस्थ राहू जातक को बातूनी, ऊंचा बोलने वाली, कलेश कारिणी, फूहड़ तथा सामंजस्य न करने वाली बनाता है। ऐसी जातक को गुप्तांग/गर्भाशय या माहवारी सम्बन्धी तकलीफ रहती है। वह सन्तान उत्पन्न करने में या तो अक्षम होती है या परेशानी से सन्तान प्राप्त होती है। चन्द्रमा भी पाप प्रभाव में हो तो ऐसी जातक का चरित्र भी संदिग्ध होता है। लग्नस्थ राहू तलाक या वैधव्य

योग भी बनाता है। सप्तमेश भी निर्बल और पाप प्रभाव में हो तो ऐसा होना लगभग सुनिश्चित हो जाता है।

मेरा अपना अनुभव है कि राहू के अशुभ प्रभाव से यदि लग्न या जातक प्रभावित हो तो उसके ऊपर के दांत बाहर को निकले हुए, चौड़े या टेढ़े होते हैं। ऐसी जातक एक नम्बर की अड़ियल बुद्धि की, मूर्ख, झगड़ालू, बहस करने वाली तथा चिल्लाकर बोलने वाली होती है। ऐसी जातक का विवाह तो देर से होता ही है, सफल भी नहीं रहता। विधवा हो या तलाक हो, पति लापता हो जाए या अलग रहने लगे—कारण जो भी हो—उसे पति का वियोग झेलना ही पड़ता है तथा स्थिति दैन्य हो जाती है। सन्तान होती है, परन्तु गर्भाशय, गुप्तांग या गुदा में कोई न कोई रोग स्थायी रूप से बना रहता है। किन्तु ऐसी जातक साहसी तथा स्वयं काम करके जीवनयापन कर सकने वाली अवश्य होती है। तथा पुरुषोचित गुणों से युक्त होती है। यदि शनि का भी प्रभाव शामिल हो तो रंग कालिमायुक्त, दांत बड़े व फैले हुए तथा शरीर पर बाल अधिक होने भी सम्भव हो जाते हैं। ऐसी महिलाओं को प्राय: दासवृत्ति (घर की नौकरी/बर्तन-पौंचे आदि का कार्य) द्वारा जीवनयापन करना पड़ता है। गुस्सा व अभिमान उनमें बहुत होता है तथा एक से अधिक शारीरिक सम्बन्ध तीव्रता से सम्भावित होते हैं। ऐसी महिला जातकों की रुचि मैथुन (मुख या गुदा मैथुन आदि) में विशेष रहती है।

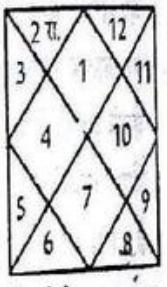

द्वितीय भाव—लग्नकुंडली के दूसरे भाव में राहू हो तो जातक कुटुम्ब से अलग रहने वाला, विदेश में प्रसिद्धि व समृद्धि प्राप्त करने वाला, कटुभाषी/गाली-गलौच करने वाला, कंजूस व अल्प संतान वाला होता है। ऐसा जातक भक्ष्य-अभक्ष्य का सेवन करने वाला/मांसाहारी हो सकता है। यदि सूर्य द्वितीयेश भी पाप प्रभाव में हो तो नेत्ररोगी भी हो सकता है। ऐसे जातक का धन या सामान भी चोरी हो सकता है। वह मदिरा सेवन करने वाला होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक का भाग्य एक झूले की भांति झूलता रहता है। प्राय: उसकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं रहती, किन्तु गुरु की स्थिति सुदृढ़ हो तो जातक आर्थिक रूप से अच्छा होता है (क्योंकि गुरु की कुंडली में जैसी स्थिति होती है दूसरा राहू जातक को वैसा ही आर्थिक फल देता है)। तब जातक की हैसियत राजा के समान भी हो सकती है। दूसरे राहू का अशुभ प्रभाव दूर करने के लिए जातक को चांदी की ठोस गोली सदा अपने पास रखनी चाहिए मटर बराबर।

राहू द्वितीयस्थ हो तो जातक स्वार्थी, आर्थिक रूप से सुदृढ़ नहीं, मांस-मदिरा का सेवन करने वाला तथा विशेष परिश्रम करने पर ही सफल होने वाला

होता है। ऐसा लाल किताब का भी मत है। ऐसे जातक को परदेस में ही जीविका मिलती है। जो काम करें उसमें अड़चनें जरूर आती हैं। पाप प्रभाव में राहू हो तो जातक गालियां देने वाला या वाणी दोषयुक्त/अपनी बात ढंग से न कह सकने वाला, मुखरोगी तथा बड़ी नाक वाला होता है। मिथुन, कन्या या कुम्भ राशि का राहू हो तो दूसरे घर में प्राय: शुभ फल देता है। सिंह राशि का हो तो गड़ा हुआ धन प्राप्त होता है। स्त्री राशियों में पूर्वजों की सम्पत्ति प्राप्त कराता है। पुरुष राशियों में पूर्वजों की सम्पत्ति नहीं मिलती लेकिन बिना कमाया धन मिलता है। पंचमेश की स्थिति सुदृढ़ हो तो जुआ, सट्टा, लॉटरी आदि से भी जातक को लाभ होता है। द्वितीयस्थ राहू दाईं आंख में भेंगापन दे सकता है।

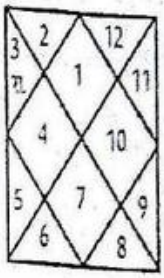

तृतीय भाव—राहू लग्नकुंडली के तीसरे भाव में हो तो जातक के लिए शुभ ही रहता है। ऐसा जातक महाबली, पराक्रमी, शत्रुओं को जीतने वाला, दीर्घायु, विद्वान, जन्मस्थान से दूर रहने वाला, धनाढ्य होता है। ऐसे जातक के योगी होने की सम्भावना भी होती है। मेरे ज्योतिषीय गुरु तथा लाल किताब के मर्मज्ञ श्री सुरेश दत्त शर्मा जी के अनुसार तृतीयस्थ राहू जातक को अन्तर्प्रेरणा प्रदान करता है। ऐसे जातक को घटने वाली घटना का पूर्वाभास हो सकता है या स्वप्न में वह जो देखे वो सच होता है। किन्तु उसे कानूनी कागजों पर हस्ताक्षर करते समय सतर्कता रखनी चाहिए। जातक इस प्रकार के मामलों में फंस सकता है या धोखे का भी शिकार हो सकता है। (विशेषकर तब जब राहू अशुभ स्थिति में हो। क्योंकि तब उसके भाई और रिश्तेदार उससे धोखा करते हैं। उसके धन को हड़पते या बर्बाद करते हैं।) ऐसा जातक किसी को कर्ज दे तो धन वापस नहीं आता।

लाल किताब के अनुसार तृतीयस्थ राहू यदि सिंह राशि में हो तो विशेष रूप से फलदायी होता है। तृतीयस्थ राहू जातक को साहसी, वीर, शत्रुजित्, शक्तिशाली किन्तु संदेही बनाता है। मानसिक तनाव से ग्रस्त रखता है। ऐसे जातक में कल्पनाजीवी होने या दिवास्वप्न देखने की प्रवृत्ति हो सकती है। वह त्वरित निर्णय नहीं ले पाता। भाइयों के लिए तीसरा राहू अशुभ प्रभाव देता है (भाई होता नहीं। होता है तो मर जाता है अथवा भाई को सन्तान कष्ट बना रहता है)। पुरुष राशि का राहू जातक के भाइयों के लिए विशेष रूप से मारक या घातक होता है। स्त्री राशि का राहू प्राय: शनि जैसे ही फल देता है किन्तु जातक की बहनों के लिए मारक होता है। फिर भी ऐसे जातक की विशेषता यह होती है कि वह 'हाय'/श्राप देने में समर्थ होता है। वह किसी को बद्दुआ देता है तो उसकी बद्दुआ फलीभूत हो जाती है।

चतुर्थ भाव—राहू यदि लग्नकुंडली के चौथे भाव में हो तो जातक माता की

ओर से दुखी, झूठा तथा दुखद घरेलू जीवन वाला होता है। माता का स्वास्थ्य नरम रहता है। ऐसा जातक बाहर से भले ही शांत दिखाई दे भीतर से संतप्त होता है। धन-सम्पदा सम्बन्धी चिन्ताएं बनी रहती हैं। ऐसा व्यक्ति वहमी हो सकता है या अनजाने भय से भयभीत रह सकता है।

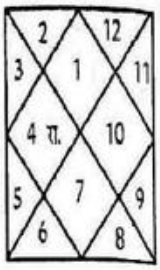

लाल किताब के अनुसार चौथा राहू जातक की सौतेली माता या पिता की दूसरी पत्नी की सूचना देता है। जातक चिंतित व अशांत रहता है। यदि कुंडली में चन्द्रमा की स्थिति शुभ हो तो धन-दौलत की कमी नहीं रहती। अशुभ स्थिति में चित्तभ्रम, भय, संतप्त होना आदि दुष्परिणाम विशेष होते हैं। पिता से अलगाव तथा कार्यक्षेत्र में बाधाएं आती हैं। घर में कोयलों का ढेर होना, पाखाने की सीट या घर की मात्र छत का बदला जाना अशुभ राहू का लक्षण होता है। प्राय: 45 वर्ष की आयु से राहू व केतु के अशुभ प्रभाव समाप्त होने लगते हैं। मेष, वृष, मिथुन, कर्क राशियों में चौथा राहू प्राय: शुभ फल देता है। ऐसे जातक को प्रवास अधिक करना पड़ सकता है तथा 36 से 54 वर्ष के भीतर सफलता प्राप्त होती है।

पुरुष राशि का राहू 'द्विभार्या योग' बनाता है। जातक को विचित्र चमत्कार या विचित्र घटनाएं देखने व भोगने को मिलते हैं। मिथुन, कन्या व सिंह राशि में सन्तति के अभाव के कारण जातक को दूसरा विवाह करना पड़ता है। यद्यपि सम्पत्ति मिलती है, परन्तु सन्तान लाभ रहता है। चन्द्र व सूर्य पाप प्रभाव में हों तो जातक के माता-पिता की आकस्मिक मृत्यु भी हो जाती है। राहू चतुर्थ हो और चतुर्थेश शनि के साथ हो (शनि की स्वराशि में) तो दरिद्रता होती है। राहू चतुर्थस्थ हो और सूर्य के साथ मंगल बैठा हो तो भी दरिद्रता होती है। राहू चौथे भाव में मंगल के साथ हो अथवा शनि व चन्द्र से अशुभ योग करे तो जातक विष खाकर आत्महत्या करता है। स्त्रीराशि में राहू हो तो एक ही पत्नी (विवाह) होता है तथा सन्तान भी प्राप्त होती है। पत्नी भी गुणवती व आज्ञाकारिणी होती है, किन्तु व्यवसाय में हानि होती है। ऐसे जातक को नौकरी या साझे में लाभ होता है। अशुभ राहू हो तो सन्तान अवैध ढंग से ही मिलती है।

स्त्री जातक में राहू के साथ चन्द्रमा भी बैठे तथा चतुर्थ भाव पर पाप प्रभाव भी हो तो जातक व्यभिचारिणी होती है। साथ ही शुक्र व बुध की युति जातक के चरित्र को अति नीच बना सकती है।

विशेष—चतुर्थेश व चन्द्र नीच राशि में हों/अस्त हों/6, 8, 12 भाव में हों, तथा पाप ग्रहों से दृष्ट हों और राहू चौथे भाव में बैठा हो तो जातक की माता शीघ्र ही मर जाती है।

पंचम भाव—राहू यदि लग्नकुंडली के पांचवें भाव में हो तो जातक भाग्यवान

तथा शास्त्रज्ञ होता है। किन्तु उदर रोगी, पैतृक सम्पत्ति को नष्ट करने वाला होता है। ऐसे जातक की पत्नी गर्भपात की समस्या से पीड़ित हो सकती है, क्योंकि पांचवां राहू संतान के लिए अशुभ होता है। ऐसा ही मत मेरे सुयोग्य आचार्य कौशिकजी का है।

पांचवां राहू जातक की शिक्षा में व्यवधान पैदा करने वाला हो सकता है। यदि सूर्य एवं सिंह राशि पाप प्रभाव में हो तथा पंचमेश भी निर्बल या पीड़ित हो तो पांचवां राहू हृदय रोग या हार्टअटैक भी करा सकता है। पांचवां राहू जातक की संगति को निम्न कोटि का बनाता है। ऐसा जातक कुमार्गी होता है। भाग्य व संतान के साथ जातक की मति व आय ये सभी पांचवें राहू से प्रभावित होते हैं। अत: पांचवां राहू जातक को भाग्यवान नहीं बना सकता। ऐसा मेरा अपना दृष्टिकोण है।

लाल किताब के अनुसार पांचवां राहू जातक को शरारती स्वभाव देता है। कम से कम अपनी एक संतान के सम्बन्ध में जातक को चिंता अवश्य रहती है। जब तक जातक की मां जीवित रहती है, जातक के पास धन व संतान की दृष्टि से बरकत रहती है, क्योंकि तब तक राहू अशुभ प्रभाव नहीं देता। राहू अशुभ हो जाए तो जातक के स्वास्थ्य को अचानक बिगाड़ कर व्यर्थ के खर्च बढ़ाता है। तब जातक संतानाभाव तथा राजदण्ड के भय को झेलता है। ऐसा जातक नीच संगति में प्रसन्न रहता है तथा कुमार्गी हो जाता है। ऐसे जातक को चांदी का ठोस हाथी (मूर्ति/खिलौना) अपने पास/घर में रखना शुभ होता है।

पांचवें राहू का चन्द्रमा से अशुभ योग हो तो जातक के सन्तान होती ही नहीं, हो भी जाए तो जिन्दा नहीं रहती। शत्रु ज्यादा, दोस्त कम होते हैं। गृहकलह, चिन्ता तथा हृदय रोग सम्भव होते हैं, फिर भी जातक हार नहीं मानता। स्त्री व संतान के सुख में पांचवां राहू बाधक बनता है। पत्नी होती नहीं, होती है तो रोगिणी रहती है। अत्यधिक पाप प्रभाव हो तो पांचवां राहू जातक के लिए 'विवाह प्रतिबन्धक योग' भी बनाता है। ऐसे जातक के बड़ी आयु की एवं नीच जाति/स्तर की महिलाओं से अवैध सम्बन्ध रहते हैं। पुरुष राशि का राहू जातक को घमंडी तथा असफल बनाता है, जिस शिक्षा या व्यवसाय के योग्य जातक होता है, वह उसे प्राप्त नहीं हो पाते। किन्तु स्त्री राशि का राहू जातक को शांतिप्रिय, विदेशी, यशस्वी बनाता है। ऐसा जातक अच्छी शिक्षा व अच्छे लेख वाला होता है तथा विवाह होने पर उसे संतान की प्राप्ति भी होती है।

विशेष—मेरे सुयोग्य आचार्य कौशिकजी और मेरे बीच का यह विरोध (कि पांचवां राहू जातक को भाग्यवान, शास्त्रज्ञ बनाता है)—मेरे गुरु समर्थ ज्योतिर्विद श्री एस. डी. शर्मा यह कहकर दूर करते हैं कि यदि पांचवां राहू स्त्री राशि में है तथा पंचमेश व नवमेश बली है तो जातक शास्त्रज्ञ व भाग्यवान हो सकता है। लाल किताब उनके मत को पुष्ट करती है।

षष्ठ भाव—छठे भाव में बैठा राहू जातक को धनी, दीर्घायु, साहसी, प्रसिद्ध, विदेशियों से लाभ कराने वाला तथा शत्रुहन्ता किन्तु कमर दर्द का रोगी भी बनाता है। ऐसा जातक प्राय: चौपाए पशु पालकर धनी बनता है। नीच व्यवसाय का इच्छुक होता है। मामा की संतान के लिए अशुभ तथा दाद, मिरगी, नजर लगना या प्रेतव्याधि से पीड़ित हो सकता है। ऐसे जातक को नखविष की पीड़ा भी सम्भावित होती है।

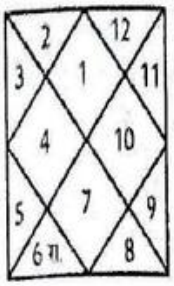

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक शत्रुओं के लिए साक्षात् काल होता है, किन्तु उसकी बाल्यावस्था कष्ट में बीतती है। पाराशरी मत के साथ लाल किताब का मत साम्यता रखता है। लाल किताब छठे राहू को 'मुसीबतों की रस्सी काटने वाला चूहा' कहकर भी पुकारती है। ऐसा जातक दिमागदार व चतुर होता है। राहू अशुभ हो तो जातक के ससुराल पक्ष तथा मामा-मौसी आदि को प्रभावित करता है। जिसका राहू छठे भाव में हो उसे अपने भाई के साथ मार-पीट नहीं करनी चाहिए अन्यथा जातक को राहू के फल अशुभ प्राप्त होने लगते हैं। ऐसा लाल किताब का मत है।

छठा राहू यदि स्त्री राशि में हो तो जातक को प्राय: अधिक शुभ रहता है। ऐसे जातक को पहलवानी में सफलता मिलना सम्भावित होता है तथा शरीर भी निरोगी होता है। ऐसे जातक की स्त्री पतिव्रता होती है। पर जातक की नौकरी व पत्नी के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में यह राहू शुभ नहीं होता। आकस्मिक रोगों या पिशाच पीड़ा से जातक की पत्नी की मृत्यु भी हो सकती है।

छठा राहू जातक को कार्यक्षेत्र में आलसी या अस्थिर बना सकता है। दशमेश भी पीड़ित हो तो व्यवसाय या आजीविका में अड़चन व पिता के लिए अशुभ फल दे सकता है। जातक की प्राय: कुटुम्ब से नहीं बनती।

सप्तम भाव—यदि लग्नकुंडली के सातवें भाव में राहू हो तो स्त्री और पुरुष दोनों जातकों के लिए ही बहुत अशुभ होता है। स्त्री जातकों में सातवां राहू गर्भ, मूत्र या गुप्तांग सम्बन्धी विकार देता है तथा पति से तलाक की स्थिति बनाता है। वैवाहिक जीवन को कलहकारी बनाता है। तलाक न भी हो तो वियोग अवश्य होता है।

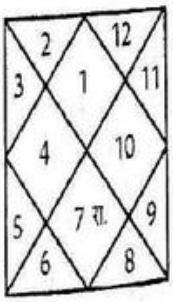

पुरुष जातकों को सातवां राहू व्यापार में हानि, धन-दौलत की बर्बादी, पत्नी की मृत्यु/वियोग (प्राय: विधुर होना पड़ता है), अनैतिक सम्बन्ध, अनैतिक कार्य, लालच, आवारापन, एक से अधिक विवाह (यदि विवाह 21 वर्ष की आयु में ही, जो प्राय: कम सम्भव होता हो तो विवाहोपरांत ससुराल पक्ष वाले बर्बाद हो जाते हैं)। आदि दुष्परिणाम देता है। जातक पैसा होने पर भी परेशान ही रहता है।

लाल किताब के अनुसार सातवां राहू पूर्व जन्म के दुष्कर्मों का परिणाम होता है। ऐसे जातक का विवाह नहीं होता (अड़चनें आती हैं, विवाह नहीं होता या विलम्ब से होता है), होता है तो पति-पत्नी में प्रेम नहीं रहता, कलेश होता है। अन्तत: तलाक या वियोग होता है। प्राय: सातवां राहू अन्तर्जातीय विवाह कराता है। विवाह में देर होती है, पत्नी दूसरे धर्म की (प्राय: अपने से नीची जाति की) या आयु में बड़ी होती है। अथवा पुनर्भू होती है। सातवां राहू विधवा, परित्यक्ता या नीच कुल की स्त्रियों से अवैध सम्बन्ध बनवाता है। ऐसा जातक पत्नी को मात्र वासनापूर्ति का माध्यम ही समझता है तथा वह प्राय: नीच रति में सुख मानता है।

यदि सातवां राहू स्त्री राशि में हो तो अपेक्षाकृत शुभ होता है। बाकी दिक्कतें तो बनी रहती हैं (कम या ज्यादा), किन्तु जातक का विवाह शीघ्र हो सकता है तथा विवाह के बाद पत्नी के साथ सामंजस्य भी बना रहता है (वियोग तो सम्भव होता है किन्तु तलाक का भय कम हो जाता है)।

अष्टम भाव—लग्नकुंडली के आठवें भाव में राहू हो तो जातक क्रोधी, कामुक और बड़बोला होता है। उसको गुप्तरोग सम्भावित होते हैं। भाग्य की स्थिति डांवाडोल होती है। यदि अष्टम राहू अशुभ हो तो जातक को बुढ़ापे तक भी सुख नहीं मिलता। ऐसा जातक यदि बेईमानी से धन कमाए तो उसके धन में 8 गुना कमी आ जाती है। किन्तु यदि कुंडली के बारहवें भाव में मंगल हो तो आठवां राहू अशुभ नहीं होता। ऐसा लाल किताब का मत है।

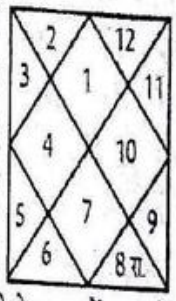

लाल किताब के अनुसार पुरुष राशि का आठवां राहू जातक के दाम्पत्य जीवन को नरक तुल्य बनाता है। पत्नी क्लेश करने वाली व संदिग्ध चरित्र की होती है। ऐसा जातक नैतिक/अनैतिक का विचार न कर धनोपार्जन की धुन में रहता है। राजकीय नौकरी हो तो रिश्वत अवश्य लेता है (यद्यपि पुरुष राशि में आठवें राहू वाला जातक यदि रिश्वत लेता है तो पकड़ा जाता है तथा दण्ड भुगतता है)। ऐसे जातक की मौत बेहोशी में होती है।

स्त्री राशि में राहू आठवें घर में हो तो फल विपरीत हो जाते हैं। पत्नी अच्छी मिलती है किन्तु जीवन के अन्त में जातक विधुर हो जाता है। मृत्यु का उसे पूर्वाभास हो जाता है। मरते समय चेतना बनी रहती है। जातक प्राय: स्वतंत्र व्यवसाय करता है। यदि नौकरी में हो तो रिश्वत जरूर लेता है किन्तु पकड़ा नहीं जाता।

आठवां राहू जातक को मांस-मदिरा सेवी, खाद्यादि में अन्तर न करने वाला, गाली-गलौच करने वाला या कटुभाषी तथा गुदा रोगी भी बनाता है। प्राय: बवासीर से पीड़ा होती है। अपने कुटुम्ब से ऐसे जातक की नहीं बनती। यदि सूर्य दुर्बल या पापाक्रांत हो तथा द्वितीयेश भी निर्बल हो तो नेत्र रोग या नेत्र विकार सम्भव होता है (विशेष कर बायां नेत्र)।

स्त्री जातक की कुंडली में आठवें भाव में बैठा हुआ राहू जातक को वैधव्य योग प्रदान करता है। यदि सप्तमेश, सप्तम भाव तथा गुरु दुर्बल या पाप प्रभाव में हो तो जातक जरूर विधवा हो जाती है।

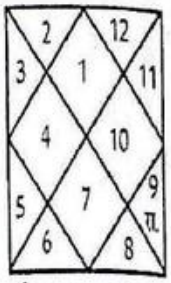

नवम भाव—लग्नकुंडली के नवम भाव में राहू बैठा हो तो जातक का भाग्योदय प्राय: 40 वर्षों के बाद (42वें साल में) ही होता है। ऐसा जातक, जालसाज, अविश्वस्त, धोखेबाज, ढोंगी, पाखंडी (धार्मिक आचरण करे तो भी दिखावे के लिए करे) तथा तीर्थ यात्राएं करने वाला होता है (यद्यपि भक्तिभाव से नहीं करता)। ऐसे जातक को अक्सर जन्मस्थान से दूर जाना पड़ता है। जातक के भाइयों व सन्तान के विषय में भी नौवां राहू शुभ नहीं होता। ऐसा जातक धर्म के लिए घातक होता है। ईमानदार तो बिल्कुल ही नहीं होता। लेकिन पागलों का अच्छा डॉक्टर हो सकता है। अशुभ प्रभाव में हो तो संतान पैदा नहीं होती या मरी हुई पैदा होती है या होते ही मर जाती है।

लाल किताब के अनुसार नौवां राहू हो तो जातक को अपने खून के रिश्तेदारों से मुकदमेबाजी करना संतान के लिए शुभ नहीं होता। नौवां राहू जातक में विदेश यात्रा की अदम्य इच्छा पैदा करता है, जो कम ही पूर्ण होती है। ऐसे जातक के भाई प्राय: नहीं होते, या मर जाते हैं। धन हानि होती है। पत्नी से विशेष मोह रहता है अत: पत्नी के कारण मां-बाप आदि बुजुर्गों का निरादर करता है। बेईमान व अधर्मी होता है।

वायुराशि का राहू हो तो जातक को या तो विवाह की इच्छा ही नहीं होती (शुक्र व मंगल की स्थिति विचार कर निर्णय ले सकते हैं) या इतनी उतावली करता है कि जाति, वर्ण तथा आयु का भी ध्यान नहीं रखता। स्त्री पर अपना इतना हक समझता है कि उसका अपने भाई या पुत्र के प्रति प्रेम भी बर्दाश्त नहीं करता है। अग्निराशि का राहू जातक को व्यवहारकुशल, दूसरों का मान करने वाला बनाता है। पर पुत्र सन्तान की ओर से चिंता रहती है। प्राय: पुत्र पाने के लिए दूसरा विवाह करता है। स्त्री राशि का राहू सन्तान अधिक देता है, पर उनमें जीवित प्राय: कम ही रहती हैं। ऐसे जातक की प्रथम सन्तान प्राय: कन्या होती है। जातक दीर्घायु होता है। परन्तु बहनों के लिए अशुभ रहता है।

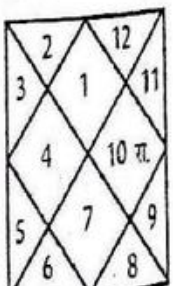

दशम भाव—राहू जब लग्नकुंडली के दसवें भाव में हो तो जातक को राजनीति में विशेष रुचि प्रदान करता है। ऐसा जातक कुछ आलसी, वाचाल (बहुत बोलने वाला), मूड़ी (अनियमितता से चलने वाला), उच्छृंखल, संतान से दुखी तथा धर्म के मामले में कुछ वहमी-सा होता है। यदि अन्य शुभ योग हों तो जातक राजनीति में प्रवेश कर निश्चित रूप से विधान

सभा/संसद का सदस्य बनता है। अनेक नेताओं की कुंडलियों में दशमस्थ राहू पाया गया है। (पाठकों की सुविधा, विश्वास व ज्ञान वृद्धि के लिए कुछ नेताओं की कुंडलियां भी पुस्तक में दी गई हैं। पाठक कन्फर्म कर सकते हैं)। दसवां राहू यद्यपि जातक की माता के लिए कष्टकारी होता है। (विशेष स्थितियों में पिता का सुख भी अल्प कर देता है)। अशुभ राहू हो तो जातक की माता, धन तथा कार्यक्षेत्र पर विशेष खराब प्रभाव डालता है।

लाल किताब के अनुसार भी दसवां राहू राजनीति का कारक होने से उस ओर जातक की रुचि बनाता है। यदि शुभ योगों के अभाव में जातक नेता न भी बन सके तो भी राजनीतिज्ञ तो होता ही है तथा राजनीतिज्ञों के निकट सम्पर्क में रहता है। (लग्न, लग्नेश, दशम, दशमेश—चारों यदि राहू से प्रभावित हों तो व्यक्ति शत-प्रतिशत राजनेता होता है) ऐसे जातक को पिता का सुख अल्प होता है तथा वात रोगों की तीव्र सम्भावना होती है।

मीन राशि का दशमस्थ राहू जातक को अति कामुक, परस्त्री भोगी बनाता है। पुरुष राशि का राहू अभिमानी, बातूनी, अलग रहने वाला तथा समाज में अविश्वसनीय बनाता है। स्त्री राशि का राहू हो तो पूर्वजों की सम्पत्ति जातक को नहीं मिलती, मिलती है तो जातक नष्ट कर देता है। पूर्वायु में कष्ट भोगने के बाद प्रगति होती है। मध्यायु में धनपुत्र आदि का सुख प्राप्त हो जाता है।

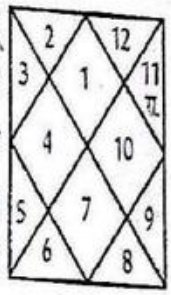

एकादश भाव—लग्नकुंडली के ग्यारहवें भाव में राहू हो तो जातक अल्प सन्तान वाला, विदेश से धन लाभ की सम्भावनाओं से युक्त, दीर्घायु, परिश्रमी किन्तु अवैध/अनैतिक तरीके से धन कमाने वाला होता है। यहां का राहू अशुभ हो तो जातक के पिता/दादा पर बुरा प्रभाव डालता है (स्त्री जातकों में अशुभ हो तो ससुर पर प्रभाव डालता है)। जातक लम्बे समय तक उनके साथ नहीं रह पाता।

लाल किताब के अनुसार ग्यारहवां राहू संतान के लिए अशुभ होता है। भाइयों तथा गृहस्थ के सुख में भी अड़चन डालता है। पुरुष राशि का राहु जातक को नीच संगति वाला, चतुराई से दूसरों का धन हरने वाला (ठग), राज्य कर्मचारी हो तो रिश्वतखोर बनाता है। ऐसे जातक को लाभ के अनेक अवसर मिलते हैं जो प्राय: अनैतिक होते हैं। ऐसा जातक लोभी, यशस्वी और अग्रणीय बनाता है। जुए, लॉटरी, सट्टे का व्यसन होता है। किन्तु सन्तान में बाधा रहती है। या तो होती नहीं या गर्भस्राव हो जाता है। हो जाती है तो कम आयु में मर जाती है। (शुभ दृष्टियों के प्रभाव से बच भी जाए तो बड़े होकर जातक को अपमानित करती है।) यानी सन्तान से सुखी नहीं मिलता। जातक का धन जुए आदि अनैतिक कामों में ही नष्ट

होता रहता है। स्त्री राशि का राहू हो तो जुए, सट्टे आदि से भी लाभ करा देता है।

स्त्री राशि में राहू हो तो जातक के मित्र अच्छे होते हैं। तांत्रिकों, ज्योतिषियों आदि से सम्बन्ध होते हैं। जुए, लॉटरी आदि से धन संचय होता है, किन्तु कन्याएं अधिक होती हैं। अत: प्राय: दहेज में अधिकांश धन चला जाता है। ग्यारहवां राहू कन्धे/भुजा, कण्ठ, हृदय, उदर तथा गुप्तांग सम्बन्धी रोग देता है। प्राय: स्मगलरों, तस्करों, ठगों, जालसाजों, घोटाले करने वालों तथा 420 की कुंडलियों में राहू ग्यारहवां ही होता है। भ्रष्ट नेताओं में भी यह मिल सकता है।

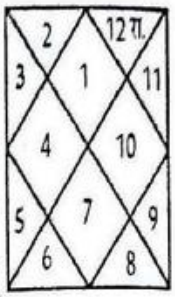

द्वादश भाव—राहू यदि बारहवें भाव में लग्नकुंडली में हो तो जातक पतित, चरित्रहीन, अनैतिक सम्बन्धों वाला मूर्ख/जड़मति तथा कामुक होता है। ऐसा जातक प्राय: नीचरति या मुख मैथुन में रुचि रखता है। ऐसा जातक कल्पनाजीवी/शेखचिल्ली स्वभाव का हो सकता है। यदि राहू शुभ प्रभाव में हो तो जातक को रात को नींद अच्छी आती है और उसकी ससुराल प्राय: पैसे वाली होती है। राहू अशुभ हो तो रातों की नींद हराम होती है। भारी परिश्रम के बाद खाना नसीब होता है। उम्मीदों के सहारे जीवन कटता है। लाल किताब के मत से कुंडली में बुध ग्रह जिस स्थिति में हो तदानुसार ही राहू बारहवें घर में फल देता है।

पुरुष राशि का बारहवां राहू नेत्र रोग (फूला/जाला/मोतियाबिन्द/दृष्टिमंदता आदि), पैरों में चोट लगने से पीड़ा आदि समस्याएं देता है। जातक बकवादी, दुष्टों की संगति में पैसा बर्बाद करने वाला तथा व्यभिचारी होता है। शय्या सुख अल्प तथा तलाक भी सम्भव होता है।

स्त्री राशि का राहू अपेक्षाकृत शुभ फल देता है। फिर भी जातक का पुनर्विवाह सम्भव होता है। जन्मभूमि से उसे सफलता नहीं मिलती, विदेशवास करना पड़ता है। अच्छा कमाता है लेकिन अनाप-शनाप खर्च करता है। अध्यात्म में रुचि फिर भी बनी रहती है। दाम्पत्य सफल नहीं होता।

विशेष (अपनी बात)—राहू भ्रम का कारक है। भ्रम ही अज्ञान/माया है। अत: राहू मोह का भी कारक होता है (बुद्धि भ्रमित/मोहित करता है)। बारहवां केतु ज्योतिष शास्त्र में मोक्ष का कारक माना जाता है (केतु के मोक्ष के कारक होने के सम्बन्ध में पहले पुस्तक के प्रारम्भ में केतु के परिचय में चर्चा हो चुकी है)। अत: उससे एकदम विपरीत ग्रहण के कारक राहू को बारहवें भाव में बन्धन या संसार में पुन: आगमन का कारक/प्रतीक माना जाना चाहिए (अभी विचाराधीन तथ्य है)।

□□

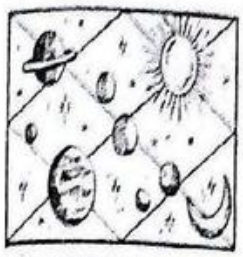

केतु का द्वादश भावफल

प्रथम भाव—यदि केतु लग्न (प्रथम भाव) में हो तो जातक का मन चंचल/अस्थिर होता है। ऐसा जातक भयभीत/घबराए हुए चित्त वाला, स्त्री व पुत्र की चिन्ता से ग्रस्त, प्राय: नास्तिक, भ्रमित चित्त, कायर, क्रूर, अल्पायु, बन्धुओं से मनमुटाव रखने वाला तथा वात व्याधि से पीड़ित होता है। मेरे सुयोग्याचार्य श्री कौशिक के अनुसार ऐसा जातक बहुत बड़ा मूर्ख होता है। बशर्ते की जातक वृश्चिक लग्न का न हो। क्योंकि वृश्चिक राशि का केतु शुभ फल प्रदान करने वाला होता है।

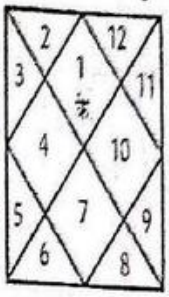

लाल किताब के अनुसार लग्नस्थ केतु के फल प्राय: अशुभ होते हैं। उसे दुर्जनों से भय, वातरोग भय तथा चित्त भ्रम एवं घबराहट बनी रहती है। लग्नस्थ केतु जातक के विवेक, शिक्षा, संतान, दाम्पत्य सुख तथा भाग्य पर बुरा असर डालता है। यदि केतु शत्रु या नीच राशि में या पाप ग्रहों से युक्त/दृष्ट होकर अशुभ हो तो जातक के विचार दूषित तथा स्वभाव अत्यंत विचित्र व अस्थिर हो जाता है। शत्रु भय उसे सदैव बना रहता है। उसके पड़ोसी तक अशुभ प्रभावों को झेलते हैं। किन्तु यदि बारहवें घर में मंगल बैठा हो तो लाल किताब के जानकारों के मत से लग्नस्थ केतु कभी अशुभ नहीं होता।

केतु शुभ हो तो जातक सदा ईश्वर एवं पिता की सेवा करने वाला होता है। ऐसे जातक को समाज के बच्चों की विशेष चिंता रहती है। सिंह राशि में केतु हो तो जातक का वैभव राजा के तुल्य होता है। मकर या कुंभ राशि में हो तो जातक को पुत्र तथा अचल सम्पत्ति दोनों प्राप्त होते हैं। यदि शुक्र व चन्द्र भी केतु के साथ लग्न में ही हों तो जातक गंधर्व विवाह करता है, परन्तु अनेक बाधाएं भी आती हैं। अकेला चन्द्र केतु के साथ लग्न में हो तो जातक जीभ आगे निकालकर बोलता है। वृश्चिक राशि का केतु भी जातक को शुभ प्रभाव प्रदान करता है। धन, पुत्र, धर्म आदि का लाभ देता है और जातक को वैभवशाली बनाता है। गुरु की शुभ दृष्टि भी हो तो जातक आध्यात्मिक, धार्मिक व ज्ञानी हो सकता है।

द्वितीय भाव—केतु यदि लग्नकुंडली के दूसरे भाव में हो तो जातक

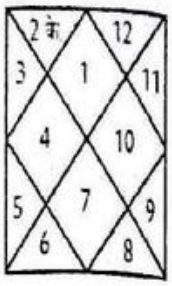

कटुभाषी, मुंहफट, विद्रोही, कुटुम्ब विरोधी, व्यापार में असफलप्राय: विद्याहीन व मलिनवेषी होता है। ऐसे जातक को मुखरोग (मुंह का कैंसर आदि) तीव्रता से सम्भावित होता है तथा गुदारोग (विशेषकर बवासीर) भी तीव्र सम्भावित होता है। मेरे सुयोग्य आचार्य श्री कौशिक के अनुसार ऐसा जातक शत-प्रतिशत बवासीर का शिकार होता है (विशेषकर खूनी बवासीर) तथा अक्सर दाढ़ी रखने वाला होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक हुक्म चलाने वाला भी होता है तथा धन-दौलत से सम्पन्न होता है (मेरे गुरुओं के अनुसार यह धन कौटुम्बिक या पैतृक होता है)। ऐसे जातक को यात्राएं बहुत करनी पड़ती हैं। यदि केतु शुभ हो तो कुंडली में शुक्र कैसा भी और कहीं भी हो, जातक को पत्नीसुख पूर्ण रूप से मिलता है। मेष, मिथुन, कन्या तथा वृश्चिक राशि में केतु को शुभ फल देने वाला माना गया है। किसी स्वग्रही ग्रह के साथ केतु हो तो उस ग्रह का बल बढ़ा देता है।

द्वितीय भाव में केतु के साथ द्वितीयेश भी बैठा हो तो जातक को अतुल धन प्राप्त होता है। मेष, मिथुन, कन्या तथा वृश्चिक को छोड़कर शेष राशियों में अथवा पाप प्रभाव में केतु हो तो धनहानि, विद्याहीनता, अशुभ भाषिता, राजदण्ड का भय तथा मलिन वेष प्रदान करता है। ऐसा जातक लाख कोशिश करे भी तो धन संग्रह नहीं कर पाता और दूसरों के टुकड़ों पर पलता है। जो कुछ उसके पास है उसे दूसरा न हथिया ले, इसी भय से त्रस्त व अशांत रहता है तथा परिजनों से विरोध रखने वाला होता है।

विशेष—मेरे सुयोग्य आचार्य श्री कौशिकजी के अनुसार केतु दूसरे भाव में हो तो जातक स्थायी रूप से दाढ़ी रखने वाला होता है। यदि केतु की दूसरे भाव पर दृष्टि हो तो जातक कभी दाढ़ी रखता है, कभी कटवा लेता है (ऐसा प्राय: 9 या 18 दिनों/सप्ताहों/मासों/वर्षों में करता है)।

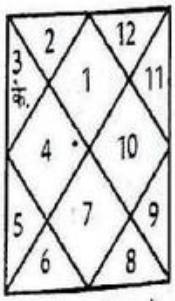

तृतीय भाव—केतु जब लग्नकुंडली के तीसरे भाव में हो तब जातक अस्थिर प्रकृति, झगड़ालू, साहसी, धनी, वायुजन्य व कर्णरोगों से पीड़ित तथा धीर होता है। छोटे भाई-बहनों के लिए तीसरा केतु मारक/घातक होता है। ससुराल का हाल भी अच्छा नहीं रहता किन्तु जातक की संतान प्राय: श्रेष्ठ होती है। केतु शुभ हो तो जातक आस्तिक तथा ईश्वर का अहसान मानने वाला होता है। अशुभ केतु हो तो जातक चापलूस, दूसरों की हां में हां मिलाने वाला तथा दुख भोगने वाला होता है।

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक उत्तम बल-पराक्रम वाला होता है।

उसके छोटे-बड़े भाइयों के हाल अच्छे नहीं रहते, उनके लिए तीसरा केतु अशुभ होता है (जातक की ससुराल के लिए भी)। ऐसा जातक धैर्यवान होते हुए भी चलते-फिरते झगड़ा मोल लेने वाला होता है। मित्रों से भी विवाद रहता है। केतु शुभ प्रभाव में हो तो जातक को शुभ फल देता है। विशेषकर मीन राशि में केतु हो तो जातक ईश्वरपरायण व आध्यात्मिक भी हो सकता है। किन्तु धनु या सिंह राशि का केतु हो तो वात पित्त से दूषित, हृदय रोग, सन्निपात तथा कान के रोगों से पीड़ित होता है। तृतीयस्थ केतु वाले जातक की भुजाओं या कंधों में प्राय: दर्द रह सकता है

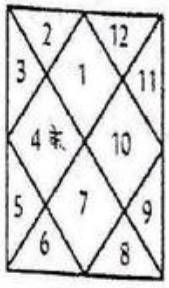

चतुर्थ भाव—केतु जब लग्न कुंडली के चौथे भाव में हो तो वह जातक को बातूनी व आलसी बनाता है। संतान प्राप्ति में प्राय: विलम्ब होता है। माता व मित्रों का सुख उसे नहीं मिलता (यद्यपि पिता के लिए चौथा केतु प्राय: शुभ ही रहता है)। जातक को पैतृक धन प्राय: नहीं मिलता। उसका अपना घर भी या तो नहीं होता, या बदलते रहना पड़ता है, या घर छोड़कर परदेश में रहना पड़ता है। कोई न कोई चिन्ता या अनजाना भय बना रहता है। जातक हीनभाव से ग्रस्त, आलोचना करने वाला, परिवार से मनमुटाव वाला तथा विषबाधा के सम्भावित भय से युक्त होता है। ऐसे जातक की माता का देहांत प्राय: जातक के बचपन में ही हो जाता है। किन्तु जातक गुरु व पिता की शक्तियों को बढ़ाने वाला होता है।

लाल किताब के अनुसार चौथा केतु यदि अशुभ हो तो जातक को मूत्र में शर्करा जाने (यूरिन सुगर) का रोग हो सकता है। माता व संतान पर भी अशुभ प्रभाव पड़ता है (माता का शीघ्र मरण व संतान को कष्ट होता है)। केतु यदि वृश्चिक या सिंह राशि का हो या चतुर्थेश के साथ हो तो माता-पिता दोनों का ही सुख नहीं मिलता। धनु या मीन राशि का केतु हो तो जातक को आकस्मिक रूप से सम्पत्ति का अच्छा लाभ मिलता है किन्तु इसका सुख दीर्घ काल तक नहीं रह पाता। ऐसा देखा गया है।

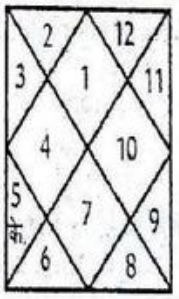

पंचम भाव—केतु यदि लग्न कुंडली में पंचमस्थ हो तो जातक क्रोधी, कुशाग्र बुद्धि, योगी या किसी का भला न करने वाले स्वभाव वाला (SELF-CENTERED) होता है। ऐसे जातक के सन्तान नहीं होती, होती है तो सरलता से नहीं होती। जीविका के लिए भी उसे प्राय: कठोर संघर्ष करना पड़ता है।

लाल किताब के अनुसार पंचमस्थ केतु का संतान आदि से सम्बन्धित फल

लोकमत के विरुद्ध चलने वाला तथा अकर्मकांडी या नास्तिक होता है। यद्यपि विचार ऊंचे होते हैं, परन्तु परम्पराविरोधी होते हैं। जातक प्राचीन रूढ़ियों के समानांतर नए रिवाज बनाकर सुधारवादी बनने का प्रयास करता है लेकिन परिणाम में उसे लोकनिन्दा व कष्ट झेलने पड़ते हैं।

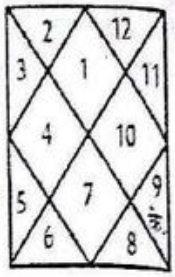

लाल किताब के अनुसार नौवां केतु यदि वृश्चिक राशि में या शुभ हो तो जातक पिता का आज्ञाकारी, SELFMADE तथा शुभ फल पाने वाला होता है। (यदि गुरु भी साथ हो तो आध्यात्मिक व उच्च विचारों का ज्ञानवान होता है।) किन्तु अन्य राशियों में पापी, पिता के सुख से हीन, धन सुख से हीन, जाति व समाज में तिरस्कृत तथा व्यवहार में अकुशल होता है। जातक मामा व मामा के परिवार के लिए अशुभ होता है। ऐसे जातक को घर में कुत्ता पालना शुभ रहता है (चितकबरा कुत्ता हो तो अच्छा है)।

वृश्चिक राशि में नवमस्थ केतु हो या केतु गुरु आदि से दृष्ट व शुभ प्रभाव में हो तो जातक के सब कष्ट दूर हो जाते हैं। म्लेच्छों द्वारा जातक की भाग्यवृद्धि होती है। यद्यपि जातक को भुजाओं में कष्ट रहता है तथा जातक के छोटे भाई भी कष्ट में रहते हैं। किन्तु जातक का भाग्य अच्छा हो जाता है। जीवन की अन्तिम अवस्था में ऐसा जातक धार्मिक होकर तप, दान आदि करता है (यदि गुरु यहां केतु के साथ हो तो गुरु का बल बढ़ जाता है)।

दशम भाव—केतु यदि लग्नकुंडली के दसवें भाव में हो तो जातक कर्मठ और संघर्षशील होता है। पिता का सुख अल्प होता है (या तो पिता की शीघ्र मृत्यु हो जाती है या पिता से दुर्व्यवहार के कारण अनबन हो जाती है)। बाल्यावस्था कष्टपूर्ण, युवावस्था संघर्षपूर्ण होती है किन्तु उत्तरार्ध में सब सुख प्राप्त होते हैं। ऐसा जातक धनवान हो सकता है, परन्तु धन को बुरे कार्यों व पराई स्त्रियों के कारण बर्बाद कर देता है। मेरे सुयोग्य आचार्य कौशिकजी के अनुसार ऐसे जातक के योगी/संन्यासी हो जाने की पूर्ण सम्भावना होती है तथा वह अभागा होता है। अनैतिक कार्य कर सकता है।

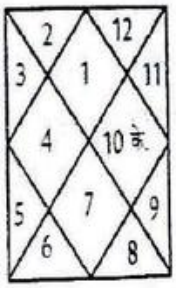

लाल किताब के अनुसार ऐसे जातक को वाहन से गिरकर चोट लगने का पूर्ण भय होता है। मिथुन, सिंह, कुंभ या मकर राशि का केतु हो तो जातक शत्रुओं के लिए काल होता है। मिथुन राशि में जातक बुद्धिमान, शास्त्रज्ञ, विजयी और प्रवासी भी होता है और उसे पद त्याग करना पड़ सकता है। मीन या धनु राशि का केतु जातक को धन, वैभव तथा यश प्रदान करता है पर व्यापार में हानि सम्भावित होती है। चर राशि का केतु प्रवास से अच्छा लाभ भी दिलाता है। जातक तेजस्वी,

प्रसिद्ध व शूरवीर होता है परन्तु पापकर्मी होता है। केतु शुभ प्रभाव में हो तो ऐसा जातक प्रसिद्ध खिलाड़ी भी हो सकता है।

लाल किताब के मत से दशम केतु वाला जातक यदि अपना नुकसान करने वाले भाइयों को क्षमा करता रहे तो जीवनभर उन्नति करता रहता है, कभी कंगाल नहीं होता। जातक को पैरों में चोट, आंख के रोग अथवा अल्सर आदि रोग सम्भावित होते हैं।

विशेष—मिथुन या कन्या लग्न वाले जातकों की कुंडली में यदि दसवां केतु और छठा बुध हो (बुध केतु से दृष्ट हो) या केतु के साथ हो तो जातक को फुलबहरी रोग सम्भव होता है।

एकादश भाव—केतु जब ग्यारहवें भाव में बैठा हो तब जातक को गलत तरीकों से धन कमाने वाला तथा सदा चिंता से ग्रस्त और असंतुष्ट रहने वाला बनाता है। 48 वर्ष की आयु तक माता से जातक के सम्बन्ध खराब रहते हैं, पर पुत्र/संतान के लिए प्रभाव शुभ रहता है। ऐसा जातक दूरदर्शी या आगे की सोच लेने वाला होता है। केतु अशुभ प्रभाव में हो तो जातक डरपोक, मूर्ख, असंतुष्ट व अपना शत्रु खुद होता है। केतु शुभ प्रभाव में हो तो जातक मधुरभाषी, विनोदी, विद्वान, तेजस्वी, दयालु व परोपकारी होता है। किन्तु ऐश्वर्यपूर्ण जीवन गुजारने पर भी असंतुष्ट ही रहता है।

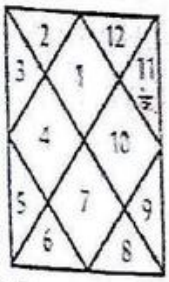

लाल किताब के अनुसार ऐसा जातक सदा चिंता करने वाला और अशांत/अतृप्त रहने वाला होता है। यदि तीसरे भाव में शनि हो तो ऐसे जातक के धन में वृद्धि होती है। मेष, वृष, धनु, मीन राशियों में केतु हो और गुरु या शुक्र से दृष्ट भी हो तभी जातक को ग्यारहवें केतु के शुभ फल प्राप्त होते हैं। अन्यथा नहीं। पत्नी (गृहस्थ), संतान/शिक्षा तथा भाइयों के लिए ग्यारहवां केतु खराब ही रहता है। ऐसे जातक के पेट का ऑपरेशन होना सम्भावित होता है।

द्वादश भाव—लग्नकुंडली के बारहवें भाव में केतु हो तो जातक कमजोर स्वास्थ्य वाला होता है। किन्तु धार्मिक, सद्कार्यों में धन का व्यय करने वाला, तांत्रिक, योगी किन्तु व्यय की अधिकता से ऋणी तथा अधिक प्रवास करने वाला होता है। ऐसा जातक खर्चीला होता है। केतु पाप प्रभाव में/अशुभ हो तो जातक चोर, पागल/सनकी, संघर्षपूर्ण जीवन वाला (उत्थान-पतन चलता रहे) किन्तु बढ़े हुए आत्मबल वाला होता है। शयनसुख बाधित रहता है।

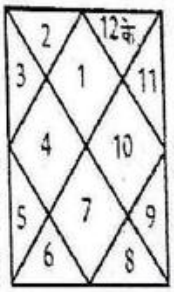

लाल किताब के अनुसार बारहवां केतु हो तो जातक को किसी नि:संतान व्यक्ति से मकान/भूमि नहीं खरीदने चाहिए अन्यथा जातक की संतान पर अशुभ प्रभाव

होता है। ऐसा जातक अगर विलासिताप्रिय हो तो उसकी संतान गृहस्थी व रिश्तेदारों के लिए शुभ होता है। केतु यदि बारहवें भाव में गुरु से शुभ योग करे तो जातक इंद्रियजित् व साधु स्वभाव का होता है। केतु के साथ शुक्र हो तो जातक शक्ति/दुर्गा का उपासक होता है। किन्तु चन्द्रमा से केतु का अशुभ योग हो तो जातक एक नम्बर का व्यभिचारी होता है। बारहवें भाव में केतु अकेला हो तो मोक्ष का कारक भी होता है (यदि केतु शुभ प्रभाव में बली हो तथा कुंडली में अन्य योग बाधक न बनते हों तो बारहवां केतु अकेला होने पर निश्चित ही मोक्ष प्रदान कराता है)।

विशेष—यदि नवम भाव तथा नवमेश सुदृढ़ हों और बलिष्ठ गुरु से दृष्ट हों, पंचम भाव और लग्न की स्थिति भी पंचमेश व लग्नेश के साथ सुदृढ़ हो, तृतीय भाव में संन्यास और वैराग्य की ओर ले जाने वाला शनि विद्यमान हो तथा बारहवें भाव में केतु सबल, एकाकी और शुभ हो तो जातक निश्चित ही मोक्ष को प्राप्त होता है।

स्मरणीय—नवग्रहों के बारह भावों में होने के फल पाराशरी ज्योतिष, लाल किताब, रोग ज्योतिष तथा अपने आचार्यों व गुरुओं द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर यहां कहे हैं। किन्तु सटीक परिणाम पाने के लिए जातक इनको अन्तिम अथवा निर्णायक न समझें। लग्न, भाव, राशि, लग्नेश, भावेश, राशीश (राशिपति), कारक दृष्टि, युति, बल, ग्रहों के पारस्परिक सम्बन्ध, उनके अंश, उनकी वक्री/मार्गी/अस्त होने की स्थिति—इन सबको विचार कर, नवग्रहों के फलों से पूर्व कहे गए फलित सूत्रों, सिद्धांतों व नियमों को विचारकर तथा अभी आगे और कहे जाने वाले सिद्धांतों को भी विचारकर—सबकी समीक्षा व विश्लेषण करके (जातक का दिन/रात का अथवा कृष्ण/शुक्ल पक्ष का जन्म व जन्म नक्षत्र विचार कर) देश, काल व अवस्था को ध्यान में रखते हुए ही फलादेश करना चाहिए। भावों में पड़ने वाली राशियों के अन्तर्गत आने वाले नक्षत्रों, उन नक्षत्रों के स्वामियों, उन स्वामियों का भावों में बैठे ग्रहों से सम्बन्ध तथा भाव के कारक से सम्बन्ध भी विचार लेना चाहिए। तभी शत-प्रतिशत सही परिणाम मिलते हैं।

❑❑❑